अहो ! श्रुतम् ई-परिपत्रम्-2

जैन शास्त्र-साहित्य सम्पादन-संशोधन माहिती विषयक परिपत्र

सं.२०७१ • मेरु तेरस • ई २०१५

* शुभाशिष *

प.पू.प्राचीनश्रुतोद्धारक वैराग्यदेशनादक्ष आचार्यदेव
श्रीमद्विजय हेमचन्द्रसूरीश्वरजी महाराजा

* संपादक *

शा बाबुलाल सरेमलजी बेडावाला

* प्रकाशक *

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार
शाह विमलाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाला भवन
हीरा जैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५
फोन - (ऑ.) 079-2213 2543, (मोबाइल) 94265 85904
Email : ahoshrut.bs@gmail.com * www.ahoshrut.org

श्रुत सेवा कार्य की झलक

*** ज्ञान भंडार ***

स्वद्रव्य से निर्मित ज्ञानभंडार से 15,000 से ज्यादा
प्रत व पुस्तकें पूज्य साधु-साध्वीजी भगवंतों को
अभ्यास के लिए इस्यु हुई है ।

*** अहो ! श्रुतज्ञानम् चातुर्मासिक मासिक ***

जैन शासन में प्रकाशित व संशोधन संपादन हो रहे
ग्रंथों की खबर व श्रुतज्ञान के संबंधित आवश्यक कार्य की
जानकारी के लिए स्वद्रव्य से प्रकाशन

*** अहो ! श्रुतम् ई-परिपत्रम् ***

जैन शास्त्र-साहित्य संशोधन संपादन विषयक माहिती सभर
इस परिपत्र का प्रकाशन नवनिर्मित व अप्रकट कृति सह

*** अहो ! श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार ***

प्रायः अप्राप्य, अलभ्य, पूर्व में मुद्रित 201 ग्रंथों को
पुनः प्रकाशन के द्वारा ज्ञानभंडारों को
ज्ञानद्रव्य की सहायता से भेट करके समृद्ध बनाये ।

*** पूज्य साधु-साध्वीजी स्वाध्याय पीठ ***

जैन दर्शन-न्याय-व्याकरण के उच्च अभ्यास के लिए
पंडितजी के द्वारा साध्वीजीओं को
ज्ञानाभ्यास की सुविधा स्वद्रव्य से उपलब्ध ।

णमोत्थु नं समणस्स भगवओ महावीरस्स

“अहो ! श्रुतम् ई-परिपत्रम्-२”

जैन शास्त्र-साहित्य सम्पादन-संशोधन माहिती विषयक परिपत्र

चत्वारः ग्रन्थसङ्ग्रहः

❍ शुभाशिष ❍

प. पू. प्राचीनश्रुतोद्धारक वैराग्यदेशनादक्ष आचार्यदेव

श्रीमद्विजय हेमचन्द्रसूरीश्वरजी महाराजा

❍ संपादक ❍

शा. बाबुलाल सरेमलजी बेडावाला

❍ प्रकाशक एवं प्राप्तिस्थान ❍

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

शाह विमलाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाला भवन

हीरा जैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अहमदाबाद-380005.

फोन - (ओ.) 079-22132543 (मोबाइल) 94265 85904

E-mail : ahoshrut.bs@gmail.com ● Website : www.ahoshrut.org

सं. २०७१ ● मेरू तेरस ● ई. २०१५

'अहो! श्रुतम् ई-परिपत्रम्-२'

जैन शास्त्र-साहित्य सम्पादन-संशोधन माहितीविषयक परिपत्र

---------- किञ्चिद् वक्तव्यम् ----------

चरम तीर्थपति तीर्थंकर परमात्मा श्री महावीरस्वामी की त्रिपदी को प्राप्त करके गणधर भगवंत द्वादशांगी की रचना करते है । द्वादशांगी के १४ पूर्व प्रमाण समुद्रसमान विशाल ज्ञानसागर में से कलिकाल के प्रभाव में बचा हुआ बिंदु जितना ज्ञान श्री सुधर्मास्वामीजी की उज्ज्वल पाट परंपरा के द्वारा हमें मिला है । जैन धर्म के विभिन्न शास्त्रग्रंथों में उपलब्ध श्रुतज्ञान को संकलित करके ज्ञानपिपासुओं को सरलता से पहुंचाने का कार्य सात सालों से शा. सरेमल जवेरचंद बेड़ावाला परिवार द्वारा स्वद्रव्य निर्मित श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार द्वारा चल रहा है ।

संस्था के द्वारा देश भर में दूर-सुदूर प्रदेशों में रहे हुए जो विद्वान श्रमण-श्रमणी भगवंत नूतन रचना, संशोधन, लेखन व ज्ञान का विशिष्ट कार्य कर रहे है, उन सभी के कार्य का संकलन करके जिज्ञासु जनों तक पहुँचाने का प्रयास सभी के सहयोग से हो रहा है ।

पूज्य गुरु भगवंत अपनी शक्ति व समय का सदुपयोग करके विविध शास्त्रग्रंथो का पांडुलिपिओं पर से संशोधन-संपादन करते है उसका व्यवस्थित रूप में संकलन हो और ज्ञानामृत सर्व सुयोग्य पात्रों तक पहुँच सके इस हेतु से अहोश्रुतम् ई-परिपत्र-१ सं. २०६९ में प्रकाशित हुआ था । इसी चरण में नवीन सजावट व नये रूप रंगमें इसका दुसरा अंक प्रकाशित कर रहे हैं । जिस में अद्यावधि अप्रकाशित चार कृतियाँ सर्व प्रथम बार प्रकाशित हो रही है ।

१) परमज्योतिः पञ्चविंशतिका - कर्त्ता-पू. महोपाध्याय यशोविजयजी म.
वार्त्तिककार - आ. हेमचंद्रसूरिजी शिष्य आ. कल्याणबोधिसूरिजी

२) सज्जनचित्तवल्लभम् - कर्त्ता-पू. उदयप्रभसूरिजी, टीकाकार-पू. सिंहसूरिजी
संशोधन-संपादन - आ. गुणरत्नसूरिजी शिष्य गीतार्थरत्नविजयजी म.

३) आर्द्रकुमार रास - कर्ता - पू. न्यानसागरजी (ज्ञानसागरजी)
संशोधन-संपादन - पू. कलापूर्णसूरिजी समुदायवर्ती
साध्वीजी नम्रनिधिश्रीजी और नम्रगिराश्रीजी म.

४) मृगध्वज केवली रास - कर्ता - पू. पूर्णचन्द्रउपाध्याय शिष्य श्री पद्मकुमार
संशोधन-संपादन - पू. कलापूर्णसूरिजी समुदायवर्ती
साध्वीजी नम्रनिधिश्रीजी और नम्रगिराश्रीजी म.

इन चारों कृतिओंका संशोधन-संपादन करके पूज्य गुरुभगवंतने हमें प्रेषित किया है। इन सभी गुरुभगवंतो की ज्ञानसाधना की हार्दिक अनुमोदना करते है और इन कृतियों के प्रकाशन का सुअवसर हमें प्रदान किया उसके लिये उनके प्रति कृतज्ञता प्रगट करते है। पूज्य साध्वीजी श्री चंदनबालाश्रीजी के लीये भी आभारी है जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर इस मेगेझीन का प्रुफ चेकींग किया है।

सभी समुदायके-गच्छ के गुरूभगवंतों को नम्र विनंति है कि अपनी अप्रगट नूतन रचना, संशोधित-संपादित ग्रंथों की प्रेस कोपी हमें भेजकर उसे जगत के सामने उजागर करने का हमें अवसर प्रदान करे। हमारा संपूर्ण प्रयास रहेगा की आपकी कृति-रचनाओं को उचित न्याय मिले।

मुद्रितग्रंथाः- पूज्य गुरूभगवंतों के द्वारा प्राचीन पांडुलिपि पर से संशोधित-संपादित और गत वर्ष में प्रकाशित शास्त्रग्रंथो की झलक यहाँ दी गई है, जिससे जैन शास्त्रों की बहुमूल्यता व विश्वभर में इसके अमूल्य प्रदान से जैन संघ अवगत हो सकेगा।

अहो ! श्रुतम् ई-परिपत्रम् विश्व की युनिवर्सिटीयाँ, विद्यापीठ, संस्कृत के अध्यापक विद्वज्जनों को ई-मेईल के जरिये भेजा जायेगा। संयमी आत्माओं के आचार को ध्यान में रखकर इसकी मर्यादित नकल मुद्रित करवाकर श्रुतज्ञान के क्षेत्र में कार्यरत गुरुभगवंतो को भेज रहे हैं। ज्यादा नकल की जरूर हो तो मंगवा सकते है और पढ़ने के बाद आपको जरूर न हो तो हमें वापिस भेज सकते है। जिससे दूसरे गुरुभगवंतो को उपयोग में आ सके। श्रुतभक्ति का लाभ देवे।

शा. बाबुलाल सरेमल बेडावाला

।। परमज्योतिःपञ्चविंशतिका ।।

मूलकारा
महोपाध्याय श्री यशोविजयपादाः

वार्त्तिककारा
आचार्य श्री हेमचन्द्रसूरिशिष्या आचार्यकल्याणबोधिसूरयः

प्रस्तावना

Opening Doors Within

अज्ञानी का काम होता है दीवार रचना और ज्ञानी का काम होता है द्वार रचना, वह द्वार जो उसे भीतरी समृद्धि के समीप ले जाये। इस जीवन का लक्ष्य एक ही होना चाहिये, अपनी भीतरी समृद्धि का साक्षात्कार करना, उस के समीप जाना व उसके स्वामी बन जाना। शोचनीय है वह, जिसने इस लक्ष्य को पाया नहीं। अधिक शोचनीय है वह, जिसने यह लक्ष्य बनाया ही नहीं। दुन्यवी दृष्टि से वह चाहे कितना भी सफल क्यों न हो, वास्तव में वह मूर्ख बना है।

न्यायविशारद न्यायाचार्य लघुहरिभद्र कूर्चाली सरस्वती महामहोपाध्याय श्री यशोविजयजीने हम पर महती कृपा कर के हमे इस द्वार का उपहार दिया है, यही है प्रकाश का द्वार... यही है आनंद का द्वार..... यही है मुक्ति का द्वार... केवल २५ श्लोको में ज्ञान का ऐसा सागर.... तत्त्व का ऐसा खज़ाना अन्यत्र मिलना दुर्लभ है, परम सौभाग्य से जब हमें यह मिल ही गया है, तो चलो, हम हमारे सौभाग्य को सार्थक करे।

गुरुपद्मपादरेणु
आचार्य हेमचन्द्रसूरि

।। परमज्योतिःपञ्चविंशतिका ।।

मूलकारा
महोपाध्याय श्री यशोविजयपादाः

वार्त्तिककारा
आचार्य श्री हेमचन्द्रसूरिशिष्या आचार्यकल्याणबोधिसूरयः

इह हि परमकारुणिका कृतिकाराः परमज्योतिःप्रादुर्भावमन्तरेण विश्वविश्वव्याप्तसन्तमससम्भेदासम्भवं सम्प्रेक्ष्य तत्प्रादुर्भावानुगुणप्रगुणोपदेशमारभमाणा आदौ परममङ्गलविधित्सया तदेव ज्योतिः स्तुतिगोचरीकुर्वते-

ऐन्द्रं तत् परमं ज्योति-रूपाधिरहितं स्तुमः ।
उदिते स्युर्यदंशेऽपि सन्निधौ निधयो नव ।। १ ।।

ऐमिति श्रीसारस्वतमन्त्रबीजपदम्, प्रस्तुतकृतिकारकृतिलक्ष्म च । किञ्चेदं कृतज्ञताचिह्नमपि, गङ्गातटे कृतिकारकृतश्रीसरस्वतीदेवीसमाराधनेन सप्रसादया देव्या वितरितेन वरेण सम्प्राप्तपरमानुग्रहैः कृतिकारैर्नैकशतशास्त्रनिर्माणसामर्थ्यमधिगतमिति । **अविस्मरणीयः खलु लघुरप्युपकारः,** किम्पुनरीदृश इति भावनीयम् ।।

उपाधिरहितं हि भवति परमज्योतिः, तत्साचिव्ये ज्योतिर्मात्रे पर्यवसानात्, सूर्यादिषु तथेक्षणात् । **न च** निरभ्रे सूर्यादौ तद्भावोऽनपाय **इति वाच्यम्**, तत्रापि ग्रहणादिगोचरे पारम्यविरहसद्भावात् । एवं भूमिगृहाप्रकाशनाद्यपि बोध्यम् । **सापायः ससीम चैव भवति बाह्यप्रकाशः, तदितरश्च तदितरः, निरुपाधित्वादित्यत्र निष्कर्षः ।**

तदस्य ज्योतिषोंऽशेऽप्युदितेऽन्तः स्पष्टतरं संवेद्यते परमानन्दः, सोऽयं तत्त्वतो नवनिध्यतिशायी विभवः, परमार्थनिधिभूतत्वात्, निधीयतेऽनेनाऽऽत्मा सुखोदधौ-इतिव्युत्पत्तिव्यालिङ्गितत्वात् । तथा च परमार्थत उपमामात्रं नवनिधिसान्निध्याभिधानमिति निपुणं निभालनीयम् ।

साम्प्रतं ज्योतिःपरमज्योतिषोर्विवेकमेव व्यक्ततरं व्याख्यान्ति-

प्रभा चन्द्रार्कभादीनां, मितक्षेत्रप्रकाशिका ।।
आत्मनस्तु परं ज्योति-र्लोकालोकप्रकाशकम् ।। २ ।।

न हि मेर्वन्तरितः सूर्यादिरत्रत्यं प्रकाशयति क्षेत्रम्, नाप्यत्र स्थित एष मेर्वन्तरितं क्षेत्रम्, तदविषयत्वात् । सैषा ज्योतिःकथा, परमज्योतिषस्तु तामाह-**आत्मन** इत्यादि ।

मा भूत्तदितरस्मिन् परमज्योतिराश्रयत्वभ्रान्तिरित्ययं स्पष्टो निर्देशः । अयमात्मैव शुद्धकाष्ठां प्रापितो विश्वमपि विश्वं प्रकाशयति अस्यैव परमदीपाद्युपमोपमेयत्वेन परमज्योतिर्भूतत्वादिति हृदयम्, अत एवाहुः परमात्मस्तवे-

निर्धूमवर्त्तिरपवर्जिततैलपुरः,
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोसि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां
दीपो परस्त्वमसि नाथ ! जगत्प्रकाशः ।।

-इति **(भक्तामरस्तोत्रे)**

अत्र लोक इति जीवादिद्रव्याऽऽधारभूतोऽवकाशः, अलोकस्तु तद्व्यतिरिक्तः, निःसीमक्षेत्रश्च सः, गगनस्यानन्तत्वात् । लोकालोकप्रकाशकत्वं चात्मनो ज्ञस्वभावत्वात्, **प्रतिबन्धकाभावे तत्स्वभावाऽऽविर्भावस्य नैसर्गिकत्वात् ।** उक्तश्च-ज्ञो ज्ञेये कथमज्ञः स्यादसति प्रतिबन्धके ? । दाह्येऽग्निर्दाहको न स्यादसति प्रतिबन्धके ? – इति । अतोऽभ्युपेयमस्य तत्प्रकाशकत्वमिति ।

ननु किंस्वरूपं भवतीदं परमज्योतिरिति चेत् ? अत्राऽऽहुः

निरालम्बं निराकारं, निर्विकल्पं निरामयम् ।
आत्मनः परमं ज्योति-र्निरुपाधि निरञ्जनम् ।। ३ ।।

परमं ज्योतिरिदं **निरालम्बम्**, दीपादिवत् स्नेहाद्यालम्बनशून्यत्वात् । किञ्चेदं **निराकारम्,** घटादिवद् दृश्यबाह्याकारविरहितत्वात् । अपि चेदं **निर्विकल्पम्,** स्तिमितोदधिसङ्काशतया विकल्पवीचिरहितत्वात्, तद्भावोऽपि परपरिणामाभावात्, आहुश्चान्यत्र पञ्चविंशतिकाकारा एव-जलहिंमि असंखोभे पवणाभावे जह जलतरंगा । परपरिणामाभावे णेव वियप्पा तया हुंति-इति **(धर्मपरीक्षायाम्)** ।

किञ्चान्यत्, **निरामय**मपीदम्, कर्मादिकृतविपाकागोचरत्वात्, **न हि तद्विपाकगोचरत्वेतर आत्मन आमय इति भावनीयम् ।**

तथैतन् **निरुपाधि,** सन्तमसस्थानीयभ्रान्तिभेदे तदुत्थितोपाधिभेदस्याप्यावश्यकत्वात्, तद्भेदे चाविर्भवेदेव निरुपाधिस्वस्वभावः, आवृत्यपगमे आवृताविर्भावस्य स्वाभाविकत्वात्, अत एवोपनिषत्-उपाधिनाशाद् ब्रह्मैव-इति **(आत्मोपनिषदि)** । अत एवेदं **निरञ्जनम्,** उपाधिमूलतया रागस्य तदभावेऽनुत्थानात्, मूलं नास्ति

कुतःशाखेतिन्यायात् । **यतनीयमेवंविधस्य परमज्योतिष आत्मन्याविर्भावे, तद्रूपत्वात्तत्त्वतो मोक्षस्येत्यत्र तात्पर्यम् ।**

ननु च दीपादिरूपमेव ज्योतिर्नः प्रसिद्धम्, लोकस्य च, न तु भवद्भिर्महता प्रबन्धेन व्यावर्ण्यमानं परमज्योतिः, स्वप्नेऽप्यनीक्षितत्वात्, तत् किमत्र तत्त्व**मिति चेत्** ? अत्रोत्तरयन्ति-

दीपादि पुद्गलापेक्षं, समलं ज्योतिरक्षजम् ।
निर्मलं केवलं ज्योति-र्निरपेक्षमतीन्द्रियम् ।। ४ ।।

पुद्गलाः प्रकृते तैलवर्त्त्यादिरूपाः, तदपेक्षं हि दीपादिरूपं ज्योतिर्भवति, तत्क्षये तत्क्षयस्यान्यथाऽनुपपत्तेः । किञ्चान्धप्रदीपन्यायात् केचिच् चक्षुषो ज्योतिर्भावं व्याचक्षते, किन्तु तदपि समलम्, तिमिरादिरोगमलसम्भवेन तन्मालिन्यदर्शनात् । उपलक्षणमिदम्, तेन दीपादिज्योतिषः पवनादिगोचरत्वमत्यन्तपरिमितक्षेत्रप्रकाशकत्वं चापि बोध्यम्, एवं चक्षुषः समीपवर्त्तिनो निरावृतस्य वस्तुनोऽर्वाग्भागमात्र-प्रकाशकत्वमपि विलोक्यम् । इत्थञ्च स्वल्पतरमत्र ज्योतिष्ट्वम्, अधिकतरं त्वन्धकारत्वमिति सूक्ष्ममीक्षणीयम् । तथा च सति लोकप्रसिद्धमेव तत्तज् ज्योतिः, न तु तत्त्वज्ञप्रसिद्धमिति सिद्धम् ।

यत्तु प्रागुक्तनीत्या बाह्यवस्तुनिरपेक्षम्, आत्मस्वभावभूतत्वेनातीन्द्रियम्, सर्वविजातीयकलङ्कनिर्मुक्ततया केवलम्, अत एव निर्मलञ्च, तदेव परमार्थज्योतिः, तथाविधस्य ज्योतिरन्वर्थोपेतत्वात् ।

श्रेयानत एतदर्थः पुरुषार्थः, इतराभियोगस्य तमोमात्रपर्यवसानादित्यत्राऽऽशयः ।

अथ निरुपयोग्येवेदं परमज्योतिर्निरूपणम्, कर्मादिभावे तदनुभावोद्भावाभावात्, तथा चास्य खपुष्पप्रायत्वादिति चेत् ? न, तद्भावेऽपि तदनुभावस्यानुभूयमानत्वात्, यतः-

कर्मनोकर्मभावेषु, जागरुकेष्वपि प्रभुः ।
तमसाऽनावृतः साक्षी, स्फुरति ज्योतिषा स्वयम् ।। ५ ।।

प्रभुरित्ययमात्मैव, अचिन्त्यप्रभुतोपेतत्वात् । स चात्मगुणाऽऽवारकस्य कर्मलक्षणद्रव्यस्य शरीररूपस्य च नोकर्मवस्तुनः सत्त्वेऽपि स्वयं तमसाऽनावृतः साक्षिमात्रो ज्योतिषा स्फुरति ।

न हि पटादिनाऽऽवृतो घटो घटरूपतां जहाति, कटादिरूपतां च प्रतिपद्यते, **स्वरूपबाधन आवरणस्यात्यन्तमसमर्थत्वात् ।** यथा च पटाद्यावृतोऽपि घटो धारयति जलम्, एवं कर्माद्याऽऽवृतस्याप्यात्मनो ज्योतिषा स्फुरणं बोध्यम् । अवदाम चान्यत्र-

एकमेव यथा रत्न-मावृतं वाऽप्यनावृतम् ।
एक एव तथाऽऽत्माऽपि, ह्यावृतो वाऽप्यनावृतः ।।
-इति **(आत्मोपनिषत्-श्लोकवार्त्तिके)**

सोऽयं सकलजीवात्मगोचरपरमात्मदर्शनसञ्चरः, यमवाप्येहैव परमसाम्यावलम्बनेन जीवन्मुक्तिसौख्यमनुभवन्ति तत्त्वविदः । न ह्यज्ञातपरमज्योतिःस्वरूपाणां सुलभो भवत्ययं सञ्चर इति यतितव्यं तद्विज्ञाने, परमानन्दप्राप्त्युपायान्तरविरहादिति भावः ।

परमज्योतिषोऽनुभावान्तरमप्याहुः-

परमज्योतिषः स्पर्शा-दपरं ज्योतिरेधते ।
यथा सूर्यकरस्पर्शात्, सूर्यकान्तस्थितोऽनलः ।। ६ ।।

भवति हि प्रादुर्भूतपरमज्योतिषां योगिनां साचिव्यादितरेषामपि योग्यानां तत्प्रादुर्भाव इति न किमप्यत्र चित्रम् । अभिहितञ्चैतदेव तत्त्वमुपनिषत्सु प्रकारान्तरेण-

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं, पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय, पूर्णमेवावशिष्यते ।।
इति **(प्रभूतेषूपनिषत्सु)**

सोऽयं भगवदनुग्रहादिपदप्रतिपाद्यः परमज्योतिःस्पर्शः यमवाप्य कृतार्थतां व्रजति विनेयसत्त्वविसरः, **नातोऽपि परमः पारम्यप्राप्त्युपायः कृत्स्नेऽपि जगति, तत्त्वतस्तद्धी[१]नस्याप्यभावादिति निपुणं निभालनीयम् ।**

अथ परमज्योतिष एव माहात्म्यं दृढयन्ति-

पश्यन्न परमं ज्योति-र्विवेकाद्रेः पतत्यधः ।
परमं ज्योतिरन्विच्छ-न्नाविवेके निमज्जति ।। ७ ।।

विवेकाचलाधिरोहणस्य तदाश्रयकावस्थितेश्च परमज्योतिसम्प्रेक्षणैकयोनित्वात् । तदीक्षणैकजीवनो हि विवेकः, तदुपरमे तदुपरतेरध्यक्षसिद्धत्वादित्याकूतम् । **ननु च** मा भूद् विवेकः, को दोष **इति चेत् ?** को नेत्युच्यताम्, सर्वेषामपि दोषाणां

विवेकविगलनैकोत्थानत्वात् । अतो यतनीयं परमज्योतिषि विवेकार्थिभिः, एवमेव परमार्थतदर्थित्वसिद्धेरिति ।

अथ पारम्यमेवास्य ज्योतिषः प्रमाणयन्ति-

तस्मै विश्वप्रकाशाय, परमज्योतिषे नमः ।
केवलं नैव तमसः, प्रकाशादपि यत् परम् ।। ८ ।।

अभिमतप्रकाशानामपि तत्तुलनायां तमःप्रायत्वादिति हृदयम् । भावनीयमत्रादित्यदृष्टान्तम्, यथोक्तम्-उदिते हि सहस्रांशौ न तेजांसि तमांसि च-इति **(त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरिते)** ।

न च प्रकाशात्परत्वे ज्योतिर्भाव एव विरुध्येतेति वाच्यम्, प्रकाशनसामर्थ्यातिशय एव तात्पर्यभावात्, यथाहुः स्तुतिकाराः-कुलिशेन सहस्रलोचनः, सविता चांशुसहस्रलोचनः। न विदारयितुं यदीश्वरो, जगतस्तद् भवता हृतं तमः-इति **(सिद्धसेनीद्वात्रिंशिकायाम्)** ।

भावनीयमत्र गीतोद्गीतं तन्माहात्म्यम्-ज्योतिषामपि यज्ज्योतिः-इति **(भगवद्गीतायाम्)**। तस्मात्

ज्ञानदर्शनसम्यक्त्व–चारित्रसुखवीर्यभूः ।
परमात्मप्रकाशो मे, सर्वोत्तमकलामयः ।। ९ ।।

ज्ञानादिसद्गुणा एव परमज्योतिर्भूमिका, तदतिरिक्ततदाधाराभावात्, श्रेष्ठकलास्वरूपं चैतत् परमज्योतिः, सङ्गीतादिसर्वकलाऽतिशायित्वात् । **ऐहिकतुच्छफलदा हि तास्ताः कलाः, इहामुत्र च परमानन्दामन्दफलदं तु परमज्योतिः** । सोऽयं ज्ञानाद्युपार्जनानुगुणानुष्ठानव्यङ्ग्यो धर्मलक्षण आत्मपरिणाम, यत्तुलनायां तृणप्रायो विश्वविश्वकलाप्रकरः, अत एवाभिहितम्-सव्वा कला धम्मकला जिणाइ-इति **(गौतमकुलके)** ।

एवञ्च सर्वोत्तमकलामयेन परमात्मप्रकाशेन कृतार्थतामितरुस्य किं मेऽवशिष्टकलाभिः प्रयोजनमिति भावः ।

इतोऽपि परमज्योतिषः सर्वोत्तमकलारूपत्वसिद्धिरित्याहुः-

यां विना निष्फलाः सर्वाः कला गुणबलाधिकाः ।
आत्मधामकलामेकां, तां वयं समुपास्महे ।। १० ।।

धाम-तेजः, आत्मतेजोरूपां परमज्योतिःकलामन्तरेण सङ्गीतादिसर्वकला विफला, आत्मप्रयोजनं प्रतीत्यानुपयोगित्वात् । **एतेन** कथं नाम लोके गुणबलाधिकतयाऽभिमता अपि तास्ता कला विफलाः स्युः ? तत्तद्यशोविभवादितत्फलानामध्यक्षमीक्ष्यमाणत्वा-**दिति प्रतिविहितम्,** ऐहिकाभिमानिकमात्रफलत्वेन तासां कलानामात्मकल्याणा-ऽऽपादनमाश्रित्यात्यन्तमफलत्वात् । अतो नैतत्कलोपेक्षयेतरकलासमुपासनं न्याय्यं न्यायविदामित्याशयः ।

सर्वातिशयकलाभावमेव परमज्योतिष स्वानुभवेन समर्थयन्ति-

निधिभिर्निवभी रत्नै-श्चतुर्दशभिरप्यहो ! ।
न तेजश्चक्रिणां यत् स्यात्, तदात्माधीनमेव नः ।। ११ ।।

भवति ह्यात्मसन्तृप्ततया निःस्पृहत्वैश्वर्यसम्पन्नानां महात्मनां परमानन्दपरिकरितं तत्तेजः, यत् सुदुर्लभं चक्रिणामपि, अनूदितं च-भूशय्या भैक्षमशनं, जीर्णवासो वनं गृहम्। तथापि निःस्पृहस्याहो, चक्रिणोऽप्यधिकं सुखम्-इति **(ज्ञानसारे)** ।

इतरं खलु तदिन्द्रियविषयावास्यवाप्यं सौख्यम्, इतरं तु परमज्योतिःप्रभवम्, पराधीनं ह्यनयोराद्यम्, स्वाधीनं तु द्वितीयम्, शाश्वतं निर्भयं श्रेष्ठं च तत्, अतोऽत्रैव यत्नः श्रेयानिति भावः ।

आस्तां चक्रिचक्रम्, वासवविसरादप्यधिकं तेजः प्राप्तपरमज्योतिषां महात्मनामित्याहुः-

दम्भपर्वतदम्भोलि-ज्ञानध्यानधनाः सदा ।
मुनयो वासवेभ्योऽपि, विशिष्टं धाम बिभ्रति ।। १२ ।।

किलेन्द्रसत्कं वज्रं कुलाचलानपि भेत्तीति श्रुतिः, किन्तु दम्भाद्यान्तरपर्वतविभेदे तदप्यप्रत्यलम्, तदविषयत्वात्तेषाम् । तस्माद् ज्ञानादिसद्गुणलक्षणदम्भोलिशालिनो मुनय एव तद्विभेदे प्रत्यलाः, शक्राधिकतेजःसम्पन्नाश्चेति प्रत्येतव्यम्, साक्षी चात्र सिद्धान्तः-णाणाइलाभओ च्चिय दोसा हायंति-इति **(पञ्चवस्तुके)** । किञ्चान्यत्,

श्रामण्ये वर्षपर्यायात्, प्राप्ते परमशुक्लताम् ।
सर्वार्थसिद्धदेवेभ्यो-ऽप्यधिकं ज्योतिरुल्लसेत् ।। १३ ।।

सर्वोत्कृष्टो हि सुरलोकः सर्वार्थसिद्धः, यथा यथा श्रामण्याभ्यासो भवेत्, तथा तथा क्रमेण श्रमणस्य तेजः सर्वेषामपि देवानां तेजोऽतिक्रमेत् । एवञ्च वत्सरमात्रपर्यायस्य मुनेः सर्वार्थसिद्धसुरज्योतिरतिक्रमोऽवगन्तव्यः । प्रमाणं चात्र पारमर्षम्-

बारसमासपरियाए अणुत्तरोववातियाणं देवाणं तेउलेसं वीतीवयति-इति **(व्याख्याप्रज्ञप्तिसूत्रे)**।

अखण्डचारित्रादिगुणकलितो हि जीवः शुक्ल इत्युच्यते । शुक्लेषु च यः प्रकृष्टः, स परमशुक्लः । अन्यथा वा शुक्लादिपरिभाषा-शुक्लः कर्मणा, परमशुक्लस्त्वाशयेनेति । दृश्यते चायं क्रमोऽन्यत्रापि सिद्धतामाश्रित्य, यथा-ब्रह्मचारी मिताहारी, योगी योगपरायणः । अब्दादूर्ध्वं भवेत् सिद्धो, नात्र कार्या विचारणा-इति **(ध्यानबिन्दूपनिषदि)। तदिदं जीवनसाफल्यम्, अतो न युक्त इह विदुषः प्रमाद इत्यत्राशयः।**

ततोऽपि परमज्योतिषो यत्र पर्यवसानं भवति, तत् प्रतिपादयन्ति-

विस्तारिपरमज्योतिर्द्योतिताभ्यन्तराशयाः।
जीवन्मुक्ता महात्मानो, जायन्ते विगतस्पृहाः ।। १४ ।।

न हि तथाविधपरमज्योतिःप्रकाशितान्तःकरणतया सन्नष्टाविद्यान्धकारत्वेन जीवन्मुक्त्यनुभूत्यनुभूयमानाऽऽनन्दाद्वैतानां महात्मनां कुत्राऽप्यन्यत्र स्पृहा सङ्गतिमङ्गतीति तदभावे तेषां निःस्पृहत्वमेवावशिष्यते । सेयमात्मपरितृप्त्यादिपद-प्रतिपाद्या परमनिःस्पृहपदवी यामवाप्य राजादयोऽपि तृणतुल्याः प्रेक्ष्यन्ते तपोधनैः । तथा चावोचाम-को राजा ? को महाराजा ?, कः सुरः कः सुरेश्वरः ? । आत्मैकपरितृप्तस्य, यदेह गलिता स्पृहा-इति **(निःस्पृहोपनिषदि)**।

न च जीवन्मुक्त्यभिधान आर्हतानामपसिद्धान्तप्रसक्ति**रिति वाच्यम्,** तथातत्सिद्धान्तसद्भावात्, मदादिनिर्जयानुभावात् तदुद्भवाभ्युपगमात्, तदुक्तम्-निर्जितमदमदनानां, वाक्कायमनोविकाररहितानाम् । विनिवृत्तपराशाना-मिहैव मोक्षः सुविहितानाम्-इति **(प्रशमरतौ)**। एवमधिगतजीवन्मुक्तीनां तेषां या दशा भवति, तामाहुः-

जाग्रत्यान्मनि ते नित्यं, बहिर्भावेषु शेरते।
उदासते परद्रव्ये, लीयन्ते स्वगुणामृते ।। १५ ।।

न ह्यन्तरनुभूयमानपरमसौख्यसागराणां क्षणमप्यत उन्मज्जनं घटाकोटिमाटीकते, अतस्तेषामुक्तदशोपपद्यत एव, मन्दानामपि सुखोपेक्षया दुःखोरीकारादर्शनादित्यालोचनीयम्, उक्तञ्च-अन्तर्निमग्नः समतासुखाब्धौ, बाह्ये सुखे नो रतिमेति योगी । अटत्यटव्यां क इहार्थ-लुब्धो, गृहे समुत्सर्पति कल्पवृक्षे-इति **(अध्यात्मोपनिषदि)**।

प्रकारान्तरेण परमज्योतिःपरिणामं प्राहुः-

यथैवाभ्युदितः सूर्यः, पिदधाति महान्तरम् ।
चारित्रपरमज्योति-र्द्योतितात्मा तथा मुनिः ।। १६ ।।

सम्पूर्णतयोदयं प्राप्त आदित्यः स्वप्रकाशेन द्यावापृथिवीविवरं सम्पूरयतीति प्रतीतम् । यथा च तत् सुमहदन्तरम्, तथेदमपि, यच् चारित्रलक्षणपरमज्योतिःप्रकाशितनिजान्तरात्मा महात्मा पिदधाति, तच्चान्तरमात्मपरमात्ममध्यगतमवगन्तव्यम्, समापयति हि तदन्तरं चारित्री, दोषचयरिक्तीकरणस्यैव चारित्रपदार्थत्वात्, तद्विरेके च स्वतः परमात्मभावप्रादुर्भावयोगात्, तथा च कुतस्ततोऽन्तरम् ? **न हि व्यतिरिक्तभावाभावे भवत्यन्तरम्, व्यतिरेकस्यैव तद्बीजत्वादित्यालोचनीयं पटुप्रतिभया ।**

ननु सुष्ठूदितं परमज्योतिर्माहात्म्यम्, साम्प्रतं तु कथं तदाविर्भावस्स्यादित्येव तावदुच्यता**मिति चेत् ?**

अत्रोच्यते-

प्रच्छन्नं परमं ज्योति-रात्मनोऽज्ञानभस्मना ।
क्षणादाविर्भवत्युग्र-ध्यानवातप्रचारतः ।। १७ ।।

प्रबलतरो हि सद्ध्यानात्मकः समीरणोऽपसारयति सकलमप्यज्ञानभस्मात्मकं परमज्योतिरावरणम्, अपसृते च तस्मिन् नियोगतः प्रादुर्भवति तत्, **परमार्थतस्तदपसरणतदाविर्भावयोरनर्थान्तरत्वात् ।**

ध्यानयोगो हि जिनशासनस्य सारस्वरूपः, कर्मक्षयप्रबलनिबन्धनत्वादनन्तरमुक्तिहेतुत्वाच्च, अतो हि निबिडस्याप्यज्ञानस्य विलयः, दुर्वाररागादिदोषनिकुरम्बनिकारः, कैवल्याधिगमः, जीवन्मुक्त्यनुभूत्यवाप्त्या परममुक्तिपरिणतिश्चेति यतितव्यमत्र प्रयत्नतः ।

यथा च विशुद्धध्यानपरिणतिरधिगम्या स्यात्, तत्प्रकारमपि प्रत्याहुः-

परेषां गुणदोषेषु, दृष्टिस्ते विषदायिनी ।
स्वगुणानुभवालोक-दृष्टिः पीयूषवर्षिणी ।। १९ ।।

ननु गुणगोचरा तु दृष्टिरमृतप्रदत्वेनैव प्रसिद्धा, तत् कथं सा विषप्रदा भवितुमर्ह**तीति चेत्**? परगोचरत्वेनेति गृहाण । **न च** गतमेवं गुणानुरागमाहात्म्ये**नेति वाच्यम्,** विशेषविषयत्वात्, परमज्योतरुपायभूतध्यानलक्षणसाध्यमाश्रित्य तस्या अनुपायतया

प्रकृतप्रयोजनविघ्नभूतत्वेन च तथाविधत्वानपायात्, उक्तश्चान्यत्र-यस्य ज्ञानसुधाम्भोधौ परब्रह्मणि मग्नता । विषयान्तरसञ्चार-स्तस्य हालाहलोपमः-इति **(ज्ञानसारे)** ।

अधस्तनदशायां तु परगुणदृष्टिरुपादेयैवेति न तत्र विगानम् । **न चो**पादेयैवैषा कथं हेया भव**तीति वाच्यम्,** स्याद्वादात्तत्त्वसिद्धेः, भावनीयमत्र सोपानज्ञातम्, अधिरोहण उपायभूतमेव सोपानं तदधस्तनसोपानापेक्षयोपादेयं भवति, तदुच्चतरसोपानापेक्षया तु हेयम्, न हि तदेकप्रतिबद्धैः कल्पान्तेऽप्युच्चतरसोपानं सम्प्राप्येतेत्यालोचनीयम् ।

नैतत् स्वमनीषिकयैवोच्यते, उपनिबन्धनमप्यस्यार्षम्-यावत् परगुणदोषकीर्त्तने, व्यापृतं मनो भवति । तावद् वरं विशुद्धे, ध्याने व्यग्रं मनः कर्त्तुम्-इति **(प्रशमरतौ)** ।

परप्रवृत्तिरेव विशुद्धध्यानप्रतिबन्धकतामुपयाति, अतो निरुपमाद्भूतनिजगुणसुधादृष्टिरेवाऽऽसेवनीया विशुद्धध्यानार्थिभिरित्यत्र निष्कर्षः ।

प्रोक्तमेवार्थं प्रकटतरं प्रतिपादयन्ति-

स्वरूपदर्शनं श्लाघ्यं, पररूपेक्षणं वृथा ।
एतावदेव विज्ञानं, परज्योतिःप्रकाशकम् ।। २० ।।

न हि स्वहट्टनिभालनं विमुच्य परहट्टतप्तिं प्रकुर्वाणो वणिक् श्लाघ्यतां लभते, अन्यतरहट्टफलं वा, एवं प्रकृतेऽपि पर्यालोच्यम् । यदा तूक्तविज्ञानाद्योगी स्वरूपमात्रविश्रान्तविलोचनो भवति, तदा परमज्योतिःश्रीर्गुणक्रीतेव स्वयमेव तस्य स्वयंवरा भवति । **न ह्युपाय उपेयव्यभिचारी, तद्भावाभावप्रसक्तेरित्यालोचनीयम् ।** उपायत्वमेवोक्तस्योपदर्शयन्ति-

स्तोकमप्यात्मनो ज्योतिः, पश्यतो दीपवद् हितम् ।
अन्धस्य दीपशतवत्, परज्योतिर्न बह्वपि ।। २१ ।।

स एषः-स्तोकमप्यमृतं श्रेयो, भारोऽपि न विषस्य तु-इतिन्यायाऽऽपातः । **आदृतव्यमतोऽमृतम्, विषादरस्य मृत्यादरानतिरिक्तत्वादित्यत्र तात्पर्यम् ।**

प्रकारान्तरमेवामृताऽऽदरस्य प्रख्यापयन्ति-

समतामृतमग्नानां, समाधिधूतपाप्मनाम् ।
रत्नत्रयमयं शुद्धं, परं ज्योतिः प्रकाशते ।। २२ ।।

समता-समलेट्ठुकंचणे-इत्यादिपारमर्षप्रतिपादित आनन्दाद्वयप्रयोजक आत्मपरिणामः. स एवामृतमिवामृतम्, अजरामरभावावन्ध्यनिबन्धनत्वात्, अन्वाहुः-एकां विवेकाङ्कु-

रितां श्रिता यां, निर्वाणमापुर्भरतादिभूपाः । सैवर्जुमार्गः समता मुनीना-मन्यस्तु तस्या निखिलः प्रपञ्चः-इति **(अध्यात्मोपनिषदि)** । समतामृते मग्नाः-**समतामृतमग्नाः**, तेषाम्, **समाधिः-**परममात्रामात्रप्रतिभासपर्यवसिताऽऽत्मपरिणतिः तया धूतपाप्मानः-**समाधिधूतपाप्मानः**, तेषाम्, **रत्नत्रयमयम्-**सज्ज्ञानदर्शनचारित्रस्वरूपम्, **शुद्धम्-**विजातीयलेशेनाप्यकलङ्कितत्तयोज्ज्वलम्, **परम्-**स्वत उत्कृष्टम्, **ज्योतिः-**सूर्यकोट्यति-शयिप्रकाशाद्वैतात्मक आत्मपरिणामः, **प्रकाशते-**सन्ततमपि स्वस्वभावमनुवर्तते, **न हि प्रकाशनमृते ज्योतिःस्वभाव आत्मलाभमेव लभत इति भावनीयम् ।**

ननु च मुक्तिदशायामेव परमज्योतिः प्रसिद्धम्, सा च दशा कृतकृत्यानां भवतीति कथं सा रत्नत्रयमयी भवितुमर्हति **चेत्** ? भावतस्तस्यास्तदात्मकत्वादिति गृहाण । यद्धि कृत्स्नकर्मक्षयलक्षणो मोक्ष इत्युच्यते तद् द्रव्यमोक्षमाश्रित्य, भावमोक्षस्तु सः, यो द्रव्यमोक्षहेतुः, स च तत्त्वतो रत्नत्रयरूप एव, तस्य रागादिप्रतिपक्षभूततया तत्फलप्रतिपक्षसवितृत्वोपपत्तेः, तथोदाहुः-द्रव्यमोक्षः क्षयः कर्मद्रव्याणां नात्मलक्षणम् । भावमोक्षस्तु तद्धेतु-रात्मा रत्नत्रयान्वयी ।। ज्ञानदर्शनचारित्रैरात्मैक्यं भजते यदा कर्माणि कुपितानीव, भवन्त्याशु तथा पृथक् ।। अतो रत्नत्रयं मोक्षः-इति **(अध्यात्मसारे)**, तथा-भवकारणरागादि-प्रतिपक्षमिदं खलु । तद्विपक्षस्य मोक्षस्य कारणं घटतेतराम्-इति **(अध्यात्मसारे)**

अतः समतासमाधिसाचिव्येन रत्नत्रये यतितव्यम्, तस्यैव परमज्योतिःस्वरूपत्वादिति दिक् ।

परमज्योतिष्येवोपादेयबुद्ध्यतिशयमुत्पादयन्तः प्राहुः-

तीर्थङ्करा गणधरा, लब्धिसिद्धाश्च साधवः ।
सञ्जातास्त्रिजगद्वन्द्याः, परञ्ज्योतिःप्रकाशतः ।। २३ ।।

न ह्येतदभावे त्रैलोक्यनमस्करणीयतालक्षणपरमगुणप्रादुर्भावसम्भवः, सदुपाये व्यतिरेकव्यभिचारविरहादित्याकूतम् । यथा च तीर्थङ्करादिभिरवाप्तं तन् महः, यथा चापरेणाप्यवाप्तुं शक्यते, तत्प्रकारं प्रतिपादयन्ति-

न रागं नापि च द्वेषं, विषमेषु यदा व्रजेत् ।
औदासीन्यनिमग्नात्मा, तदाऽऽप्नोति परं महः ।। २४ ।।

सेयं प्रज्ञाप्रतिष्ठादिपदप्रतिपाद्या परमानन्दपदवी, यामवाप्य सर्वदुःखेभ्यो मुच्यन्ते महात्मानः, अभिहितश्च-विषमेऽपि समेक्षी यः, स ज्ञानी स च पण्डितः, जीवन्मुक्तः

परब्रह्म, ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितः-इति**(अध्यात्मसारे)**, तथा-यः सर्वत्राऽनभिस्नेहस्तत्तत् प्राप्य शुभाशुभम् । नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता-इति **(भगवद्गीतायाम्)** ।

उपसंहरति-

विज्ञाय परमज्योति-र्माहात्म्यमिदमद्भुतम् ।
यः स्थैर्यं याति लभते, स यशोविजयश्रियम् ।। २५ ।।

न ह्युपायस्थैर्यविरह उपेयोपगमः सम्भवीति यतितव्यमत्रेत्यत्रोपदेशसर्वस्वम् । यशोविजय इत्यत्र ज्योतिःकृन्नामापि । मिथ्याऽस्तु दुरुक्तं मम । शोधयन्तु बहुश्रुताः । कृतिरियमाचार्यकल्याणबोधेर्नभोभयशून्यनयने (२०७०) वैक्रमेऽब्दे राधासितद्वितीयायां करुणासागरश्रीवीरतीर्थे श्रीपरिमलजैनसङ्घे राजनगरे सम्पन्नेति शम्[३] ।

---

१. **यथोक्तमन्यत्र-समेन हि स्यादुपमाभिधानं, न्यूनोऽपि ते नास्ति कुत समानः-इति (सिद्धसेनीद्वात्रिंशिकायाम्)।**

२. **विषयेष्वित्यत्र पाठन्तरम् ।**

३. **विस्तरार्थिभिर्विलोक्यतां गुर्जरविवेचनम्-परमोपनिषद् । (देवधर्मपरीक्षाऽऽख्यग्रन्थेन संयुतोऽस्त्ययं ग्रन्थः)**

॥ एँ नमः ॥
॥ श्री गौतमस्वामिने नमः ॥
श्री प्रेम-भुवनभानु-जयघोष-जितेन्द्र–गुणरत्न-रश्मिरत्नसूरिसद्गुरुभ्यो नमः ॥

पूर्वमहर्षि श्री मल्लिषेणविरचितं
पूर्वाचार्य श्री सिंहसूरीश्वरविरचितवृत्तियुतं

॥ श्री सज्जनचित्तवल्लभम् ॥

प्रस्तावना

संसार से विरक्त होकर जीव जब दीक्षित होता है तब से शिष्य का गुरु में विलीनीकरण हो जाने से शिष्य का स्वतंत्र अस्तित्व रहता ही नहीं है। शिष्य के लिये गुरु ही भगवान् है। अनुपम आस्था, आदर और बहुमानभाव से भावित शिष्य का व्यवहार भी गुरु के प्रति अहोभावप्लावित रहता है।

कर्मवशात् गुरु कभी आचार-विचार से पतित हो जाय तो शिष्य का कर्त्तव्य है कि योग्यकाल में विनयपूर्ण वचनों से उन्हे सन्मार्ग में लाये। यही गुरुऋण से मुक्त होने का सफल प्रयास है।

स्थानांगसूत्र में तीन का प्रत्युपकार दुष्कर कहा है। १) माता-पिता, २) मालिक, और ३) गुरु। ये तीनों के उपकार का ऋण उतारने का एक ही उपाय है-उन्हें धर्म में स्थापित करे-स्थिर करें।

शास्त्रों में एक सुप्रसिद्ध दृष्टान्त है। गुरु शैलकाचार्य की आचारशिथिलता देखकर ५०० शिष्य गुरु को छोड गये फिर भी पंथकमुनि ने अपने गुरु को नहीं छोड़ा, योग्य अवसर की खोज में रहे, बहुमानभाव में जरा भी ओट न आने दी, योग्य अवसर मिलते ही विनयपूर्ण वचनों से पुनः गुरु को धर्म में स्थिर किया।

प्रस्तुत ग्रन्थरचना के प्रयोजनरूप में तीन कारण टीकाकार ने बताये है। १) निज गुरु के दुर्गतिपतन के डर से, २) जैन धर्म की साधुता का परिपालनार्थ, और ३) श्रोता और वक्ता दोनों के कामविकार निवारणार्थ।

ग्रन्थकार ने इस छोटे से ग्रन्थ में बहुत विषयों का समावेश किया है-चारित्र के बिना ज्ञान शोभायुक्त नहीं है, द्रव्यचारित्र, अशुचिभावना, स्त्रीचरित्र, शरीरराग,

साधुजीवन, अप्रमाद, साधुलक्षण, विभूषात्याग इत्यादि अनेक विषयों की सुंदर प्रस्तुति की है।

पू. आचार्य श्री मल्लिषेणसूरि इस २५ श्लोकमय ग्रन्थ के कर्ता है। पूज्यश्री ने शक संवत १२१४ और विक्रम संवत १३४९ में "स्याद्वादमंजरी" नामक टीकाग्रन्थ की रचना की है। इस ग्रन्थ में ग्रन्थरचना समय का कोई संकेत मिलता नहीं है।

पू. आ. श्री मल्लिषेणसूरि के गुरु नागेन्द्रगच्छीय श्री शीलगुणसूरि के शिष्य आरंभसिद्धि आदि ग्रन्थकर्ता श्री उदयप्रभसूरि है।

इस ग्रन्थ के टीकाकार पूर्वाचार्य श्री सिंहसूरि है। उनका जीवन-कवन हमे प्राप्त न हो सका।

प. पू. भवोदधितारक दीक्षादानेश्वरी आ. भ. श्री गुणरत्नसूरि म. सा. एवं. प. पू. आ. भ. श्री रश्मिरत्नसूरि म. सा. की मंगल आज्ञा और आशीर्वाद से अद्यावधि अप्रगट अमुद्रित इस सटीक ग्रन्थ का संशोधन, पू. आ. श्री मुनिचंद्रसूरि म. सा. (पू. ॐकारसूरि समुदाय) के सूचन से ५ हस्तादर्शो द्वारा किया गया है। जिनमें से २ हस्तादर्श पू. आ. श्री मुनिचंद्रसूरि के सहयोग से "श्री मोहनलालजी जैन ज्ञानभंडार, सूरत" द्वारा प्राप्त हुई और ३ हस्तादर्श श्रुतप्रेमी श्रीमान् बाबुभाई सरेमलजी के सहयोग से "आ. श्री कैलाससागरसूरि ज्ञान मंदिर, कोबा" द्वारा प्राप्त हुई है।

अन्त में मुख्यतया वैराग्यपोषक इस ग्रन्थ का अध्ययन-चिंतन-मनन करके स्वजीवन को आचारमय-वैराग्यमय बनाकर हम शाश्वत सुख को प्राप्त करे ऐसी एक अभिलाषा।

गुरु गुणरत्न-रश्मिरत्नसूरि-
गीतार्थरत्न वि. चरणरज
मुनि हितार्थरत्नवि.

जैन सोसायटी
अहमदाबाद.

आ. कैलाससागरसूरिजी ज्ञान भंडार, कोबा (प्रथम पृष्ठ)

।। एँ नमः ।।
।। श्री गौतमस्वामिने नमः ।।
श्री प्रेम-भुवनभानु-जयघोष-जितेन्द्र–गुणरत्न-रश्मिरत्नसूरिसद्गुरुभ्यो नमः ।।

पूर्वमहर्षि श्री मल्लिषेणविरचितं
पूर्वाचार्य श्री सिंहसूरीश्वरविरचितवृत्तियुतं

।। श्री सज्जनचित्तवल्लभम् ।।

लब्धिमन्तं विशेषज्ञमिन्द्रभूतिं गणेश्वरं ।
सच्चित्तप्रियवृत्तस्य नत्वा वृत्तिं करोम्यहं ।।

तावदस्य सज्जनचित्तवल्लभग्रन्थकर्तुः करणवक्तव्यतामाह-एकस्मिन्नगराभ्यासे वने सैकशिष्यः साधुस्तपः कुर्वंस्तिष्ठति । किंविशिष्टः सः ? परमोत्कर्षवैराग्यरागजाग्र-त्संसारावस्थायथवस्थितजरामृत्युरोगवियोगदुःखक्लेशार्त्तिसर्वभवस्थितिं विभावय-न्नास्ते । जैनेश्वरमार्गं सत्यतया मन्वानस्तिष्ठति । तदा तन्नगरवासी सद्गुणाकृष्टचेतास्तं मुनि सिषेवे । कियत्कालान्तरे राजा मुनिं प्रति सम्यगञ्जलिं कृत्वा जगाद, स्वामिन् ! ममोपरि कृपां विधाय नगरान्तरे मदीयनिरवद्यचित्रशालोपाश्रये प्रधार्यतां, यथा मदीया सेवा सनातया प्रभोः पादयोर्निश्चलचेतसो भवति । तदा मुनीशेनोक्तं "साधवो वनवासिन एव भव्याः" । नगरीशेनोक्तं, "श्रीमतां नगरमेव वनं" इत्याग्रहे क्रियमाणे नगरान्तरे राज्ञोक्ते स्थाने स साधुराजगाम । तत्राऽपि कियत्कालं पूर्ववद् विधिना तपस्तप्यमानः क्रियां कुर्वाणः परगृहेऽनियताऽऽहारं च कुर्वंस्तस्थौ । ततश्चिरकालोषितत्वेन राजाऽन्तःपुरवारवधूकुटहारिकाजनसेव्यमानाऽनेकमाननी मनोज्ञसौंदर्यरूपलावण्यकलाकौशल्यनेपथ्यपरिधाननानाविधपुष्पग्रन्थनमृगमदचन्दन चन्द्रघुसृणविलेपनतिलकादियुक्तस्त्रीजनसंसर्गत्वेन गुरोश्चेतस्स्मरप्रेरिततया सद्धर्म-गिरिशिखराच्छ्रस्तं । तदा ताभिः सह हास्यलास्यगीतस्मिता-च्छुकभाषणरहोवार्त्ता प्रवलिहका-शृङ्गार-दोधककाव्यकथाकौतुककटाक्षावलोकनस्त्रीजनाऽधरोष्टपयोधरा-ङ्गोपाङ्गनिरीक्षणादिकं कुर्वाणो गुरुस्तिष्ठति । तदन्तेवासिना ज्ञातं, मदीयधर्मोपदेशकः सम्यग्ज्ञानदर्शनचारित्राण्यवगण्य स्त्रीजनेषु मग्न एवावलोक्यते ।

किं मे गुरुर्मनसीत्थं न वेत्ति, स्त्रीणां सर्वेऽप्यन्तरबाह्यभावा इन्द्रचाप-करिकर्ण अश्वत्थपर्णवत्क्षणिका एव स्युः । किं मे गुरोश्चेतसीत्थं नायाति, ललनाङ्गचेष्टालका एवासां दुष्टतां दर्शयति । किमिति ? एतच्छिरसि कृष्णस्निग्धधम्मिल्लवाला न, किन्तु

मुक्तिपुरीप्रस्थानेऽशकुनाय व्यालसमूहा एव । एतासां पत्रपाश्याद्यलङ्कृतं भालं न, किन्तु शाणाकर्षितार्धचंद्रकारभल्लकमेव । एतासामनलसा भ्रुवो न, किन्तु नरकस्य कुटिला भुवो वर्त्तते । नारीणां दृष्टिपाता न, किन्तु ऋष्टिपात एव । सुंदरीणां सविकारमाननं न, किंतु मनोभवः सर्पस्य काननमेवं । आसां कर्णाषु कुण्डलयुगं न, किन्तूपशमरसस्याऽग्नि कुण्डयुगमेव । भामिनीनां कम्बुवद्वर्तुलाकारं गलं नास्ति, किन्तु मुक्तिमार्गस्याऽऽगर्लमेव । सुंदरीणां पयोधरौ न स्तः, किन्तु कामस्य पयोधरावेव । मृगाक्षीणां कुचांतरं तटं नास्ति, किन्तु विवेकभानोरस्ताचलतटमेव । स्त्रीणां बाहुलता नास्ति, किन्तु संसारबाहुलतैवास्ति । स्त्रीणां विग्रहो नास्ति, किन्तु सर्वथाऽयोमयो विग्रह एव । स्त्रीणां चिरांशुकं नास्ति, किन्तु सम्यग्ज्ञानाच्छादकमेव । इत्येवमंतेवासिना विचार्यमाणेन सद्गुरुसन्मुखं शिष्टिकथनासमर्थत्वेन निजगुरुदुर्गति-पतनभीतत्वेन जैनधर्मयतित्वप्रतिपालनहेतुत्वेन श्रोतृवक्तृकामविकारवारणार्थत्वेनेमं ग्रंथं कृतवान् ।

ततो गुरोरग्रे समागत्य वक्ति स्म, हे स्वामिन् ! इमं ग्रन्थं सज्जचित्तवल्लभनामानं श्रावयन्तु मे । गुरुणोक्तं नाम्नाऽपि सुंदरं सुष्ठु श्रूयतां सूच्चार्यतां च । शिष्य आहाऽऽदिकाव्यम्-

।। गाथा-१ ।।

नत्वा वीरजिनं जगत्त्रयगुरुं मुक्तिश्रियो वल्लभं ।
पुष्पेषुक्षयनीतबाणनिवहं संसारदुःखापहं ।।
वक्ष्ये भव्यजनप्रबोधजननं ग्रन्थं समासादहं ।
नाम्ना सज्जनचित्तवल्लभमिमं श्रृण्वंतु संतो जनाः ।। १ ।।

व्याख्या- हे सन्तो ! भो विद्वांस ! इमं वक्ष्यमाणग्रंथं श्रृण्वन्तु समाकर्णयन्तु । ग्रंथादौ सतामाभिमुखीकरणमेव प्रमाणं, तदितरेषां हि शास्त्रादौ तु नामाऽपि नादेयं । किं नामानं ग्रन्थं ? नाम्ना सज्जनचित्तवल्लभग्रन्थं । 'अहं वक्ष्ये' इति कर्म-कर्तृ-क्रियानिर्देशः । नाम्नाऽभिधानेन विद्वल्लोकमनोभिगमं । अहमिति श्रीमल्लिषेण नाम मुनिः । समासात्संक्षेपाद् ग्रन्थं शास्त्रं वक्ष्ये "वृत्तव्यन्तायां वा विधातुरित्यात्मनेपदी" कथयिष्ये, स्वगुरुदुर्गतिपाताद्रक्षित इति युक्तोऽयमर्थः । किं विशिष्टं ग्रन्थं भव्य(जन)प्रबोधजननं, भव्या काललब्ध्यन्तरवर्तिनः सम्यक्त्वस्पृष्टत्वान्मुक्तिगमनकृतभवसंख्यानियमा इत्यर्थः । तेषां प्रबोधजननं ज्ञानोत्पादकं, नहि तदितरेषां सम्यग्ज्ञानावाप्तिर्भवतीति । किं कृत्वा विशेषेणेरयति कर्माणीति वीरः, स चासौ जिनश्च-वीरजिनस्तं नत्वा प्रणम्य । वीरमिति

साभिप्रायं पदं, किमिति ? अन्योऽपि संग्रामशिरसि वीर एव श्लाघ्यः, अत्राऽपि मदन-संयज्जयार्थं वीरजिन एव नमस्करणीयः । पुन किं ? जगत्त्रयगुरुं लोकत्रयीशं । पुन किं? मुक्तिश्रियोवल्लभं मुच्यतेऽनयेति मुक्तिस्तस्याः श्री शोभा लक्ष्मी वा तस्याः वल्लभः प्रेयांस्तं । पुनः किं ? पुष्पेषुः कामस्तस्य क्षयं नीता बाणनिवहाः प्रलयं प्राप्ताः कोदण्डसमूहा येन सः पुष्पेषुक्षयनीतबाणनिवहस्तं । बाणास्तु पञ्चैव, निवहा इत्युक्तमति दुस्सहत्वादिति । ते के पञ्चबाणाः ? तद्यथा (१) प्रथमस्तु द्रष्टाग्रेतनस्य दृष्टिं योजयति, (१) तदनन्तरं दृष्टिप्रसरो नयनचालना भवेत्, (३) ततो द्वयो रागो भवति, (४) ततो परस्परं स्वभावं ज्ञापयति, (५) ततो द्वयोः स्नेहो बन्धो भवतीति । पुनः किं ? संसारदुखापहं संसरणः चतुरशीतियोनिषु भ्रमणमिति संसारस्तत्र दुःखं जन्ममृत्युरोगवियोगादिकं अपहतीति संसारदुःखापहस्तं वीरजिनं नत्वेति सर्वत्र संबंध्यत इति काव्यार्थः ।। १ ।।

।। गाथा-२ ।।

रात्रिश्चन्द्रमसा विनाऽब्जनिवहैर्नो भाति पद्माकरो ।
यद्वत्पड़ितलोकवर्जितसभा दन्तीव दन्तं विना ।।
पुष्पं गंन्धविवर्जितं मृतपति स्त्रीवेह तद्वन्मुनि- ।
श्चारित्रेण विना न भाति सततं यद्यप्यसौ शास्त्रवान् ।। २ ।।

व्याख्या- असावेष मुनिः यद्यपि चेदपि शास्त्रवान् साङ्गोपाङ्गसिद्धांतव्याकरणनाम-कोशतर्कालङ्कारप्रमुखाधीत्यपि पठितोऽपि सन् चारित्रेण विना सत्संयमादृते सततं निरंतरं नो भाति न शोभते । दृष्टान्तैराह-यथा चन्द्रमसा चन्द्रेण विना रात्रिर्यामिनी "नो भाति" इति पदं सर्वत्र संबध्यते । पुनरब्जनिवहैः कमलपुञ्जैर्विना यथा पद्माकरो नो भाति । इवेत्यौपम्येद्यथा दन्तं विना न हि शौभाकृद्दशनाभ्यां विना दन्ती हस्ती नो भाति । पुनर्गन्धविवर्जितमाऽऽमोदरहितं-पुष्पं कुसुमं नो भाति । इहास्मिन् लोके यथा मृतपतिस्त्री पतिवर्जिता नारी नो भाति, सद्वस्त्रभोजनकुसुमसुगन्धतैलसद्भूषण-चर्यातिलकहारनुपुराद्यलङ्कारा विधवानां न शौभायन्ते । तद्वत्तथैव मुनिर्यतिरपि चारित्रेण विना नो भातीति काव्यार्थः ।। २ ।।

।। गाथा-३ ।।

किं वस्त्रत्यजनेन भो मुनिरसावेतावता जायते ।
क्ष्वेडेन-च्युत पन्नगो गतविषः किं जातवान् भूतले ।।

मूलं किं तपसः क्षमेन्द्रियजयः सत्यं सदाचारता ।
रागादींश्च बिभर्ति चेन्न स यति लिङ्गी भवेत्केवलम् ।। ३ ।।

व्याख्या- यः साधु रागादीन् राग-द्वेष-मिथ्यात्वाऽविरताऽऽश्रवादीन् चेद्यदि बिभर्त्ति दधात्यर्थात्संचिनोति स यतिर्न नैव, किन्तु केवलं यतिधर्मादिगुणरहितत्वेन सर्वथा स लिङ्गी भवेद्वेषधारक एव स्यात् । "यत्तदोर्नित्याभिसंबंधात्" । भो इत्यामन्त्रणे हे साधो! असौ संयमादिरहितो वस्त्रत्यजनेन, वस्त्रमित्युक्तेऽत्यंतनिरुपधित्वेनापि किमिति वितर्के, एतावता मुनिर्जायते किमियता वस्त्रादित्यागेन साधुर्भवेत् ? अपि तु न । अत्र दृष्टान्तमाह-क्ष्वेडेन कञ्चुकेन च्युतस्सक्तः पन्नगो दर्वीकरः स क्ष्वेडेनच्युतपन्नगोऽत्रालुक्समासः । निर्मोकरहितः सर्पः किमिति प्रश्ने, भूतले पृथिव्यां गतविषो निर्गरो जातवानभूदपि तु नैव । यथा कञ्चुकेन विना निर्विषो न भवेत्तथा केवलांबराभावेन साधुरपि न स्यात् । कश्चित्पृच्छति तपसो जितेन्द्रियस्य वा संयमस्य मूलं पूर्वभाविकरणं किं "तपस्तपस्विनो धार्य-धारिकभावादैक्य" इति प्रश्ने वक्ष्यामि क्षमा क्षान्ति रे मुण्ड ! रे शुद्र ! इत्यादि भाषिते क्रोधाभावः । इन्द्रियजयोऽखिलाक्षवशीकरणं । सत्यं-सर्वं प्राणिहितकृदनलिकं । सदाचारता सच्छिष्याऽऽसेवनात्मक एषु सदा वर्तमानः साधुर्भवतीति काव्यार्थः ।। ३ ।।

।। गाथा-४ ।।

किं दीक्षाग्रहणेन ते यदि धनाकाङ्क्षा भवेच्चेतसि ।
किं गार्हस्थ्यमनेन वेषधारणेनासुन्दरं मन्यसे ।।
द्रव्योपार्जनचित्तमेव कथयत्यभ्यन्तरस्थांगजं ।
नो चेदर्थपरिग्रहाग्रहमति-र्भिक्षो न संपद्यते ।। ४ ।।

व्याख्या- हे साधो ! यदि ते तव चेतसि मनसि घनाकाङ्क्षा भवेत्स्वापतेयसंचयवांच्छा स्यात्, तर्हि दीक्षाग्रहणेन किं ? गुरोरग्रे सत्संयमादानेन किं ? अपि तु न किमपि । तदेव द्रढयति हे मुने ! अनेन वेषधरणेनामुना वित्तवर्धनोपायरचितविशिष्टयतिगुणवर्जितलिङ्गेन कृत्वा किं ? गार्हस्थ्यं गृहाश्रमं असुंदरं अमनोज्ञ, मन्यसे जानासि । एतावता सत्संयमगुणवर्जितमुनिवेषात् धामस्थ्यं दुष्टं नास्तीतिभावः । अत्रोपनयमाह-द्रव्योपार्जनचित्त एव वित्तैकत्रकरणसंग्रहणमन एव भवत इति शेषः, तदेवाभ्यन्तरस्थाङ्गजं मध्यवर्त्तिकामं प्रतिकथयति । एतावता यः कामी भवति स

वित्तसंग्रही भवत्येवातो हे भिक्षो ! हे भिक्षाभुक् । चेदिति पक्षान्तरे यः कामी न भवेद्विषयी न स्यात्तर्हि अर्थपरिग्रहाग्रहमतिरपीति शेषः । न संपद्यते द्रव्यसंग्रहणतत्परताबुद्धिरपि नो संपद्यतेऽर्थादीदृशी धीरेव नोत्पद्यते । एतावता य कामी न स्यात्सोऽर्थग्राह्यपि नो भवेदिति काव्यार्थः ।। ४ ।।

।। गाथा-५ ।।

योषापण्डकगोविवर्जितपदे संतिष्ठ भिक्षो सदा ।
भुक्त्वाहारमकारितं परगृहे लब्धं यथासंभवं ।।
षट्कावश्यकसतक्रियासु निरतो धर्मानुरागं वहन् ।
सार्धं योगिभिरात्मभावनपरै रत्नत्रयालङ्कृतैः ।। ५ ।।

व्याख्या- हे भिक्षो ! सदा सर्वदा यावज्जिवमित्यर्थः, योषाः नार्यः, पंडका स्त्रीनृवि(वे)दाभिलाषिणः, गाव इत्युक्ते मेषीप्रभृति सर्वास्तिरिश्चास्तां द्वन्दे कृते योषापंडकगावस्ताभिर्विवर्जितं रहितं पदं गृहस्थानं यत्तद्योषापण्डकगोविवर्जितपदं, तस्मिन्विषये संतिष्ठ सम्यङमनोवाक्कायशुद्ध्या स्वाध्यायादि कुर्वंस्तिष्ठेत्यर्थः । किं कृत्वा परगृहेऽनियतास्पदे यथासंभवं लब्धमाहारं भुक्त्वा, यथा गृहिभिस्सद्भावेन दत्तं, न तु मंत्रतंत्रादिभिः प्रलोभितैरर्पितं, तमेव लब्धं प्रातं आहारं भोजनं भुक्त्वा प्रभुज्य । पुनः किं ? अकारितं न गृहिणां प्रागेव ज्ञापितं भवेत् "स्वोदिने तव गृहे भोक्ष्यामीति" भावः । पुनः किं सन् तत्र पूर्वोक्ते पदे संतिष्ठ, षट्कः षट्संख्या आवश्यकास्साधुभिरवश्यमेव कर्तव्याः सामायिकचतुर्विंशतिवन्दनकप्रतिक्रमणकायोत्सर्गप्रत्याख्यानरूपास्तेषां क्रियासु यथाविधिसमाराधनासु निरतस्सावधानः सन् । पुनः कैस्सह किं कुर्वन् ? योगिभिस्सार्द्धं धर्मानुरागं वहन् योगा मनोवाक्कायव्यापारास्त एव वश्या येषां ते योगिनस्तैस्साकं धर्मे क्षान्त्यादिकेऽनुरागो हार्दस्तं वहन् धारयन् । किं भूतैर्योगिभिः रत्नानां ज्ञानदर्शनचारित्राणां त्रयं त्रिकं तेनालङ्कृता आभूषितास्तैस्सार्द्धं । पुनः किम्भूतैरात्मभावनपरैः आत्मा साक्षाच्छुद्धज्ञानाद्युपयोगमयस्तत्र भावनपराः कर्मजनितविकृतिनिषेधनप्रवणास्तैस्सह सदा संतिष्टेति काव्यार्थः ।। ५ ।।

।। गाथा-६ ।।

दुर्गन्धं वदनं वपुर्मलभृतं भिक्षाटनाद्भोजनं ।
शय्या स्थण्डिलभूमिषु प्रतिदिनं कट्यां न ते कर्पटम् ।।
मुण्डं मुण्डितमर्धदग्धशववत्त्वं दृश्यसेऽन्यैर्जनैः ।
साधो!ऽद्याप्यबलाजनस्य भवतो गोष्ठी कथं रोचते ।। ६ ।।

व्याख्या- हे साधो ! हे वाचंयम ! भवतस्तवाद्यापि सत्संयमादत्तेऽपि अबलाजनस्य ललनालोकस्य गोष्ठी गोर्दृष्टिर्वा भारती तस्या रसेन स्थीयते इति गोष्ठी सा कथं रोचते भवतो-मनसि कथं सुखायत इत्यर्थः । स्त्रियोऽभिधानमबलेति कविरूढितः परम् अतो न कापि सबला यदुच्यते-"अहनि गृहगतेयं भामिनी भीतिमेति, परपुरुषरतैषा याति पैशाचभूमौ कथमियमबलाख्या कथ्यते पण्डितेन ?, नहि सबलतरोऽस्या दृश्यते कोऽपि शूरः ।" अतोऽबलाभिः सह गोष्ठी न कर्तव्येति । कथमित्याह ते तव वदनमास्यं दुर्गन्धं पूतिगन्धं अस्तीति शेषः, कुतो दन्तकाष्टादिकरणाभावात् । पुनस्तव वपुर्देहं मलभृतं मलीमसान्वितं, कुतः ? स्नानादिविधानाभावात् । पुनस्तव भोजनं प्रत्यवसानं भिक्षाटनात् भिक्षाभ्रमणतः । पुनस्तव शय्या शयनं स्थण्डिलभूमिषु विषमोच्चावच-पैतृवनाद्यवनिषु । पुनस्तव प्रतिदिनं निरन्तरं कट्यां कटिविषये कर्प्पटं परिधानांशुकं नास्ति, परिधानवस्त्रं तु प्रत्यक्षत्वेन दृश्यते, नास्तीति किमुक्तं ? उच्यतेः-मूर्च्छारागाद्यभावादिति । पुनस्तव मुण्डं मस्तकं मुण्डितं कचाभावीकृतं, मुण्डितमित्यविवक्षितपदं साधूनां कचलुञ्चनकल्प एव जिनैरूक्तः-वा मुंडे भवित्तागाराउ अणगारियमित्युक्तमेव । अथ चेदृशदेहभृत्सन् त्वमन्यैर्जनैः सर्वालंकारलंकृतैलोकैः कीदृशो दृश्यसे ? अर्धदग्धशबवत् अर्धप्लोषितमृतक इवेतिभावः । अतो हे मुने ! महिलांभिः कामगोष्ठी न विधेयेति काव्यार्थः ।। ६ ।।

।। गाथा-७ ।।

अङ्गं शोणितशुक्रसंभवमिदं मेदोऽस्थिमज्जाकुलं ।
बाह्ये माक्षिकऽपत्रसन्निभमहो चर्मावृत्तं सर्वतः ।।
नो चेत्काकबकादिभिर्वपुरहो जायते भक्ष्यं ध्रुवं ।
दृष्ट्वाद्यापि शरीर-सद्मनि कथं निर्वेदता नास्ति ते ।। ७ ।।

व्याख्या- हे साधो ! शरीरसद्मनि विग्रहे ते तव निर्वेदता कथं नास्ति भवत उद्वेगता कथं नास्ति । अद्यापि प्रोच्यमानदेहनिसर्गे ज्ञातेऽपि, किमित्याहः-अङ्गमिन्द्रियायतनमिदृशं दृष्ट्वा वीक्ष्येति सर्वत्रानुमीयते । किदृशमिति शोणितशुक्रसंभवं रूधिररेतोभाजनमङ्गमित्यनुवर्तते । पुनर्मेदोऽस्थिमज्जाकुलं वसाकीककौशिक चतुर्थपंचमषष्ठधातुव्याप्तं रसमांसावनुक्तावपि ग्राह्याविति सप्तधातुमयमंगमिदं । पुनः कीदृशं ? बाह्ये तेषां धातुनामुपरितनभागे, सर्वतः समन्तात्, चर्मावृत्तं चर्मणाऽजि-

नेनावृत्तं आच्छादितं । किं भूतं चर्मावृत्तं ? माक्षिकपत्रसंनिभं भंभरालीगगरूत् सदृश-मिति भावः । इदृशमङ्गं अहो इत्याश्चर्ये येद्यदि चर्मावृत्तं वपुर्नो भवेत्तदा काका बलिभुजो वायसा, बका कध्वा आदिशब्दात्-राक्ष्याय्योक्रोश-शृङ्गालप्रमुखै भक्ष्यं भक्षणार्हं ध्रुवमिति निश्चयेन जायते भवेदिति काव्यार्थः ।। ७ ।।

।। गाथा-८ ।।

स्त्रीणां भावविलासविभ्रमगतिं, दृष्ट्वानुरागं मनाक् ।
मागास्त्वं विषवृक्षपक्वफलवत्सुस्वादवन्त्यस्तदा ।
ईषत्सेवनमात्रतोऽपि मरणं पुंसां प्रयच्छन्ति भो ।
तस्माद्दृष्टिविषाहिवत्परिहर त्वं दूरतो मृत्यवे ।। ८ ।।

व्याख्या- भो मुने ! स्त्रीणां युवतीनां भावविलासविभ्रमगतिं दृष्ट्वा मनागपि अनुरागं मा गा इत्यन्वयः । तत्र भावाश्चितोद्भवा वा शरीरस्य सूक्ष्मचेष्टाः, विलासा नेत्रकृतनानारूपाश्चेष्टाः, विभ्रमा मुखाद्यरोष्टाङ्गुलिचेष्टाः, हावा भ्रूतारकादीनां बहवो विकाराः, हेला अंगस्यानल्पा विकाराः, हाव-हेला अनुक्ता अपि ग्राह्या । तेषां गतिश्चालना तां दृष्ट्वा वीक्ष्य, अनुरागं प्रीतिभावः, मनागपि नोऽशंमात्रमपि त्वं मा गा मा गच्छार्थात्तानावादीन् (त्न्भावादीन्) प्रति मा पश्येत्यर्थः । द्विकर्मकोऽयं धातु-"गंम्लृ गतौ" अतोऽनुरागं प्रति च मा गा इति । तदा भावादिकरणावसरे सुंदर्यः सुस्वादवंत्योऽतिमधुरस्निग्धवंत्यो लगंतीति शेषः । अत्र कानीव ? विषवृक्षपक्वफलवत् किम्पाकतरुपक्वफलानीव तावत्सुन्दराकाररसज्येष्टस्वादुवंतिस्युः । ततो परं इषत्सेवनमात्रतोऽपि सकृदास्वादनतोऽपि पुंसां पुरूषाणां मरणं निदानं प्रयच्छति ददाति, तथा सुन्दर्योऽपि सुन्दरीदेहगतभावा अपि नराणां मरणं ददते सेव्यमाना इति भावः । परं किंपाकफलानि तद्भवीयमे (म)रणं ददाति, स्त्रीगतभावास्सकृत्सेविता अपि बहुशो मरणानि समर्पयंति, तस्माद्हेतोर्दृष्टिविषाहिवत् नेत्रविषसर्प इव स्त्रीजनं त्वं मृत्यवे-मरणाय, दूरतो परिहर त्यजेति काव्यार्थः ।। ८ ।।

।। गाथा-९ ।।

यद्यद्वाञ्छति तत्तदेव वपुषे दत्तं सुपुष्टं त्वया ।
सार्थं नैति तथाऽपि ते जडमते मित्रादयो याति किं ।।
पुण्यं पापमितिद्वयं च भवत पुष्टेन यातीह ते ।
तस्मात्मा स्म कृथा मनागपि भवान् मोहं शरीरादिषु ।। ९ ।।

व्याख्या- हे मुने ! इदं वपुर्देहं यत् यत् वाञ्छति, अर्थाद् वपुर्गतमिन्द्रियसमूहं, धार्यधारकाभावादैक्यं, यद्यदभिलषति तत्तदेव वपुषो शरीराय त्वया भवता सु अतिशयेन पुष्टं पुष्टिभावं दत्तं । हे जडमते ! हे मन्दबुद्धे ! तथाऽपि स्वकरपोषितमपि देहं त्वया सार्द्धं भवता सह नैति न याति तर्हि मित्रादयः मित्रकलत्रमातृपितृभातृभर्तृ-प्रमुखास्त्वया सार्थं किं याति ? अपि तु नैव । पुण्यं सुकृतं पापं दुष्कृतं इति द्वयं भवतस्तव पुष्टेन पुष्टिभागेन केटके "सहार्थे तृतीया", यातीह ते यातुमिच्छति शुभाशुभयुगं कर्तुरनुगच्छति निश्चयादितिभावः । तस्मात्कारणाच्छरीरादिषु निजकलत्रादिषु मोहः मुह्यते विकलीभूयतेऽनेनेति मोहस्तं मनागपि स्तोकमपि भवांस्तं मा स्म कृथा भवान्मा कार्षीरिति सूत्रे नाम्नि योगे क्रिया प्रथमपुरुषैकवाक्यमानीतं भवान्मा स्म कृथा इति चिन्त्यमिति काव्यार्थः ।। ९ ।।

।। गाथा-१० ।।

अष्टाविंशतिभेदमात्मनि पुरा संरोप्य साधो व्रतं ।
साक्षीकृत्य जिनान्गुरूनपि कियत्कालं त्वया पालितं ।।
भञ्क्तुं वाञ्छसि शीतवातविहतो भूत्वाऽधुना तद्व्रतं ।
दारिद्रोपहतः स्ववान्तमशनं भुङ्क्ते क्षुधार्त्तोऽपि किं ।। १० ।।

व्याख्या- हे साधो ! पुरा पूर्वं अष्टाविंशतिभेदव्रतं पंचयम-पंचेन्द्रियवश्य-चतुःक्रोधादिनिग्रह-त्रिसत्यभावयोगकरण-क्षांति-वैराग्य-मनोवाक्कायनिरोध-शीत मार-णान्तिकोपसर्गसहन-ज्ञानादित्रिकरूपास्साधो गुणाः । स्थविरकल्पिकानां मते, (जिनकल्पिकानां मते) जिन(स्थविर)कल्पिकानां मते तु नान्योऽष्टाविंशतितमो गुणः । तदात्मकं व्रियते-स्वात्मना प्राणत्यागेऽपि न दीयते न संखंड्यते इति व्रतं, आत्मनि स्वविषये संरोप्यार्थादुररीकृत्य अपीति निश्चित्य जिनान् गुरुन् प्रति साक्षीकृत्य व्रतग्रहणकाले "अरिहंतसक्खियं गुरुसक्खियम्" इति वचनात्, कियत्कालं कतिचिदब्दानि त्वया पालितमवित[थ]मित्यर्थः । तत्पूवोक्तव्रतं शीतवातविहतस्सन् सुसीमसमीरपीडितस्त्वमिदृशो भुत्वाऽधुनेदानीं भङ्क्तुं वाञ्छसि शकलीकर्तुमीहसे ? । अत्रोदाहरणं, दरिद्रोपहतः दोर्गत्येन बाधितोऽपि च क्षुधार्त्तोऽशनार्थितोऽपि सन् स्ववान्तमशनं निजमुखाच्छर्दितं भोजनं किं भुङ्क्ते ? किमश्नाति ? अपि तु न कोऽपीति काव्यार्थः ।। १० ।।

।। गाथा-११ ।।

सौख्यं वाञ्छसि किं त्वया गतभवे दानं तपो वा कृतं ।
नो चेत्त्वं किमिहैवमेव लभसे ? लब्धं तदत्रागतम् ।।
धान्यं किं लभते विनाऽपि वपनं लोके कुटुम्बी जनो ।
देहे कीटकभक्षितेक्षुसदृशे मोहं वृथा मा कृथाः ।। ११ ।।

व्याख्या- हे मुने ! सौख्यं वाञ्छसि अत्र भवे सात्यमीहसे त्वमिति संबंधः । त्वया गतभवे किं दान कृतं ? भवता प्राग्जन्मनि अभीतिदानं सत्पात्रपोषणं विहितं ? वा अथवा पूर्वभवे तपः सर्वजीवाऽविरोधिस्वेन्द्रियनिरोधरूपं च त्वया कृतं ? त्वमत्र जगति मनोभीष्टं समीहस इति भाव । एवं निश्चयेन प्रतीयतां यदि प्राग्भवे सम्यग्दानं तपो वा कृतं भविष्यत्तर्हि समीचिनसुखमनुद्यमेनाऽपि अलप्स्य[त] । नो नैव इहैवत्युक्तेऽत्र भवे कृतमत्रैव त्वं लभसे लब्धमीहसे, एतावताऽत्रैवोपार्जितं पुण्यमत्र नो लभ्यते । अन्यत्राऽप्युक्तं शुभाशुभाः प्रकृतयः काश्चिदत्रैवोदयमायान्ति, बाहुल्येन बह्व्य प्रकृतयोऽग्रेतनभवेष्वेव किंचित्तु प्राप्नोष्येव किमित्याह भो ! प्राग्भवे किञ्चित्सुकृतं त्वया कृतं ज्ञायते इति योगः । तत्तस्माद् हेतोर्भवता लब्धं प्राप्तं नृभवमिति गम्यते । अत्रेत्युक्ते आर्यकुले भवतागतमिति भावः ।

त्वं सर्वथा सौख्यं पृच्छसि तत्र लौकिकं दृष्टान्त श्रृणु-कुटुम्बिजनः कृषीवललोक वपनमित्युक्ते बीजवपनं भीमो भीमसेनवत्, अर्थाद्बीजोप्तं विनाऽपि लोके लोकविषये किमिति प्रश्ने धान्यं स्तंबकरिं लभते ? प्राप्नोति ? अपि तु नैव । इत्यनन्तरोक्तं ज्ञात्वा देहे शरीरे वृथा मुघा मोहं रागं त्वं मा कृथा मा कुर्वित्यर्थः । कथम्भूते ? देहे कीटकेन क्षुद्रेण भक्षितमर्थाच्छुषिरीकृतमिक्षुखण्डमसिपत्रमूलं तत्कीटकभक्षितेक्षु तेन सदृशे तुल्ये देहे मा मुह्यतामिति काव्यार्थः ।। ११ ।।

।। गाथा-१२ ।।

यत्काले लघुभाण्डमण्डितकरो भूत्वा परेषां गृहे ।
भिक्षार्थं भ्रमसे तदा हि भवतो मानापमानेन किं ।।
भिक्षो ! तापसवृत्तितः कदशनात्किं तप्यसेऽहर्निशं ।
श्रेयोऽर्थं किल सह्यते मुनिवरैर्बाधा क्षुधाद्युद्भवा ।। १२ ।।

व्याख्या- हे भिक्षो ! दीक्षाग्रहणकालतो भिक्षयोपजीवतीति भिक्षुस्तस्य संबोधने हे भिक्षो ! यत्काले क्षुत्परीषहव्यथिततनु भिक्षोत्थानसमये परेषामनुपलक्षितानां गृहे धाम्नि लघुभाण्डमण्डितकरो भूत्वा धातुमयवर्जितत्वादलाबुदारूमृन्मयपात्रभूषितहस्तः संभूय भिक्षार्थं भ्रमसे शुद्धैषणद्विचत्वारिंशद्दोषरहिताहारनिमित्तमटसि । तदाऽपि तस्मिन्कालेऽपि भवतस्तव मानापमानेन किं सत्पूजनादरेण किं ? तावता कस्यचिच्छ्रद्धालो गृहे गते सति सद्भाषणोत्थानादिकं कृतं तेन तदा सत्कारपरीषहः सोढव्यः, वा कस्यचिदनार्यगृहे गते सति केनोच्यते रे मुण्ड ! रे शुद्र ! रे शावकोऽसि ! क्वागच्छसि इत्यादि भाषणेनाऽपि किं ? अपि तु न किमपि । एतावता भिक्षार्थं निर्गच्छतां मुनीनां समताभाव एव श्लाघ्यः । हे साधो ! तापसवृत्तितस्तपोधनाचरित-मार्गत्वाद् हैतौ पञ्चमी" कदशनादन्तप्रान्ताहारादहर्निशमहोरात्रं किं तप्यसे ? किमर्थं क्लामसीत्यर्थः । उक्तं च

पंताणि चेव सेविज्जा सीयं पिंडं पुराणकम्मासं ।
अदुबक्कसं पुलागं वा जवणठाए निसेवए मंथुं ।। इत्युक्त्वा

[उत्तराध्ययन-२१९]

अमुमेवार्थं समर्थयति-किलेति संभावनायां श्रेयोऽर्थं मोक्षार्थं मुनिवरैर्यतिपुङ्गवैः क्षुधाद्युद्भवा जिघत्सातृड्शीतादिभ्यो जाता बाधापीडा सह्यते सम्यङ्मर्ष्यत इति काव्यार्थः ।। १२ ।।

।। गाथा-१३ ।।

एकाकी विहरत्यनवस्थितबलीवर्दो यथा स्वेच्छया ।
योषामध्यरतस्तथाऽपि त्वमपि भो ! त्यक्त्वा स्वयूथं यते ।।
तस्मिंश्चेदभिलाषता न भवतः किं भ्राम्यसि प्रत्यहं ।
मध्ये साधुजनस्य तिष्ठसि न किं कृत्वा सदाचारतां ।। १३ ।।

व्याख्या- भो यते ! हे यतेन्द्रिय ! यथेति दृष्टान्तोपन्यासे, स्वेच्छया यदृच्छया अनव-स्थितबलीवर्दः अनस्थितसङ्करोऽर्थादिड्वर एकाकी विहरति द्वितीयषण्डमसहमानो विचरति रमते गवां मध्ये इति गम्यते । तथेति दार्ष्टांतोपन्यासे त्वमपि भवानपि स्वयूथं त्यक्त्वा मुनिसमूहं हित्वा योषामध्यरतो माननीमध्यप्रसक्तस्सन् विहरसीति संबंधः ।

क्वचिद्योषास्वयूथं कृत्वा मध्यरतो रमते त्यक्त्वा स्थाने कृत्वेति पाठः । चेद्यदि तस्मिन् योषागणे भवतोऽभिलाषता न तव वाञ्छा नास्ति, तर्हि प्रत्यहं निरन्तरं किं भ्राम्यसि किमितस्ततो दाद्यसे [पर्यटसि] ? यत्र तत्र युवतीजननिरीक्षणार्थं भ्रमसीति भावः । किं कर्तुमुचितमित्याह साधुजनस्य मुनिलोकस्य मध्येंऽतराले सदाचारतां कृत्वा शोभनमनुष्ठानं विधाय किं न तिष्ठसि ? कथं न वर्तसे इति काव्यार्थः ।। १३ ।।

।। गाथा-१४ ।।

क्रीतान्नं भवतो भवेत्कदशनं रोषस्तदा श्लाघ्यते ।
भिक्षायां यदवाप्यते यतिजनैस्तद्भुज्यतेऽत्यादरात् ।।
भिक्षो भाटकसद्मसन्निभतनौ पुष्टिं वृथा मा कृथाः ।
पुर्णे किं दिवसावधौ क्षणमपि स्थातुं यमो दास्यति ।। १४ ।।

व्याख्या- हे साधो ! भवतस्तव क्रीतान्नं भवेत् मौल्येनादत्तं सत् कुत्सितं भोजनं विरसमाहारं स्यात्, तदा रोषः श्लाघ्यते तर्हि भवतोऽपि प्रतिघः प्रशस्यते "मया द्रमादिभिः क्रीत्याऽशनं गृहीतं किमनेन विरसं दत्तमिति" मन्यते तदा युक्तम् । अन्यथा भिक्षायां गौचर्यां यतिजनैरसाधुलोकैर्यद्भोजनं अवाप्यते प्राप्यते तदशनमत्यादराद् भुज्यते अत्यादरेण देहाधारं दीयते । यदुक्तं-

तित्तगं च कडुअं च कसायं अंबिलं च महुरं लवणं वा ।
एअलद्धमन्नट्ठपउत्तं महुघयं व भुंजिज्ज संजए ।। २८ ।।
(अज्ञातोञ्छकुलक)

इति वचनात्, हे भिक्षो ! भाटकसद्मसन्निभतनौ भाटकस्य निर्वेशस्य सद्म गृहं तेन सन्निभं सदृशं तनु देहं तत्र पुष्टिं सरसाहारैः पोषणं वृथा निष्कार्येण मा कृथा मा विधेहीति भावः । यथा भाटकगृहस्य कोऽपि भित्यादिकं न संस्करोति, तथा साधुनाऽपि देहपुष्टिरपि न कार्या । किं ज्ञात्वेत्याहः किमिति प्रश्ने दिवसावधौ पूर्णे जाते आयुष्कर्मणो दिनसीम्न्यागते सति क्षणमपि साधारिकषष्टांशमपि यमः स्थातुं दास्यति ? कृतान्वो रक्षितुं वितरिष्यति अर्थात् "पूर्णे आयुषि जाते न यमो मोक्ष्यनियम" इति लोकरूढिः । तद्भवायुरवधौ समाप्ते सति स्वयमेव स्थातुं न केनाऽपि शक्यते इति काव्यार्थः ।। १४ ।।

।। गाथा-१५ ।।

लब्ध्वा स्वं यदि धर्मदानविषये दातुं न यैः शक्यते ।
दारिद्रोपहतस्तथाऽपि विषयासक्तिं न मुच्यन्ति ये ।
धृत्वा ये चरणं जिनेश्वरगदितं तस्मिन्सदा नादरा- ।
स्तेषां जन्म निरर्थकं गतमजाकण्ठेस्तनाकारवत् ।। १५ ।।

व्याख्या- यदीति पक्षान्तरे स्वं द्रव्यं मनोभीष्टं स्वयं लब्ध्वा प्राप्य धर्मदानविषयेऽर्थात्सत्पात्रे, पात्रं त्रिविधं तथाहि-

उत्तमपत्तं साहु मज्झमपत्तं चेव सावया भणिया ।
सम्मदिट्ठी जहण्णपत्तं, एहिं सेसा कुपत्ताणि ।। १४४ ।।
(गाथासहस्री)

तत्र दातुं यैः पुरुषैर्न शक्यते नो विभूयते । अपि च दारिद्रोपहताः कैर्कटकदर्थिताः सन्तास्तथाऽपि ये जना विषयेषु शब्द-रूप-रस-गन्ध-स्पर्शेषु आसक्ति-रतिवाञ्छति विषयासक्तिस्तां न मुच्यन्ति न त्यजन्ति । पुनर्ये जना जिनेन्द्रगदितं सर्वज्ञभाषितं चरणं चारित्रं धृत्वांऽगीकृत्य तस्मिन् संयमे सदा सर्वदा अनादरास्सालस्यास्स्युरिति तेषामनन्तरोक्तानां त्रयाणां जन्म मनुष्यस्येति गम्यतेऽर्थान्नृभवं निरर्थकं गतं निस्सारतया हारितमिति भावः । काविव ? अजाकण्ठस्तनाकारवदजानिगरणकुचाकाराविव यथा सर्वभक्षागले स्तनौ दुग्धेन विवर्जितौ स्तः, तथाऽपि द्रव्यादीनि प्राप्य धर्मादिकं यैर्न कृतं तैर्नृभवं मुधा हारितमित्युच्यते । दानं प्राप्यं दत्तं मया नो सुपात्रे तपस्सद्बले नो कृतं चोपकारं । अधीतं न शास्त्रं मया भूरि बुधो(मुधा) गतं हा गतं हा ।। इतिकाव्यार्थः ।। १५ ।।

।। गाथा-१६ ।।

दुर्गन्धं नवभिर्वपुः प्रवहति द्वारैरिमैः सततं ।
तद्दृष्ट्वाऽपि हि यस्य चेतसि पुननिर्वेदता नास्ति चेत् ।।
तस्यान्यद्भुवि वस्तु कीदृशमहो तत्कारणं कथ्यते ।
श्रीखण्डादिभिरङ्गसंस्कृतिरियं व्याख्याति दुर्गन्धताम् ।। १६ ।।

व्याख्या- हे मुने ! इदं वपुः शरीरं इमैरिति तृतीयाबहुवचनान्तं पदं शब्दस्य कथं सिध्यतीति न बुध्यते मया । अमीभिर्नवभिर्द्विकर्णद्विनयनद्विघ्राणजिह्वापुंचिह्नापायुरूपैः पुरुषस्येति गम्यते । स्त्रीणां वपुरेकादश द्विवक्षोजैर्मिलितैः, पुंचिह्नस्थाने

स्त्रीयचिह्नयुक्तैः शेषैस्तैरेव द्वारैः वलजैः कृत्वा सततं निरंतरं दुर्गन्धं विस्रामोदं प्रवहति निर्जरति, विशेषतः स्त्रीणां प्रतिमासमृत्ववसरे कीलालमुत्समिव प्रश्नवति । ग्रन्थकर्तुरभिप्रायोऽत्यन्तं स्त्रीजननिंदनेतो वृत्तिस्तत्रानुसार(रि)णी । नित्यं प्रक्षालनादि-क्रियमाणेऽपि कुथितं गन्धायते, हीति निश्चितं तद्वपुरघुनोक्तं देहं दृष्ट्वालोक्य ज्ञानचक्षुषेति शेषः । यस्य भव्यस्य चेतसि मनसि पुनर्मुहुश्चेद्यदि निर्वेगता नास्ति शरीरे उद्वेगता न विद्यते तस्यैव पुरुषस्य भुवि जगत्यामन्यत्पूर्वोक्तदुर्गन्धप्रवहनकथनादपरं अहो इत्याश्चर्ये तत्कारणं वस्तु कीदृशं कथ्यते निर्वेगताहेतुकं द्रव्यं कीदृग्विधं प्रोच्यते । एतावता निजदेहगतोपद्रवान् यो न पश्यति सोऽन्यत्र स्थितोपद्रवान् कथं पश्यतीति भावः । अमुमेवार्थं विभावयतिः-श्रीखण्डादिभिः श्रीखण्डो मलयज आदिशब्दात्सिताभ्रमृगमदकुङ्कुमादिभिः कृतेति शेषः, इयमङ्गसंस्कृति वर्ष्ममार्जना सैव दुर्गन्धतां व्याख्याति, एषैव कतियिद्यामानंतरं कुत्सितामोदतां प्ररूपयतीति काव्यार्थः ।। १६ ।।

।। गाथा-१७ ।।

शोचन्ते न मृतं कदापि वनिता यद्यस्ति गेहे धनं ।
तच्चेन्नाऽस्ति रूदन्ति जीवनधिया स्मृत्वा पुनः प्रत्यहं ।।
कृत्वा तद्दहनक्रियां निजनिजव्यापारचिन्ताकुलाः ।
तन्नामाऽपि हि विस्मरन्ति कतिभिः संवत्सरैर्योषितः ।। १७ ।।

व्याख्या- वनिता नार्य कदापि कस्मिन्कालेऽपि मृतं भर्त्तारमिति शेषः, न शोचन्ते तन्नैमित्तकशोकं चेतसि नो कुर्वंति, कथमिति यदि चेत् गेहे धाम्नि धनमीप्सितं वित्तमस्ति विध्यते । चेद्यर्हि तत् धनं नास्ति न विद्यते पुनरिति वारं वारं प्रत्यहं सदाकालं पतिं स्मृत्वा स्मारं स्मारं रूदन्ति सदा बाष्पमोचनं कुर्वन्ति, कथमिति जीवनधिया प्राणप्रीणनबुध्या' परं न तन्नैमित्तकं दुःखं तासां वित्तते । तद्दहनक्रियां कृत्वा भर्तुः प्रेत्यकार्यं विधाय तदनन्तरं निजनिजव्यापारचिन्ताकुला स्त्री भवतीति गम्यते स्वस्वव्यवहारचिन्तनपरा तिष्ठति । किमङ्गना चिन्तयति ? कथमहं विध्यापयामि कामं ? कथमहं स्वोदरभरणं करोमि ? कथं वस्त्रादिसंचयं करोमीति चिन्ताकुला नारी भवतीति भावः । च पुनर्योषिता अङ्गनास्तन्नामपि प्राणेशाभिधानमपि कतिभिस्संवत्सरैः कतिचिदब्दैः कृत्वा विस्मरन्ति विस्मृतिं यांतीतिभावः । "इयं

व्याख्या तु कासाञ्चिदाश्रित्य न तु सर्वासां" ग्रन्थकर्तुराकूतं स्त्रीणामतिनिर्भत्सनेति काव्यार्थः १७ ।।

।। गाथा-१८ ।।

अन्येषां मरणं भवान् विगणयन् स्वस्यामरत्वं सदा ।
देहिंश्चितयसीन्द्रियद्विपवशीभूत्वा परिभ्राम्यसि ।।
अय स्वः पुनरागमिष्यति यमो न ज्ञायते तत्त्वतः ।
तस्मादात्महितं कुरु त्वमचिराद्धर्मं जिनेन्द्रोदितं ।। १८ ।।

व्याख्या- हे देहिन् ! जीव ! अन्येषां स्वतो परेषां सागो निरागसां मरणं निधनं भवांस्त्वं विगणयन् विशेषेण तदायुर्दिनानां संख्यां कुर्वन्, अर्थादयं कदा मरिष्यतीति चिंतयंस्तिष्ठसीति शेषः । पुनः सदा सर्वदा स्वस्यात्मनः उपलक्षणत्वात्स्वकीयवर्गस्याऽपि अमरत्वं अजरामरारोग्यत्वमर्थात्कदापि न मरिष्यामीति चिन्तयसि ध्यायसि किं कृत्वा ? इन्द्रियाण्येव द्विपाः करिण इन्द्रियद्विपास्तेषां वशीभूत्वा संवननीभूयं परिभ्राम्यसि बाढं भ्रमसीत्यर्थः संसारे इति शेषः । त्वयैवं न ज्ञायते न प्रतीयते किमिति ? यमो मृत्युरद्यास्मिन्दिने पुनरथवार्थे स्वो दिने आगमिह्यस्रे आगमिष्यति समेष्यति एवायमर्थो भवता नो ज्ञायते नावसीयते । भावत एवं जानाहि यथा त्वदग्रेऽन्येषां मरणं दृश्यते तथाऽन्येषामग्रे तवाप्यवश्यं मरणं भावीत्युपनयः । तस्मात्कारणात्तत्वतः परमार्थतः जिनेन्द्रोदितं सर्वज्ञभाषितं धर्मं मोक्षनेतारं अचिराद्वेगतः अप्रमादतया शेषकार्याणि विमुच्य त्वं कुरु विधेहीति काव्यार्थः ।। १८ ।।

।। गाथा-१९ ।।

देहे निर्ममता गुरौ विनयता नित्यं श्रुताभ्यासता ।
चारित्रोज्ज्वलता महोपशमता संसारनिर्वेगता ।।
अन्तर्बाह्यपरिग्रहत्यजनता धर्मज्ञता साधुता ।
साधो ! साधुजनस्य लक्षणमिदं संसारविच्छेदकृत् ।। १९ ।।

व्याख्या- हे साधो ! हे मुने ! साधुजनस्य मुनिलोकस्य इदं कथ्यमानं लक्षणं, लक्ष्यते लक्ष्यमनेनेति लक्षणं साधुस्तु लक्ष्यं तद्गुणसामुदायिकं लक्षणं । किंभूतं लक्षणं ? संसारविच्छेदकृत् भवपर्यन्तकारीति भावः । तदाह- देहे शरीरे स्वस्येति संबंधः

निर्ममता ममत्वाभावोऽर्थात्तपक्रियाकायोत्सर्गादि कुर्वन्न जानातीत्थं कृशतां प्राप्नोति मे शरीरं । स्वदेहालुब्धके किं भवति ? गुरौ गृणाति मोक्षमार्गमिति गुरुस्तत्र विनयता प्रश्नयताऽऽभ्यन्तरीयस्नेहतेति भावः । तत्क्रियमाणे किमिति ? नित्यं सततं श्रुताभ्यासता सर्वसिद्धांतांगोपांगादिपरिचयता स्यात् । तदभ्यासे किमिति ? चारित्रोज्ज्वलिता चारित्रं-सामायिकछेदोपस्थापनीयपरिहारविशुद्धिसूक्ष्मसंपराययथाख्यातरूपं तत्रोज्ज्व-लिता निर्मलता शबलाद्याभावता । तत्सत्वे किमिति ? महोपशमता केनापि म्लेच्छेन कर्कशभाषाक्रोशतर्जनावधादिकृतेऽपि न क्रुध्यतीति भावः । तत्सति किमिति ? संसरणं संसारस्तस्मान्निर्वैगताऽर्थाद्भयभीतिता । अन्तर्परिग्रहश्चतुर्दशधा मिथ्यात्ववेद-राग-द्वेष-हास्य-रत्यरति-भय-शोक-जुगुप्सा-क्रोध-मान-माया-लोभरूपाः । बाह्यपरिग्रहः क्षेत्र-वास्तुनवधान्य-द्विपद-चतुष्पद-कुपिकरूपास्तयोस्त्यजनता व्युत्सर्गता-ऽल्पोपधितेति यावत् । तत्सत्यां किमिति ? धर्मं क्षान्त्यादिब्रह्मचर्यपर्यन्तरूपं जानातीति धर्मज्ञः, तस्य भावः धर्मज्ञता । तज्ज्ञाते किं ? साधयति ज्ञान-दर्शन-चारित्राणीति साधुस्तस्य भावः साधुता । इत्यादीनि पुनरनेकान्यौदार्य-गांभीर्य वैराग्य-प्रमुखाण्यनुक्तान्यपि साधुलक्षणानीति काव्यार्थः ।। १९ ।।

।। गाथा-२० ।।

लब्ध्वा मानुषजातिमुत्तमकुलं रूपं च नीरोगतां ।
बुद्धिं धीघनसेवनं सुचरणं श्रीमज्जिनेन्द्रोदितं ।।
लाभार्थं वसुपूर्णहेतुभिरलं स्तोकाय सौख्याय भो ।
देहिन् । देहसुपोतकं गुणभृतं भङ्क्तुं किमिच्छाऽस्ति ते ।। २० ।।

व्याख्या- हे देहिन् ! हे प्राणिन् ! मानुषजातिं सर्वजातिषु कूटरूपां देवैरपीप्सितुत्प्रेक्ष्यते केवलज्ञानभूमिं लब्ध्वा समासाद्य । मनुष्यजातिस्तु बहवनार्यैरपि लब्धा तत्रोत्कृष्टं किमिति ? उत्तमकुलं सर्वज्ञप्रणीताचरितधर्मवंशं, तत्राऽपि अङ्गोपाङ्गादिविकला धर्मकरणेऽसमर्था भवन्त्येके, ततः सर्वजनस्पृहणीयतरं रूपं । रूपवन्तोऽप्येके रुजार्दितमनसो धर्मे शक्यौ (शक्ये) सीद्याः स्युः, ततो नीरोगतां सर्वामयवर्जितदेह । नीरोगिणोप्येके धर्माधर्मविवेचनविकलाः ततो बुद्धिं बुध्यते जीवादीनि यया सा बुद्धिस्तां । बुद्धिं कुतो भवेत् ?, ततः धीधनसेवनं धीरेवधनं येषां ते ज्ञानविभवाः पण्डितास्तेषां सेवनं पर्युपासनमर्थात्समीपवर्त्तनमिति भावः । तेषां सेवाफलमाह-

श्रीरनन्तज्ञानरूपा समवसरणर्द्धिलोकप्रत्यक्षा वा सा विद्यते यस्यासौ श्रीमान् स चासौ जिनश्च श्रीमज्जिनः, स एव इन्द्रः श्रीमज्जिनेन्द्रस्तेन प्ररूपितं सुचरणं सर्वसावद्यनिवृत्तिरूपं चारित्रं लब्ध्वा प्राप्येति सर्वत्र संयोज्यते । इदृशं देहं सुपोतकं शरीरप्रवहणं अलमतिशयेन वसूनि रत्नानि तेषां पूर्णहेतुभिः सपूर्णकारणैः कृत्वा गुणैर्ज्ञानादिभिर्भृतं स्वचितं गुणभृतं, भो साधो ! स्तोकाय सौख्याय क्षणिकवैषयिकशर्मणे, ते तव किमिति प्रश्ने भङ्क्तुं कलाकलीकर्तुं स्फोटयितुं इच्छा स्पृहाऽस्ति वर्तते । एतावता हे साधो ! प्रोक्तगुणैर्भृतं देहपोतकं न भङ्क्तव्यमिति काव्यार्थः ।। २० ।।

।। गाथा-२१ ।।

वैतालाकृतिमर्द्धदग्धमृतकं दृष्ट्वा भवन्तं यते ! ।
यासां नास्ति भयं त्वया सममहो जल्पन्ति चेत्प्रत्युत ।
राक्षस्यो भवने भवन्ति वनिता मामागता भक्षितुं ।
मत्वैव प्रपलायतां मृतिभयात् त्वं तत्र मा स्था क्षणम् ।। २१ ।।

व्याख्या- हे यते ! अयि जितेन्द्रिय ! वैतालो लोके भयङ्करूपस्तद्वदाकृतिराकारं यस्य स वैतालाकृतिस्तं तादृशं भवन्तं दृष्ट्वा त्वामवलोक्य यासां स्त्रीणामर्थात् वृषस्यतीनां भयं साध्वसं नास्ति न विध्यते । कथम्भूतं भवन्तं ? अर्द्धदग्धमृतकं किञ्चिद्प्लोषितप्रतीतसदृशाङ्गं । अहो इत्याश्चर्ये त्वया भवता समं सार्द्धं चेद्यदि ताः स्त्रियः प्रत्युत इत्युक्तविप्रतारणार्थेऽव्ययं, किमिति यासां भयस्थानात्पलायनं संजागटीति तत्पलायनमास्तां, त्वया सार्द्धं निःशङ्कतया जल्पन्ति वदन्ति भवने गृहे विजन इति गम्यते । भवन इत्यनियतपदमन्यत्र गिरिकन्दरागहनादिष्वपि ज्ञातव्यं । तत्र वनिता उत्कटकामा राक्षस्या इवेति शेषः भवन्ति । राक्षसीनां मृतकं भक्ष्यमित्याह मां भक्षितुमागता मां प्रतिजग्धुं समेता, अर्थात् मत्संयमजीवितं विनाशयितुमुपस्थिता एवं पूर्वोक्तप्रकारेण मत्वा ज्ञात्वा भवान् प्रपलायतां ततस्स्थानात् प्रणश्यतामिति भावः।

यदुच्यते-

मा ज्ञासीर्वनितामियं मम वशा, के केऽनया वञ्चिता ।
यस्याधःपतिता वदेत्तमपि सा दृष्टो न चान्यो नरः ।।
मुक्त्वा तं य यथा रमेत सततं सर्वैः समं स्वेच्छया ।
किं भो मूढ ! नर ! विदन्तु मनसा चैषा मदीया ध्रुवं ।।

कुतो मृतिभयात् स्वप्राणनाशभीतितः, तत्र वनितोपलक्षिते स्थाने क्षणं नाडिकाषष्टांशमात्रमपि त्वं मा स्था मा तिष्ठेति काव्यार्थः ।। २१ ।।

।। गाथा-२२ ।।

मा-गास्त्वं युवतीगृहेषु सततं विश्वासतां संशयो ।
विश्वासे जनवाच्यता भवति ते न स्यात्पुमर्थं ततः ।।
स्वाध्यायानुरतो गुरूक्तवचनं शीर्षे समारोपयन् ।
तिष्ठ त्वं विकृतिं पुनर्वज्रसि येद्यासि त्वमेव क्षयं ।। २२ ।।

व्याख्या- युवतीनामग्रहेष्टरजसां प्रत्यग्रनिर्गतकुचानां प्रोषितभर्तृकानां त्यक्तकुलह्रियां गृहेषु धामसु सततमनारतं विश्वासतां त्वं मा गाः मा गच्छार्थात् तत्र बैश्वास्यं मा कार्षीरिति भावः । स्त्रीविलसितं चरितं गहनमत्रोदाहरणं कथेयः-

एकस्मिन्नगरे कस्यचिद् वृद्धश्रेष्ठिनो द्वितीयवारोढा वधूरतीव पांशुला स्वभर्तुः पार्श्वाद्यथेष्टं काममनासदयन्ती आरामे नित्यं यक्षं सेव्यमाना पुष्पधूपाद्यार्च्यमाना च व्यक्तीत्थं हे गुह्यक । "मे पतिं बधिरं गताक्षं कुरु" त्वत्सेवाफलमेतावदेव याचे । एकदाऽऽरामाध्यक्षया पुष्पावचायिन्या तानि प्रच्छन्नतया श्रुतानि । तया श्रेष्टिपुरतस्तद्भार्यावचांसि ज्ञापितानि । तदा श्रेष्ठिना स्त्रीचरितमजानता सैव पृष्टा किं मया क्रियेत् ? तदा तयैव स्त्रीचरितोपलक्षितयोक्तं हे श्रेष्टिन् ! प्राप्तस्त्वमेवं प्रोच्या "अद्याहं सम्यग्तया न पश्यामि न शृणोमीति" ततोहं त्वदुपकृतये भव्यं विद्यास्ये, श्रेष्ठिनोक्तं तथेति । तदा साऽऽरामिका तत्पूर्वं यक्षपृष्ठे स्थिताऽऽसीत्, ततः श्रेष्ठिवध्वागतायां पूर्वोक्तविधिना सेव्यमानायां यक्षभाषयोवाय सा पुष्पावचायिनी "यथेष्टं वृणु यथेष्टंवृणु मार्गय मार्गयं तुष्टोऽस्मि त्वत्सेवया" तदा त्वया स्वेप्सितं मार्गितं, तदोक्तं भव्यं भव्यं परमेवं क्रियाः "सदशनैसद्वचनैस्सद्वस्त्रैश्शय्यासनादिभिस्तु तत्तुष्टिं विधेयास्त्वदुक्तं भविष्यतीति याहि" । अतो तुष्ट्वा स्वगृहे जगाम । ततो द्वितीयदिने श्रेष्ठी प्रातरेवं जगाद हे प्रिये ! अद्याहं सम्यग् न शृणोमि न पश्यामीति किं ज्ञायते ? तदान्तर्तुष्टतया बाह्यशोकत्वेन सोवाच हा कांत ! किं जात ? मंदभाग्याहं किं करिष्ये यदि तव शरीरे किमपि दुष्टं जातं, तदा मे मरणमागतं किं बहुनोक्तेन पतिरेव परमेश्वरो नारीणामित्युक्तत्वात् । तदा श्रेष्ठी प्राह सत्यं, परं कर्मगत्या अग्रे किं बलं । त्वं सुकुलीनाऽसि मम यादृतादृक्क्रिधस्य सेवां करिष्यसीति । ततो विशेषतस्सा

सिताज्यमयभोजनेन पुपोष । कतिचिद्दिनातरं स वक्ति स्म हे प्रिये ! अहं तु स्थंभ इव किमपि न शृणोमि नापि पश्यमि, तदा छद्मशोकेन बह्वाक्रंदन चकाराऽथ च पुपोष । अतो परं सा निःशंका जाता, ततः सोपपतिमाकार्य भोगान् भुङ्क्ते स्म । तदा स उपपति प्राह त्वदीयपतेश्च का वार्ता ? सोवाच निर्भयेन तिष्टाऽत्र, अयं च न पश्यति नाकर्णयति महाशब्दैरपि । कतिचिन्मासाः स्वपत्नीचरितं पश्यता निर्गमिता, ततः सरसाहारैः श्रेष्ट्यपि बलिष्टोऽजनि । चैकदोपपतिं सुरतं सेव्यमानं वीक्ष्य जारं प्रति स्थूलयष्ट्या जघान हे दुष्ट ! मद्गृहे नित्यमेव मे पश्यमः सतोऽनाचारं करोषि । तदा तयां स्त्रीचरितं विलसितं=शीघ्रमुत्थाय नानाभेषजप्रसेविकां तत्करे दत्वोवाचोच्चैः रवेण सा "भो लोका ! पश्यतु पश्यतु चक्षुर्वार्त्तार्थं नेत्रसमाधिहेत्वर्थमाकारितं वैद्यं यथा करोति मे पतिः निर्मंतुकमेनं [? निर्हेतुकमेनं] निर्भत्स्यते" इति लोकाः समागत्य श्रेष्टिनं प्रति सर्वेऽपि चैकगिरा वदंति "भवादृशामेवं युज्यते ? सतीयं भवत्परिष्टिकरा-ऽवलोक्यते"। सर्वेषां प्रतिवचो दातुमशक्यत्वान्मौने स्थितः, तदा लोकैरुक्तः-

पंचासावोलीणाच्छठाणा तुणजंति पुरूसस्स रूवाणा
वयसा उहिरि सत्तोदारया चैव ।। इति स्त्रीचरितं ।।

अतो हे मुने ! युवतीगृहेषु मागाः, चेद्गच्छसि तदा विश्वासे भवत इति सेषः संशयः संदेहरस्यात् । अपि च ते तव जनवाच्यता लोके विगानं भविष्यतीति भावः । ततः स्थानात्पुमर्थं पुरूषार्थं न स्यात् भवेत् तर्हि किं कर्तव्यमित्यत आहः- गुरूक्तवचनमर्थाज्जिनोक्तवाक्यं शीर्षे मस्तके समारोपयतु अर्थादाराघयन् त्वं तिष्ट किंभूतस्त्वं ? स्वाध्यायानुरतः स्वाध्यायः पंचघा वाचनाप्रश्नपरिवर्तनानुप्रेक्षाधर्म-कथास्तत्रानुरतो मग्न एव विचरतु । पुनश्चेद्यदि विकृतिं व्रजसि भूयो विकारं भजसि तदा त्वमेव क्षयं यासि साधुत्वात्त्वमेव विनश्यसीति काव्यार्थः ।। २२ ।।

।। गाथा-२३ ।।

कि संस्कारशतेन विड् जगति भो काश्मीरजं जायते ।
किं देहः शुचितां व्रजेदनुदिनं प्रक्षालनादम्भसा ।।
संस्कारो नख-दन्त-वक्त्र-वपुषां साधो त्वया युज्यते ।
नाकामी किल मण्डनप्रिय इति त्वं सार्थकं मा कृथाः ।। २३ ।।

व्याख्या- भो साधो ! जगति लोके विड्-पुरीषं संस्कारशतेन सुगन्धकरणोपाय-लक्षेणाऽपि इति गम्यते काश्मीरजं किं जायते वाल्हीकमयं किं भवेदपि तु नैव । दृष्टान्तामभिधाय दार्ष्टान्तमाह-देहो वपुरम्भसा पानीयेनानुदिनं निरन्तरं प्रक्षालनादपि आप्लवविलेपनादपि । किं शुचितां पवित्रतां व्रजेत् भवेत् ? अपि तु नैव । हे साधो ! अतो नख-दन्त-वक्त्र–वपुषां कामाऽङ्कुश-मल्लकास्यांगांनां संस्कारं-समार्जनमुपलक्ष-णत्वात्पोषणादिकं त्वया भवता युज्यते-ऽर्थात् श्लाघ्यते ? अपि तु न । कथमित्याहः-कि-लेति सत्ये अकामी अनभाकोवा(?) अमदनेच्छुः मण्डनप्रियो न वर्यः प्रसाधन-चन्द्रककस्तूरिकादि वल्लभोऽभिलाषी न भवेदिति शेषः । इति पूर्वोक्तप्रकारेण त्वं सार्थक देहं शरीरमिति सेषः । मा कृथा मा कार्षीरर्थादिमं देहं सखायं मा कुरु इति काव्यार्थः ।। २३ ।।

।। गाथा-२४ ।।

आयुष्यं तव निद्रयार्द्धमपरं चायुस्त्रिभेदादहो ।
बालत्वे जरया कियद्व्यसनतो यातीति देहिन् ! वृथा ।।
निश्चिन्त्यात्मनि मोहपाशमधुना संच्छिद्य बोधासिना ।
मुक्तिश्रीवनितावशीकरणत्वचारित्रमाराधय ।। २४ ।।

व्याख्या- हे देहिन् ! तव भवत आयुरेवायुष्यं भवज्जिवितं अर्द्धं विभागः यथा कस्यचिच्छतवर्षायुषोऽर्द्धं पञ्चाशत् वर्षाणि भवन्ति तदायुर्निद्रया प्रमीलया याति । च पुनरपरं शेषमायुरहो इत्याश्चर्ये त्रिभिदा त्रिभागतो यातीति शेषः । तथाह-बालत्वे शैशवे, जरया विश्रसया, कियदायुर्व्यसनतो द्युतादिभिः कष्टतो वा हे देहिन् । वृथा यातीति भावः । आत्मनि स्वदेहे एवमिति शेषः, निश्चिन्त्य विचार्याऽधुनेदानीं बोधासिना ज्ञानचन्द्रहासेण मोहस्य अज्ञानस्य पाशमिव पाशं मोहपाशं संच्छिद्य सर्वथा त्रोटयित्वा, किमर्थमित्याह-मुक्तेर्महोदयस्य श्री शोभा-ऽनन्तज्ञानमयालक्ष्मीर्वा सा मुक्तिश्री सैव वनिता ललना तस्या वशीकरणत्वे संवननहेतुत्वे चारित्रं सर्वविरमणरूपं यत्तन्मुक्तिश्रीवनितावशीकरणत्वचारित्रं आराधय संसाघयेति भावः । अन्योऽपि यः संसारे स्त्रीप्रियो भवति स नानाविघमन्त्र-तन्त्रादिभिर्वशीकरणोपाये वर्तत इति काव्यार्थः ।। २४ ।।

।। गाथा-२५ ।।

वृत्तैर्विंशतिभिश्चतुभिरधिकैः सल्लक्षणेनान्वितं ।
ग्रंथं सज्जनचित्तवल्लभमिमं श्री मल्लिषेणोदितं ।।
श्रृत्वात्मेन्द्रियकुञ्जरान्समटतो रून्धन्ति ते दुर्जयान् ।
विद्वांसो विषयाटवीषु सततं संसारविच्छित्तये ।। २५ ।।

व्याख्या- चतुर्भिरधिकैर्विंशतिर्भिवृत्तैश्चतुर्विंशतिकाव्यैरिमं सज्जनचित्तवल्लभं ग्रंथं पूर्वोक्तस्वरूपं श्रीमल्लिषेणेन गुरुप्रतिबोधार्थं सुशिष्येण उदितं भाषितं श्रीमल्लिषेणोदितं । किम्भूतैः काव्यैः व सत्शोभनं लक्षणं तेन अन्वितैः सहितैः सल्लक्षणान्वितैरत्राऽलुक्समासः । इमं ग्रन्थं श्रुत्वा-ऽऽकर्ण्य ते विद्वांसः पंडिता विषयाटवीषु पञ्चेन्द्रियत्रिविंशतिविषयकतारेषु समटतः आत्मनि भ्रमतः इन्द्रियाण्येव कुञ्जरान् स्तम्बेरमांस्तान् दुर्जयान् दुःखेन जीयंत इति दुर्जयान् तान् प्रतिरुन्धन्ति निरोधयन्ति किमर्थं संसारविच्छित्तये सततं निरन्तरं संसृतिविमोचनाय यः साधुः संसारभोगभिलाषी सन् तपस्तप्यते तस्य भवान्तं दुःखं । यदुक्तं सिद्धान्ते-"नो इहलोट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा" इत्यादिवचनात् । अतो मुक्त्यंगनालिंगनतत्परेण साधुना तपस्सत्संयमक्रियाऽनुष्ठानप्रमुखं केवलं मोक्षार्थमेव कर्त्तव्यमिति काव्यार्थः ।। २५ ।।

।। प्रशस्ति ।।

श्रोतव्या सुजनैर्जनैरनुदिनं कामौघनिर्वृत्तये ।
ग्रन्थे सज्जनचित्तवल्लभवरे शक्यानुसारेण च ।।
भव्येयं मुनिनेतृसिंहकविना वृत्तिः कृता भावतः ।
शोध्यैषा कृतिभिः स्वभावसरलैः सल्लोकसेवान्वितैः ।।

।। इति श्री सज्जनचित्तवल्लभस्य वृत्तिः संपूर्णाः ।। शम् ।।

।। श्री चिंतामणी पार्श्वनाथाय नमः ।।

श्री आर्द्रकुमाररास

❖ दिव्याशिष ❖

अध्यात्मयोगी प. पू. आचार्य भगवंत श्रीमद्विजय कलापूर्णसूरीश्वरजी म.सा.

❖ आशीर्वाद ❖

गच्छनायक प. पू. आचार्य भगवंत श्रीमद्विजय कलाप्रभसूरीश्वरजी म.सा.

प. पू. आचार्यदेव श्रीमद्विजय कल्पतरुसूरीश्वरजी म.सा.

मातृवत्सला सा. नर्मदाश्रीजी म.सा.ना शिष्या प्रवर्तिनी

सा. नंदाश्रीजी म.सा.

❖ संशोधक ❖

प. पू. आ. भ. तीर्थभद्रसूरीश्वरजी म.सा.

❖ संपादिका ❖

सा. नयदर्शनाश्रीजी म.सा.ना शिष्या

सा. नम्रनिधिश्रीजी तथा सा. नम्रगिराश्रीजी

प्रस्तावना...

अवसर्पिणी जेवा पडता काल ना प्रभावे समय ना परिवर्तन साथे बुद्धि-मेधाशक्तिनो ह्रास थतो रह्यो. संस्कृत-प्राकृत भाषानो अभ्यास मर्यादित वर्गमां रह्यो. सामान्य जन ने शास्त्रीय पदार्थोनो सरळता अने सुगमताथी बोध थाय ए हेतुथी मध्यकालीन युगना (सं. १४०० थी १८००) अनेक विद्वान कविओए मारुगुर्जर भाषामां स्तुति-स्तवन-सज्झाय-रास-चोपाई-हरीयाळी-छंद-फाग-सवैया-गहूली वगेरेनी रचना करी छे. तेमां तपागच्छ, अचलगच्छ, खरतरगच्छ, पार्श्वचंद्रीयगच्छ वगेरे अनेक गच्छना साधुमहात्मानुं योगदान छे.

अप्रगट एवी प्राचीन कृतिओने लिप्यंतर करी प्रगट करवानो पुरुषार्थ कर्यो छे. भिन्न-भिन्न काले रचायेली भिन्न-भिन्न कर्ताओनी एक ज विषय उपरनी कृतिओ उपस्थित छे. भक्ति ने मैत्री जेवा गरिष्ठ गुणोनुं उद्दान जे कथामां छे ते "आर्द्रकुमार रास" अहीं प्रस्तुत करवामां आवे छे. रास समजवामां सुगमता रहे ते हेतुथी तेनो भावार्थ दरेक ढाळ पछी बतावामां आव्यो छे.

आ रासना रचयिता पूज्य श्री न्यानसागरजी म.सा. छे. तेओ अंचलगच्छना पूज्य श्री गुणरत्नसूरीश्वरजी म.सा.नी पाटे थयेला श्री क्षमारत्नसूरि म.सा., तेमनी परंपरामां थयेल श्री गजसागर -> श्री ललितसागर -> श्री माणेकसागरना शिष्य छे.

प्रस्तुत रासना कर्ता श्री न्यानसागरजी अने ज्ञानसागरजी बंने एक ज जणाय छे. कोई ठेकाणे तेमना नामनो उल्लेख ज्ञानसागरजी पण जोवा मळे छे. तेओ श्री अंचलगच्छीय श्री गुणरत्नसूरिजीनी पाटपरंपरामां थयेल छे. तेम प्रशस्तिमां उल्लेख कर्यो छे. तेमनो विशेष परिचय तेमज तेमना रचेला ग्रंथोनो उल्लेख जोवा मळतो नथी.

प्रस्तुत रासनी रचना पूज्य न्यानसागरजी म.सा. ए विक्रम संवत १७२७ नी चैत्र सुद तेरस, शनिवारना दिवसे लघुवटपद्र गाममां धवलधिंगड श्री गोडीजी पार्श्वनाथ दादाना सांनिध्यमां पूर्ण करी. आ रासमां १९ ढाळ, सोरठा दूहा तेमज ३०० कडी छे.

रासनी शरूआतना दुहामां कवि श्री पोते ज जणावे छे के आ कथानो संपूर्ण अधिकार सूयगडांग वृत्ति तेमज उपदेशचिंतामणी ग्रंथमां छे. रासनी अंतिम ढालमां (१९/४) पण तेनुं निदर्शन कर्युं छे.

"श्री सोहमसामि कहिउं, जंबु आगलि सार;
आर्द्रकुमार ऋषिनउं भलउं, सूयगडांगई अधिकार." ४

"ते हुं आणीश तिहां थकी, वृत्ति थकी सुविशेषि;
उपदेशचिंतामणी प्रमुख, ग्रंथचरित्र सब देखि" ५

श्री सूयगडांगसूत्रनी वृत्ति, ए अधिकार वखाणिउ,
वली उपदेशचिंतामणी मांहिथी, मे इंहा विस्तार आणिउ रे...४

१) श्री सूत्रकृतांग सूत्र ए ११ अंगमां बीजुं अंग छे. तेमां बे श्रुतस्कंध अने ३६,००० पद छे. तेना टीकाकार श्री शीलंकाचार्य छे. प्रस्तुत कथानो अधिकार बीजा श्रुतस्कंधना "आर्द्रकीय" नामना छठ्ठा अध्ययनमांथी लेवामां आव्यो छे.

२) "उपदेशचिंतामणि" नामनो अतिमनोहर ग्रंथ विक्रम संवत १४३६ मां रचायेलो छे. आ ग्रंथनी रचना जैन आगमोना रहस्योना पार पामेला तथा अतिअद्‌भुत कवित्वशक्ति धारण करनारा श्री जयशेखरसूरिजीए करेली छे. तेओ अंचलगच्छमां थयेला श्री महेंद्रप्रभसूरिजीना त्रण शिष्योमांना वचला शिष्य हता.

तेओ लगभग विक्रम संवत् १४२० थी १४७५ सुधीना समयमां विद्यमान हता. ते दरम्यान तेमणे प्रबोधचिंतामणी, जैनकुमारसंभव महाकाव्य, धम्मिलचरित्र तथा उपदेशचिंतामणी (मूळ तथा टीका सहित) नामना ग्रंथो रचेला छे. आ ग्रंथोनी रचना जोतां तेमनुं अध्यात्मज्ञान, आगमोनुं ज्ञान, साहित्यज्ञान अने तेमनी कवित्वशक्ति अति अद्‌भुत जणाय छे.

आ ग्रंथ नृसमुद्र नामना नगरमां रचायो छे. तेनुं ग्रंथप्रमाण बार हजार चोसठ (१२,०६४) श्लोक प्रमाण छे. अति विस्तृत ग्रंथने चार अधिकारमां विभागीकरण कर्युं छे.

१) जिनधर्मप्रशंसा अधिकार २) धर्मसामग्रीभणनाधिकार

३) देशविरति अधिकार ४) सर्वविरति अधिकार

बीजा अधिकारना १७ मी गाथामांथी प्रस्तुत कथा लेवामां आवी छे.

उपन्नोऽवि अणारिय-देशे, जं अद्दओ वयं पत्तो ।
सो बुद्धिमहानिहिणो, महिमा खलु अभयमित्तस्स ।। १७ ।।

ते कथानुं विस्तृत वर्णन ग्रंथकारे १९९ पद्यश्लोकमां कर्युं छे तेनो अंतिम श्लोक आ प्रमाणे छे.

अनार्यदेश प्रभवोऽपि मंक्षु, मोक्षं ययावार्द्रकुमारसाधुः ।
सौहार्दतः श्रेणिकनन्दनस्य, कार्या ततः साधुभिरेव मैत्री ।।

३) कलिकालसर्वज्ञ श्री हेमचंद्राचार्यरचित "त्रिषष्टि शलाकापुरुष महाकाव्य" ना १० पर्व छे. तेमां दशमां पर्वना सातमां सर्गमां श्लोक १७७ थी ३५६ सुधी संस्कृतपद्यबद्ध अनुष्टुप् छंदमां १८० श्लोकप्रमाण आर्द्रकुमारनुं चरित्र छे.

"इतश्च मध्येऽम्भोराशि, पातालजावनोयमः ।
आर्द्रको नाम देशोऽस्ति, पुरं तत्रार्द्रकाभिधम् ।।"

प्रस्तुत आर्द्रकुमारना रासमां कविए आर्द्रकुमारनी पत्नीनो "धनवती" तरीके उल्लेख कर्यो छे. ज्यारे काव्यमां तेमनो "श्रीमती" तरीके उल्लेख कर्यो छे.

तदुपरांत श्री जयकीर्तिसूरिकृत "शीलोपदेशमाला"मां आ कथानुं वर्णन छे. तेमज श्री रत्नशेखरसूरिविरचित "श्राद्धविधिप्रकरण" ग्रंथनी स्वोपज्ञ टीका मां त्रीजा श्लोकमां श्रावकधर्मने योग्य चार गुण बताव्या छे. तेमां प्रथमगुणना द्रष्टांतमां आर्द्रकुमारनुं कथानक बतावेलुं छे. तेमज विविध संस्कृत-प्राकृत ग्रंथोमां अने अनार्य देशमां जन्मेल अने आर्यक्षेत्रमां आवी दीक्षा ग्रहण करी तेनुं वर्णन ज्यां पण होय ते स्थळे आर्द्रकुमारनुं दृष्टांत दर्शाववामां आव्युं छे.

सामान्यथी प्रचलित एवी आ कथाने अहीं वर्णवामां आवी छे. तेनो ए ज हेतु छे के आ रासमां आर्द्रकुमारना पूर्वभव साथे तेमना जीवननुं विस्तृत वर्णन करवामां आव्युं छे. चारित्रमां करेली विराधनाना केवां फळ मले छे, ते आ चरित्र द्वारा जाणवा मळे छे.

आ कथाने सज्झाय तरीके पण रचेली छे. विक्रम संवत् १७११ मां तपगच्छ गुरुराज श्रीविजयसेनसूरींदनी पाटे थयेला श्री विजयप्रभमुणिंद, तेमनी परंपरामां थयेल श्री जयसागर गणी-श्री जितसागरगणि श्री मानसागरजी ए आर्द्रकुमारनी सज्झाय रची छे. तेमां त्रण ढाल छे. कुल गाथा ५६ छे.

“शांतिकरण शांतिकरो, अचिरासुत अरिहंत:

तस पद पंकज सेवतां, लहीए सुख अनंत... १”

दान दीधुं विद्यातणुं, विद्यागुरु गुणवंत,
कीर्तिनो पण खप करी, मोटो कीयो मतिमंत.... २

तास तणे चरणे नमी, आणी अधिक उल्लास,
आर्द्रकुमार ऋषि गावतां, पहोंचे मननी आश... ३

❍ ❍ ❍

हस्तप्रत परिचय...

आ रासनी चार प्रत मळी छे.

प्रत नं-१ आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर-कोबा

प्रत नं.-२ श्री पुण्यविजयजी ज्ञानभंडार-लींच

प्रत नं.-३ श्री चंद्रसागरसूरि ज्ञानभंडार-उज्जैन

प्रत नं.-४ श्री कुमुदचंद्रसूरि ज्ञानभंडार-लींच

प्रत नं. १ अने २ कर्तानी स्वहस्त लिखित छे.

चारेय प्रतना पाठ जोतां जणाय छे के तेमां शब्द अने जोडणीनी असमानता छे. रासनी कडीना उल्लेखमां पण फेरफार छे. प्रत नं.१ ने मुख्य बनाववामां आवी छे. परंतु तेमां बे पेज नहीं होवाना कारणे प्रत नं.-३ मांथी तेनो पाठ लीधो छे.

प्रत नं.-१ नो परिचय - प्रत क्रमांक-१०३७०, कुल पत्र-७, दरेक पत्रमां पंक्ति-२१

प्रतमां अमुक स्थळे अक्षरोनो नाश थयेल छे. अक्षर नाना होवा छतां स्पष्ट छे. दरेक ढाल पछी सर्वगाथा-३०० नो उल्लेख करेल छे. स्वरनी प्रचुरता जणाय छे. शब्दनी पाछळ “ई” अने “उ” नो उल्लेख घणा प्रमाणमां छे. ग्रंथाग्र ४५१ छे.

आ प्रतनुं लेखन श्री धर्माचंद्र वडे करायुं छे. प्रतनी **आदि**मां ।।८०।। श्री गौडीराय नमः ।। लख्युं छे. अने **पुष्पिका** आ प्रमाणे छे. “संवत् १७३२ वर्षे भाद्रपद मासे कृष्णत्रयोदशी तिथौ चंद्रवासरे श्री अनहल्लपुरपत्तनमध्ये श्री विधिपक्षगच्छे

भट्टारक श्री गुणनिधानसूरीश्वराणां तत्छिष्य वाचक श्री पुण्यचंद्रगणि तत्छिष्य वाचकश्री माणिक्यचंद्रगणि तत्छिष्य वा. श्री सौभाग्यचंद्रगणि तत्पटे वा. श्री रयणचंद्रगणि तत्छिष्य श्री न्यानचंद्रगणिनां तद्विनेयमुनि धर्माचंद्रेणमिदं लिखितं स्ववाचनार्थम् ।। श्री ।।"

प्रत नं.-२ नो परिचय - प्रत क्रमांक-४१६, कुल पत्र-९०, दरेक पत्रमां पंक्ति-२१.

प्रतनी **आदि**मां ।।८०।। श्रीँ सरस्वत्यै नमः ।। लख्युं छे. अने **पुष्पिका** आ प्रमाणे छे – "संवत् १७८२ वर्षे वैशाष वदि १3 दिने पंडित श्री चतुरविजयगणि तत्छिष्य पंडित श्री विवेकविजयगणि तशिष्य श्री प्रमोदविजयगणि तत् शिष्य न्यानविजय लिखितं ।। वणोद नगरे शांतिनाथ प्रासादात् ।। श्री ।।"

प्रत नं.-३ नो परिचय - प्रत क्रमांक-१७००, कुल पत्र-१७, दरेक पत्रमां पंक्ति-१२

प्रतनी **आदि**मां ।। ८०।। श्री गुरुभ्यो नमः ।। लख्युं छे. अने **पुष्पिका** आ प्रमाणे छे – "संवत् १७२८ वर्षे सोमवासरे वैशाख वदि चउथि दिने । लावण्यलक्ष्मी वाचनार्थं ।। श्री ठः ।। कल्याणमस्तु ।।"

आ प्रत रासनी रचना पछीना वर्षमां ज लखाई छे.

अध्यात्मयोगीराज परम पूज्य गुरूदेव आचार्य भगवंत श्रीमद् विजय कलापूर्णसूरीश्वरजी म.सा.ना आशिष निरंतर वर्षी रह्या छे.

वर्तमान गच्छनायक, मधुरभाषी परम पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय कलाप्रभसूरीश्वरजी म.सा. तथा गच्छहितचिंतक परम पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय कल्पतरुसूरीश्वरजी म.सा. ना आशिष अने अनुज्ञापूर्वक प्रस्तुत रासनुं संपादन थई रह्युं छे. आ ग्रंथनुं संशोधन पूज्य आ. श्री तीर्थभद्रसूरीश्वरजी म.सा. द्वारा थयुं छे.

परम पूज्य कलाप्रभसूरीश्वरजी म.सा.ना आज्ञानुवर्तिनी मातृवत्सला प.पू. सा. नर्मदाश्रीजी म. साहेब तथा प्रवर्तिनी, सुदीर्घसंयमी प. पू. सा. नंदाश्रीजी म.सा.ना आशीर्वादथी तेमज सहवर्तिनी अभ्यासी साध्वीवृंदना सहकारथी आ कार्य पूर्णताने पाम्युं छे.

श्रावकवर्य, श्रीयुत, श्रुतोपासक बाबुभाई सरेमलजी शाह जेओ विविध ज्ञानभंडारोमांथी हस्तलिखित प्रतनी कोपी तेमज शब्दकोश, संदर्भ ग्रंथो मेळववामां अमूल्य सहायक बन्या.

देव-गुरुनी आज्ञाविरुद्ध के ग्रंथकारोना आशयविरुद्ध कोई प्ररूपणा थई गई होय तो तेनी क्षमायाचना करुं छुं.

सा. नयदर्शनाश्रीजी ना शिष्या
सा. नम्रनिधि तथा नम्रगिरा

श्री गुजराती जैन संघ, केनींग स्ट्रीट, कलकत्ता में संग्रहीत
सुवर्णमय हस्तप्रत इ. १४९० का हरिनैगमेषी देव का प्राचिन चित्र

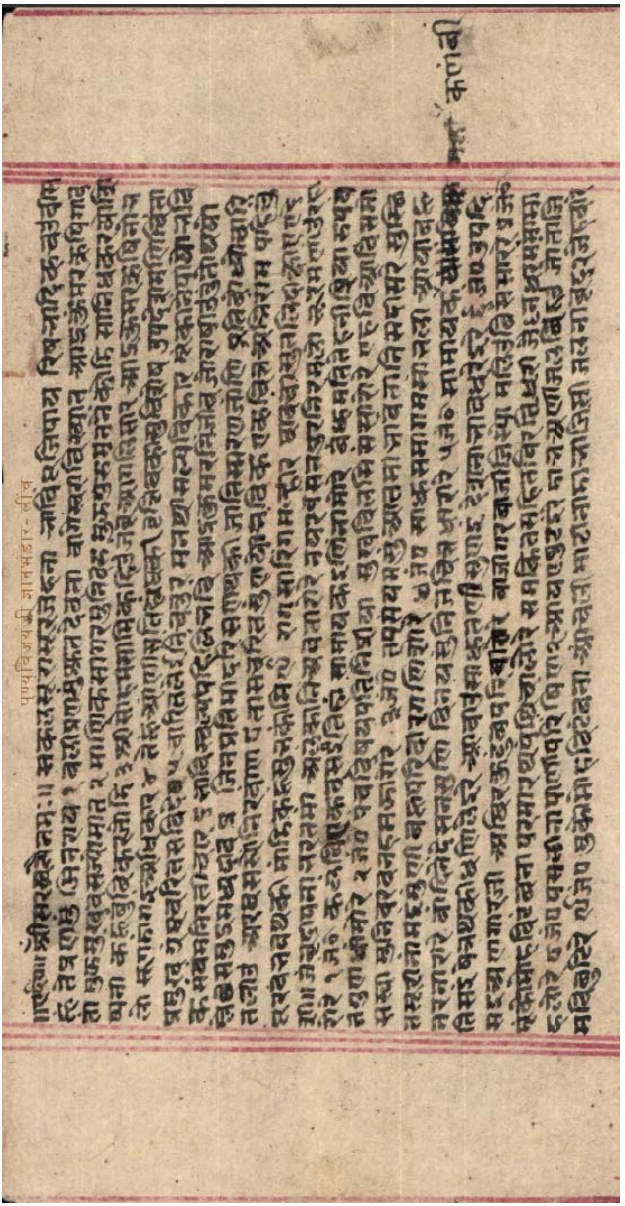

प्रत नं.-३ चंद्रसागरजी ज्ञानभंडार-उज्जैन (प्रथम पृष्ठ)

प्रत नं.-४ आ. कुमुदचन्द्रसूरिजी ग्रंथभंडार लींच (प्रथम पृष्ठ)

।। श्री चिंतामणी पार्श्वनाथाय नमः ।।
।। श्री पद्म-जीत-हीर-कनक-देवेन्द्र-कलापूर्ण-कलाप्रभसूरि- सद्गुरुभ्यो नमः ।।

श्री आर्द्रकुमार रास

दुहा

सकल सुरासुर जेहना, पूजइं भावइं पाय,
ऋषभादिक चउवीश हुं, ते प्रणमुं जिनराय... १

वली प्रणमुं श्रुतदेवता, वागेसिरी विख्यात,
आर्द्रकुमारऋषि गावतां, मुज मुखि वसज्यो मात... २

माणिक्यसागर मुनिवरु, मुज गुरु मननइ कोडि,
सांनिधि कर ज्यो शिष्यनी, कहुं छउं बेइ करजोडि... ३

श्री सोहमसामिं कहिउं, जंबू आगलि सार,
आर्द्रकुमरऋषिनउं भलउं, सूयगडांगइ अधिकार... ४

ते हुं आणीश तिहां थकी, वृत्ति थकी सुविशेषि,
उपदेशचिंतामणी प्रमुख, ग्रंथचरित्र सब देखि... ५

चारित लेइनइं चतुर, मनथी शल्यविकार,
मूकीनई पालो भविक, संयम निरतिचार... ६

भावसल्य पहिलइं भवइं, आर्द्रकुमारनइं जीव,
जउ राखीओ तुं तउ थयोउ, म्लेच्छ समुद्रमध्यदीवि... ७

जिनप्रतिमा दरिसण थकी, जातीसमरणि जाणि,
प्रतिबुधउ चारित्र लीओ, अरथ सरिउं निरवाणि... ८

तास चरित्र सुणिज्यो भविक, एकचित्ति अभिराम,
पहिलउं पूरवभव थकी, मांडी कहुं शुभकामि... ९

मंगलाचरण

दुहानी आ नव कडीमां कवि मंगलाचरण करतां कहे छे के, “सकल सुरेन्द्र, असुरेन्द्र, नरेन्द्र, देवेन्द्र चक्रवर्ती जेमना चरणोने निरंतर भावथी पूजा करे छे, एवा आ

अवसर्पिणीकाळना ऋषभदेव आदि चोवीश तीर्थंकर परमात्माना चरणोमां नमस्कार करुं छुं. केमके परमात्माना स्मरण, वंदन, पूजनथी कार्यनी सिद्धि थाय छे, विघ्नो नाश पामे छे, मनना मनोरथ पूर्ण थाय छे.

वळी, हे श्रुतदेवता ! सारभूत दया करो, वचननो विलास आपो. तारी प्रसन्नताथी अने वरदानथी मारी भाषा कल्पतरुनी शाखा जेवी तुं करी दे छे. तेथी रास रचती वखते मारी जीभ उपर वास करजो. तेमज संसार सागरमांथी उगारनार, जेमना उपकारनो बदलो चूकवी न शकाय तेवा परमोपकारी गुरुभगवंत श्री माणेकसागरजी नुं पण मनमां स्मरण करुं छुं. सांनिध्य करवा माटे बे हाथ जोडी प्रार्थना करुं छुं."

चरमतीर्थपति, शासननायक महावीरस्वामी परमात्मानी पाटे आवेला सुधर्मास्वामीए जंबुकुमारनी आगळ आर्द्रकुमार ऋषिनुं चरित्र संभळाव्युं छे. जेनो अधिकार सूत्रकृतांग आगममां छे. तेमज "उपदेश चिंतामणी" प्रमुख ग्रंथमांथी तेमनुं चरित्र बतावीश.

आर्द्रकुमार ऋषि पूर्वभवमां ग्रहण करेल चारित्रजीवनमां भावशल्यनी आलोचना करता नथी. ते कारणे अनार्यदेशमां म्लेच्छ तरीके जन्मे छे. अभयकुमारे मोकलेल जिनप्रतिमाना दर्शनथी आर्द्रकुमारने जातिस्मरणज्ञान थाय छे अने प्रतिबोध पामी, वैराग्यपूर्वक चारित्र स्वीकारी अंते सिद्धिगतिने पामे छे.

माटे, हे भव्यजीवो ! चित्तने एकाग्र बनावी रसप्रद, वैराग्यवर्धक आर्द्रकुमारनुं चारित्र पूर्वभवथी शरु करी कहुं छुं, ते सांभळजो."

ढाल-१

देशी-थावच्चासुत ले दीक्षा ए

जंबुद्वीपना भरतमां, अलकानई अवतरो रे,
नयर वसंतपुर निरमलो, भूरमणी उर हारो रे... जंबु १

कुलबी एक वसइ तिहां, सामायिक इणि नामो रे,
बंधुमती तेहनी प्रिया, रूपवती गुणधामो रे... जंबु २

पंचविषय पति नई प्रिया, सुख विलसइ संसारी रे,
एहवई आवी समोसर्या, मुनिवर वनह मझारी रे... जंबु ३

तप-संयमसिंउ आतमा, भावतां निशदिसो रे,
सुस्थितसूरि णमइ मुणी बहु परिवार गणीशो रे... जंबु ४

साधु समागम सांभळी, आया बहु नरनारी रे,
वांदीनई देशण सुणई, विनयसुं निज चित्तधारी रे... जंबु ५

सामायिक कुलबी तिसि, क्षेत्र थको घणि लेई रे,
आविउ साधु तणी सुणई, देशनभाव धरेई रे... जंबु ६

उपदेशई अणगारजी, अथिर कुटुंबपरिवारो रे,
बाजीगर बाजी जितिउ, मलिओ छइ संसारो रे... जंबु ७

मूको मोहविटंबना, परमारथ पंथ चालो रे,
समकितसहित विरति धरी, जैन धरममां माहलो रे... मूको ८

पसलिना पाणी परि, खिण खिण आय ए खूटई रे,
डाभअणीजलबिंदो, जोतां जेम विछूटई रे... मूको ९

माटीना भांडा जिसी, जलना बुद्बुद् जेहवी रे,
कायापणि जुओ कारमी, छई क्षणभंगुर एहवी रे... मूको १०

शडण पडण विधंसणा, धरम कहिउ जिनि एहनउ रे,
छई मलमूत्रनी कोथळी, म करउ गर्व देहनो रे... मूको ११

क्रोधादिक चारई कह्या, अंतरंग रिपु एहो रे,
उपशमआदि शस्त्रस्युं, छलि बलि जीत्यो तेहो रे रे... मूको १२

पुंठ न सुझई आपणी, किम सुझई परपुंठि रे,
परनिंदा करी प्राणीयउ, कां भरो पापनी मुठि रे... मूको १३

उपगारी नंदक इसिउं, परने पार उतारि रे,
ततिपराई जे करई, निज आतम किम तारि रे... मूको १४

धरम थकी धन संपजई, धरम थकी धनि भोगो रे,
धरम थकी सुख सरगनां, लहइ वांछित संयोगो रे... मूको १५

पहेली ढालई देशना, श्री गुरु इणिपरे दीधी रे,
न्यानसागर कहि ते सुणी, भवियण हृदयमां लीधी रे रे... मूको १६

आर्द्रकुमारनो पूर्वभव

जंबूद्वीपना भरतक्षेत्रमां पृथ्वीरूपी नारीना हार समान जाणे के इन्द्रनी अलकापुरी होय तेवुं वसंतपुर नामनुं नगर छे. ते नगरमां सामायिक नामनो कणबी रहेतो हतो. तेने रूपवती, गुणवती एवी बंधुमती नामनी स्त्री हती. पंचविषय स्वरूप सांसारिक सुखोने बंने भोगवता हता.

कोई वखते तप अने संयममां रक्त सुस्थित नामना आचार्यभगवंत नगर बहार उद्यानमां मुनिवृंद साथे पधार्या हता. हजारो नगरजनो तेमनो धर्मोपदेश सांभळता हता. एक दिवस आचार्य भगवंते वैराग्यसभर अमृतवाणीथी भव्यकमलने विकसित करवा हितकारी देशना आपवानी शरू करी.

देशना - "हे भव्यात्माओ ! बाजीगरनी बाजी जेवो आ संसार छे. कुटुंब, परिवार सर्व अस्थिर छे. माटे मोहविडंबना छोडी परमारथ पंथे प्रयाण करवुं. सम्यक्त्व सहित विरतिधर्म स्वीकारी जैन धर्ममां दृढ बनवुं. अंजलिमां रहेल पाणी तेमज घासना अग्रभाग पर रहेला पाणीनां बिंदु समान चंचळ आयुष्य छे. काया पण माटीना वासण जेवी अनित्य अने पाणीना परपोटानी जेम अस्थिर छे, क्षणभंगुर छे, मल-मूत्रनी कोथळी छे. माटे कायानो गर्व करवा जेवो नथी.

क्रोधादि चारे कषायो आत्माना अंतरंग शत्रुओ छे. तेने हणवा उपशमादि शस्त्रनो उपयोग करवो जोईए. परनिंदा अने पारकीपंचात करीने आत्माने तारी शकातो नथी. खरेखर, धर्म करवाथी धन वधे छे, भोगसामग्री मळे छे, स्वर्गना सुख अने ईच्छित फळनी प्राप्ति थाय छे." आ प्रमाणे गुरुभगवंतनी देशना श्री न्यानसागरे पहेली ढालमां बतावी. तेने हे भव्यजीवो ! तमे हृदयमां धरजो.

दुहा

प्रतिबोधउ सुणी देशना, सामायिक तिणि वारि,
करि जोडी गुरुनी कहई, तारि तारि प्रभु तारि... १

बंधुमती तेहनी प्रिया, साथइ मन संवेगि,
लिं चारित्र दयिता-पती, मोडी मयणनई वेगि... २

षड्आवश्यक आदिथी, भणी सूत्रसिद्धांत,
अनुक्रमई गीतारथ थया, सामायिक ऋषिसंत... ३

गुरुणी पासइ साधवी, बंधुमती सुविचार,
सूत्र भणइ मन मोदसुं, करइ भूपीठि विहार... ४

ढाल-२

देशी-आतम तेरे राजमई, राजमई मोहराय परधान

हवई गुरु साथइ अन्यदा, अन्यदा सामायिक अणगार,
फिरतउ फिरतउ आवीयउ, आवीयउ कोईक नगर मझार,
सुणो भवि सीखडी, विरुयउ मदनविकार सु... १

बंधुमती पण साधवी, साधवी ते करम संयोगि सु.
फिरती आवी तिण पुरईं, तिण पुरइ भवितव्यतानइ भोगि सु... २

सुस्थितसूरिनइं वांदिवा, वांदिवा आवी गुरुणी साथि... सु
सामायिक दीठी प्रिया, दीठी प्रिया न रहिउं निज मन हाथि सु... ३

पूरव विलसित सांभर्या, सांभर्या कामभोग सुविशेष, सु.
उलटी मनमथ दलघटा, दलघटा चिंतई फिरि फिरि देखि सु... ४

गुरुभाईनई इम कहइ, इम कहइ लाज त्यजी मुह फोडि सु.
ए मुज धरणी भोगवउं, भोगवउं इणि वाति फसी खोडि सु... ५

तिण साधवी जाई कहिउं, जाई कहिउ पहूतणी सनइ गुझ सु.
विकल थयुं विषयी धणु, विषयी घणउं एम कहई छई अबुझ सु... ६

तन्निसुणी कही महासती, महासती बंधुमतीनई ताम सु.
सुणी वच्छ शील ए खंडसि, खंडसि मूकी गुरुनी माम सु... ७

चिंतातुर थई चिंतवई, चिंतवई हा मतजाई शील सु.
शील थकी संकट टलई, संकट टलई लहीइ अविचल लील सु... ८

चरित्र व्रत भंग कर्या थकी, कर्या थकी करवउ आतमघात सु.
ईम चिंती अणसण लीउं, अणसण लीउं साधवीइं परभात सु... ९

आराधी संलेखना, संलेखना ते पहूती परलोक सु.
बंधुमती शुभ शीलथी, सुख विलसइ सुरलोक सु... १०

न्यानसागर कहिउ सांभळउ, सांभळउ कही बीजी ढाल सु.
पूरव वरत संभारतां, संभारता एम वधई झंझाल सु... ११

सामायिकनी दीक्षा

देशना सांभळी सामायिक प्रतिबोध पाम्यो, करजोडी गुरुने कहे छे के, "मने आ भवसागरमांथी तारो." तेनी पत्नी बंधुमतीना मनमां पण संवेग थयो. शुभदिवसे शुभलग्ने आचार्य भगवंतना चरणोमां जीवन समर्पित करी दीधुं. बंने विधिपूर्वक चारित्र ग्रहण करे छे. सूत्रसिद्धांत भणे छे. अनुक्रमे सामायिक अणगार गीतार्थ थया. बंधुमती पण साध्वीओनी साथे सूत्र भणे छे अने पृथ्वी पर विहार करे छे.

हवे एकवार गुरुनी साथे विहार करतां-करतां सामायिक अणगार कोई नगरमां आव्या. भवितव्यताना योगे ते समये बंधुमती साध्वी गुरुणीनी साथे ते ज नगरमां आवी. सुस्थितसूरिने वांदवा साध्वीजी भगवंत शिष्याओ साथे उद्यानमां गया.

सामायिक अणगारने ते बंधुमती साध्वीने जोवाथी पूर्वनी विषयक्रीडा याद आवी. तेनामां अनुरक्त थयो. ज्यारे ते साधु पोताना व्याकुल थयेला मनने जेम-जेम रोकवा लाग्या तेम तेम खेतर तरफ मदोन्मत्त सांढनी जेम तेनुं चित्त साध्वी तरफ अधिक दोडवा लाग्युं. ते मुनिए पोताना चित्तनुं चपलपणुं बीजा मुनिने कह्युं. एटले ते बीजा मुनिए कह्युं "अरे साधो ! श्रुतना समुद्र एवा तमने आ प्रमाद केवो ? काम शल्य छे, काम विष छे... वळी काम विषधर सर्पनी उपमावालो छे, कामनी ईच्छा करनारा एवाय पण कामने नहि पामेला जीवो दुर्गतिने पामे छे." ते साधुए पण कह्युं के "अरे ! हुं शुं करुं ? मारा नेत्रनी आगल आवेली ए साध्वी मंकोडी जेम फलने पोताना तरफ खेंचे छे तेम अधिकपणे मारा मनने खेंचे छे."

पछी ते साधुए गुरुणीने कह्युं अने गुरुणीए बंधुमतीने कह्युं. अहो ! वायुथी उडेली रजनी जेम साधुने रक्षण करवा योग्य कार्य विस्तार पाम्युं. बंधुमती पण विचार करवा लागी के-सर्व प्रकारे अनर्थनी हेतु एवी मने धिक्कार थाओ, के जे मे धुमाडानी लहेरनी पेठे मुनिना मनने मलीन कर्युं. शील पाळवाथी ज संकट टळे छे. हुं जीवती छतां आ साधुनो शीलात्मा नहि जीवे. माटे मारे मृत्यु पामवुं सारुं छे. एम बंधुमतीए गुरुणीने कह्युं.

उत्तम बुद्धिवाली ते बंधुमती पोताने उंचे बांधीने अर्थात् गळे फांसो खाईने अनशनथी स्वर्गे गई. आ प्रमाणे श्री न्यानसागरे बीजी ढालमां जणाव्युं के, पूर्वना विषयविलासो याद करवाथी झंझाल वधे छे.

दुहा

वरतभंगना भय थकी, साधवी करिउं काल,
सामायिक जाणी कहि, धिग् विषय झंझाल १

महानुभाव मोटी सती, निज जीवितनउं त्याग,
करी शील राखिउ भलउं, धन्य धन्य महाभाग २

जो मुज कारणि आरया, अहो अहो मूई एह,
तो हुं पणि अणसण करुं, इम चिंतीनई तेह ३

कामभोग वांछा करी, दीपिउ विषयविकार,
ते पातक अणपडकमिं, पचख्या चारइ आहार ४

अणसण पाली अतिभलु, सामायिक अणगार,
काल करी शुभ ध्यानथी, पामिउ सुर अवतार ५

ढाल-३

(राग-गोडी) देशी – वेसर गई रे गमाई म्हारि न्हानडि देउ रि पाई लाल...

हवई सुणउ सायरमांहि, एक आर्द्रनामि देश त्यांही, लाल छई वारु
आर्द्रनामि अनारय राजा, करई राजा तिहां अधिक दिवाजा, लाल... छ.
धणकंचणपूरउ छ. जाणि रयणि सनूरउ छ... आंकणी १

अद्दानामि तस राणी, जाणे रूपइं इंद्राणी, लाल छ.
कणबीनो जीव जे देव, चवी देवलोकथी हेव, लाल छ... ध... २

तेहनी कूखइं अवतरीओ, ते मोती सीपइ संचरीउ, लाल छ.
पसवीउ पउरण मासे, दीधां धवलमंगल आवासे लाल छ... ध... ३

करि ओच्छव आर्द्रकुमार, दीउं नाम ईसिउं सुविचार, लाल छ.
भणी सुरगुरुनो अवतार, थया सकल कला अवतार लाल छ... ध... ४

अनुक्रमि योवनवय आयउ, बहु राजसुता परणायउ, लाल छ.
एक दिवस पितानइ पास, बइठो छे कुमार उल्लास लाल छ... ध... ५

एहवे आवी ततकाल, नृप श्रेणिकनी रसाल, लाल छ.
मणइ माणीक गयवर घोडा, वर वृषभ वस्त्रना जोडा, लाल छ... ध... ६

सुंदर रथ नइं सुखयाल, जडावी अमुल्यक ढाल, लाल छ.
इत्यादिक आगलि धामी, प्रणमइ नृपने सिरनामी, लाल छ... ध... ७

हेज बनइं अतिसनमानइं, छइसारी निरुपम थानइ, लाल छ.
पूछइ नृप निरत नेहइ, कहो कुशल छई नृप गेहइ, लाल छ... ध... ८

राजादिक परिकर लेइ, कहो सुखस्याता छे देहइ, लाल छ.
कुल तुम्हे सुभचिंता कुशलभाण, छइ सुविशेष कल्याण,
सुण सामी राजेसर रूडा चतुरमां सुडा... ९

तव आर्द्रकुमार कहे परभुजी, कुण मित्र छई कहो विभुजी, लाल छ.
तव नृपे कहि श्रेणिक नामी, ते मगध देशनउ स्वामी, लाल छ... ध... १०

तिण साथई प्रीत अम्हारई, परियागति ते पण धारइ, लाल छ.
नृप श्रेणीकनो परधान, जे आव्या छे तिण थान, लाल छ... ध... ११

तस पूछइ कुमर एकांति, मैत्री कश्यानइं ततइं, लाल छ.
कहि सुपुरुष कहेनि सुल, ते हमइं छइं लायक मइलई लाल छ... ध... १२

देइ मरकलडो ते बोलइं, तेहना सुतनी कुण तोलि, लाल छ.
अभयकुमर गुणवंत, सोभागी ते अतिसंत, लाल छ... ध... १३

नृप श्रेणीकना परधान, छई पांचसि सुगुणनिधान, लाल. छ.
सविहूमां मंत्री मुख्य, ते अभयकुमार छई दक्ष, लाल छ... ध... १४

करइं राजकाजनी चिंता, नृप विलसि सुख निश्चिंत, लाल सु.
कहइं न्यानसागर ए ढाल, त्रीजी थई अमीअ रसाल, लाल छ... ध... १५

चारित्रविराधना अने स्वर्गगमन

व्रत ग्रहण कर्या पछी पालन नहि करवाथी चारित्रनी विराधना थाय छे. भवांतरमां चारित्र जल्दी उदयमां आवतुं नथी. ते विचारी भवभ्रमणमां भीरू एवा ते साध्वी काळधर्म पामे छे. आ घटनानी जाण सामायिक अणगारने थाय छे.

विष समान विष्टाने धिक्कारता सामायिक अणगार विचारे छे, "अहो ! ए अबलानुं धैर्य आश्चर्यकारी छे. जे आ प्रमाणे ते मृत्यु पामी. वळी, हजी सुधी जीववानी आशा राखनारा पुरुषजाति एवा मारा नपुंसकपणाने धिक्कार थाओ." पछी गुरु पासे ते पापनी आलोचना लीधा विना अनशन लईने काळ करी, शुभध्यानथी ते ज वखते स्वर्गे गया.

अनार्यदेशमां जन्म

समुद्रनी मध्यमां, कूवा अने बगीचाओथी मनोहर जाणे मुद्रा रहित समुद्र संबंधी श्रेष्ठ भंडार समान श्रीमान् तथा आर्द्रक नामनो द्वीप छे. ते द्वीपमां शत्रुने नाश करनारो, तथा मित्रने वधारनारो तेमज मणि, रत्न, धन, कंचनथी भरपूर आर्द्रक नामनो राजा हतो. ते राजाने जाणे के समुद्रथी प्राप्त थयेली होय तेवी इंद्राणीना रूपसमान आर्द्रिका नामनी स्त्री हती. हवे साधुनो जीव स्वर्गथी चवीने ते आर्द्रिकाना उदरने विशे अवतर्यो. पूर्ण मासे तेनो जन्म थयो. धवल-मंगल गीतो गवाया. महोत्सवपूर्वक ते पुत्रनुं "आर्द्रकुमार" एम परंपराने अनुसरनारुं नाम पाड्युं. अनंता गुणोए करीने निरंतर आश्रय करायेलो ते आर्द्रकुमार माता-पिता वडे वृद्धि पाम्यो. यौवनवय प्राप्त थतां अनेक राजकुमारीओनी साथे तेने परणाव्यो. ते यथारुचि सांसारिक भोगो भोगवतो हतो.

एकदा आर्द्रकुमार पितानी पासे उल्लासपूर्वक बेठो छे. ते समये द्वारपाले आज्ञा आपेला श्रेणिकराजानां मंत्रीए सभामां बेठेला आर्द्रकराजानी आगल भेट मूकीने नमस्कार कर्यो. त्यारे आर्द्रकराजाए जाणे श्रेणिकनुं मूर्तिमान् मित्रपणुं होय तेम गौरवताथी तेने जोयो. पछी ते मंत्रीए साथे आणेली सौवर्य, निंबपत्र, मणि, माणेक वगेरे भेटो आर्द्रकराजाए हर्षथी ग्रहण करी. पछी प्रफुल्लित मुखवाळा आर्द्रकराजाए प्रीतिथी ते प्रधानने पूछ्युं के, "अमारो बंधु श्रीमान् श्रेणिकराजा कुशळ छे ?" तेना उत्तरमां पोताना स्वामीनुं कुशळ वृत्तांत कहेवा वडे राजाने आनंद आप्यो. ते समये कुमारे पिताने पूछ्युं के, जेनी वात सांभळवामां तमे आटला बधा आतुर छो, जेनी साथे तमारे आटली बधी प्रीति छे ते श्रेणिक कोण छे ?

राजा आर्द्रके कह्युं के-"हे वत्स! मगध नामनो देश छे. ज्यां जिनमंदिरो कलशनी पंक्तिओवाळा शोभी रर्ह्या छे. त्यां राजगृह नगरने विशे श्री श्रेणिक नामनो

राजा राज्य करे छे. आपणा कुलने परंपराथी तेमनी साथे प्रीति चाली आवी छे." पछी आर्द्रकुमारे ते आवेला प्रधानने आदरथी कह्युं के, "तमारा स्वामीने कोई पूर्णगुणवाळो पुत्र छे ? तेने हुं मित्र करवा ईच्छुं छुं." परधाने आनंदपूर्वक कह्युं के, "हे कुमार ! समुद्रना रत्नोनी पेठे तेमना घणा पुत्रो छे. ते सर्वमां कौत्सुभ रत्नना सरखो, बुद्धिना निधान, पांचसो मंत्रीनो स्वामी, दातार, कृतज्ञ अभयकुमार नामे एक पुत्र छे." राजकाजनी चिंताथी सुखपूर्वक राजा निश्चिंत थयो. आ प्रमाणे अमृत जेवी मीठी त्रीजी ढाल संपूर्ण थई.

दुहा (सोरठा)

करजोडी कहि ताम, आर्द्रकुमार ईम तातनई,
मया करी गुणधाम, जो अनुमति आपउ तुम्हे... १

तो हूं जोडउं प्रीति, अभयकुमार साथइं अधिक,
राखउं रूडी रीति, परियागतिनी पाछली... २

तन्निसुणी कहि राय, कही वारू तुम्हे,
भलउ विचार्यो ठाय, सरखा सरखी प्रीतिए... ३

सुगुण सुगुणस्युं घाय, मिलि निगुणनि परहरी,
हंस न कंकर खाय, मोती जो न मिले कही... ४

उंडा साथइ संग, करीइ उछा मूकने,
राखीजि नितरंग, सायरस्युं छीलर त्यजी... ५

विषना कुंपा जेम, तेहने गुण जिस्यो जनमना,
सुगुणस्युं क्षणनो प्रेम, एक अमृत बिंदुइ... ६

चंदन चपटी रीति, प्रीत सुगुण साथइं इसी,
निर्गुण जब हुं प्रीति, इंधण आकभरी जिसी... ७

ढाल-४

(राग-जयतसिरी) देशी-चतुर सनेही मोहना

तातणी अनुमति लही, आर्द्रकुमार मनरंगि रे,
नृप श्रेणिकना मंत्रीनी, एम कहइ एकरंगि रे... १

वात सुणो वारु परि, करयो एक कामो रे,
जब तुम्हनई नृप सीख दई, तव कहियो अम्ह धामो रे... २

हवइं केता दिन एक पछी, सीख लेई नर तेई रे,
आर्द्रकरायनुं भेटणउं, भंभसार भणि लेई रे... ३

जब चालीउं तव कुमरनइं, करजोडि कही स्वामी रे,
सीद्ध करावी सीख, मगधदेश शुभकामि रे... ४

अभयकुमारनिं मोकली, वस्त्र अमुलक मोती रे,
जलपंथी घोडा गुणी, वली मणि रविशशी ज्योति रे... ५

जिम जलरुहनि भानुसिओ, दूरि थकी बहुनेहो रे,
अभयकुमारजी जाणज्यो, तुम्हसि तिम सनेहो रे... ६

जिम वंध्याचल हाथीओ, संभारि निसदिशो रे,
तिम हुं तुम्हगुण सांभळी, संभारू छउं निसदिसो रे... ७

ए अम्हारी वीनती, बंधवनइं वीनवयो रे,
पगे लागी माहरी वती, भेट धरी संस्त्व्यो रे... ८

सनमानी नइं सीख दि, अनुक्रमि आव्यो सोई रे,
नयर राजगृही नृप कन्हइं, प्रणमी पदयुग होइ रे... ९

सेवक आदनरायनो, कही प्राभृतक मेली रे,
महाराजा मुजरो कहियो, तुम्ह मित्र गुण गेली रे... १०

अभयकुमरनि आगल जई, ढौकन ते सबइ ठावि रे,
आर्द्रकुमारनी विनती, करि प्रणाम सुणावी रे... ११

मित्रपणे मलवुं लही, चिंतइ तिणि प्रस्तावइं रे,
जीव हलुकरमी तुहनि, मिलसि मैत्री भावइं रे... १२

केवलीइं करुणा करी, हणीपरि मुजनइं आप्यो रे,
किम लघुकरमी हुं सई, न होवे असत्य जिम भाख्यो रे... १३

तो सही ए पूरवभवि, चारित्र कांई विराधी रे,
देश अनारज अवतरयो, आप कमाई लाधी रे... १४

तो जिन प्रतिमा मोकलउं, ए बुद्धि इहांकणि सूझी रे,
जेम जातिसमरण लही, ए प्राणी प्रतिबूझी रे... १५

चोथी ढाल पूरी थई, जयतिसरीमां रसालो रे,
न्यानसागर कहिं सांभलो, उछक थई उजमालो रे... १६

आर्य-अनार्यनी मैत्री

आर्द्रकुमार पिताने अंजलिपूर्वक विनंती करे छे के, "जो आप अनुमति आपो तो अभयकुमारनी साथे हुं मैत्री करुं." पोताना पुत्रने अभयकुमार साथे मैत्री करवानो अर्थी थयेल जाणीने राजाए कह्युं, "हे वत्स! तुं खरेखर कुलीन पुत्र छे, केमके मारा चालेला मार्गे चालवाने ईच्छे छे. तमारा बंनेने परस्पर मित्रपणुं घटे छे." खरेखर, सरखा सरखानी साथे प्रीति थाय छे. हंस सदा मोतीनो चारो चरे छे, कांकराने अडतो पण नथी. खाबोचियाने छोडी सागर साथे संग करवो जोईए. विषना कुवा सरखी निर्गुण साथेनी प्रीत छे. ज्यारे सद्गुणीनो संग अमृतना बिंदु समान छे. चंदन सरखी सज्जननी प्रीत छे, जे जीवनमां शीतळता आपे छे, पोतानी जातने घसी बीजाने सुवास आपे छे. ज्यारे आंकडाना बळतणसमान दुर्जननी प्रीत छे, जे पोते बळे छे अने बीजाने पण बाळे छे. पोताना मनोरथने मळती पितानी आज्ञा मळवाथी आर्द्रकुमारे ते मंत्रीने कह्युं के, "तमारे मने पूछ्या वगर जवुं नहीं. मारुं वचन तमारे सांभळवानुं छे." कुमारना वचनथी मंत्रीए तेम करवानुं स्वीकार्युं. पछी राजानी रजा लईने मंत्री तेना उतारामां गयो.

अन्यदा आर्द्रकराजाए मोती वगेरेनी भेट लईने एक पोताना पुरूष साथे ते मंत्रीने विदाय आपी ते वखते आर्द्रकुमारे अभयकुमारने माटे ते मंत्रीना हाथमां परवाळा अने मुक्ताफल (मोती) आप्या. पछी मंत्री आर्द्रकराजाना मनुष्यसहित राजगृहपुरे आव्यो अने तेमणे श्रेणिकराजाने अने अभयकुमारने भेटो आपी. मंत्रीए अभयकुमारने संदेशो कह्यो के, "दूर होवा छतां जेम कमलने सूरज साथे अविहड प्रीत होय छे तेम आर्द्रकुमार तमारी साथे मित्रता करवा ईच्छे छे."

अभयकुमारे विचार्युं के, जरुर श्रमणपणानी विराधना करवाथी ते अनार्य देशमां उत्पन्न थयेलो हशे, पण ते महात्मा आर्द्रकुमार आसन्नभव्य होवो जोईए, कारण के अभव्य अने दूरभव्यने मारी साथे प्रीति करवानी इच्छा ज थाय नहि. प्रायः करीने

समान पुण्यपापवाळा प्राणीओने ज प्रीति थाय छे. तेओनो स्वभाव एकसरखो होय छे. अने मैत्री एकसरखा स्वभावथी ज उत्पन्न थाय छे. हवे कोई पण उपाय करीने तेने पाछो जैनधर्मी करुं, तेनो आप्तजन थाउं केमके जे धर्ममार्गमां अग्रेसर थाय ते ज आप्त कहेवाय छे.

ते आर्द्रकुमारने हुं तीर्थंकरनुं बिंब दर्शावुं के जेथी कदी तेने उत्तम जातिस्मरण थाय. आ प्रमाणे जयतिसरी रागमां चोथी ढाल पूरी थई. कवि कहे छे के जे सांभळशे तेनुं जीवन उजमाळ थशे.

दूहा-सोरठा

चिंतई अभयकुमार, परिणामिकी बुद्धि करी,
कोईक छे निरधार, ए आसनभव सिद्धिउ... १

मृग करि मृगनो संग, वृषभ वृषभ साथि मिली,
मिलि तुरंग तुरंग, पंडितसुं पंडित मिली... २

पापी पापी प्राहि, धर्मि धर्मिसि मिली,
चतुर चतुरनि त्याहि, मूरख मूरखस्युं मिली... ३

तो साचो परमार्थ, मित्र थई मिलवा तणो,
जो जिनमार्ग हाथ, आपी एहनि तारी... ४

इमि चिंती मनमांहि, मूरति ऋषभ जिणंदनी,
नीपाइ तेणि ठाहि, रयणतणी रलीयामणी... ५

धूप कडछो एक, कंचन घटा मणइ जडी,
वारु अगर विवेक, केसर सुखड धोतीया... ६

ईम ओरसीया आदि, पूजाना उपकरण सवे
साथि ठवीआ युगादि, मोदिसुं मंजुसमां.. ७

ढाल-५

देशी-हो मतवाले साजना

मुद्रा मंजुसई करी, ते आपइ आर्द्रकुमारो रे,
नृप आर्द्रकना मंत्रीनई, कहि देज्यो अवल प्रकारो रे... १

आर्द्रकुमरनइं भेटणउं, ए तुम्हे एकांत जाई रे,
आपी नि अम्ह विनती, ईम करज्यो कहुं हुं भाइ रे... २

परने मुखि सुणीया दूरथी, गुण तुमथी मेरु समान रे,
तुम्हे गुणाकर मित्रजी, तुम्हे मोटा चतुर सुजाणो रे... ३

किम थाइ तुम्ह सारिखी, अम्ह सरखी भेट उदारो रे,
तो पण चिंती विनोदनी, छई मित्रजी करवारो रे... ४

केहनइ रखे देखाडता, ऊंडा सायरशुं होज्यो रे,
अंधारइ जइ ओरडी, पोते उघाडी जोज्यो रे... ५

संदेशउ ए सीखवी, सनमान दीधी विदाय रे,
अनुक्रमि आदन देश ते, पहुता जिहां आर्द्रकराय रे... ६

जे नृप श्रेणिकनुं हतुं, ते ढौकन रायने आपि रे,
एकांति कुंअर कन्हुइं, जइ आगलि प्राभृत थाप्यो रे.. ७

संदेसउ सघलउ सुणी, आनंद आर्द्रकुमार रे,
माणस पइं मंजउषा, आणी अपवरक मोजारो रे... ८

न्यानसागर कहि सांभळउ, ढाल पांचमी सुविचारो रे,
जिन प्रतिमा दरिसण थकी, हवई किम लहि छई निस्तारो रे... ९

अभयकुमारनुं बुद्धिकौशल्य

औत्पातिकी बुद्धि, कार्मिकी बुद्धि, वैनयिकी बुद्धि, पारिणामिकी बुद्धिना भंडार अभयकुमार विचारे छे के, नक्की आ कुमार नजीकमां सिद्धिपद पामवानो हशे, एटला माटे ते महारी साथे मैत्री करवानी ईच्छा करे छे. जगतमां पण मृगलाओ मृगलानी साथे, वृषभ वृषभनी साथे, घोडा घोडानी साथे अने पंडित पंडितनी साथे मैत्री करे छे. तेवी मैत्री ज लाभकारी बने छे. एक कविए लख्युं छे के-

चार मिले, चोसठ हसे, मिले बे कर जोड,
ज्ञानी से ज्ञानी मिले, उठे सात करोड...

पापी जीव हंमेशा पापीने ज प्यार करे छे, धर्मी जीव धर्मीने ईच्छे छे. चतुर पुरुष चतुरनो संग करे छे अने मूरख मनुष्य मूरखने शोधे छे. आ वात आबालगोपाल जाणे छे. तेथी आर्द्रकुमार धर्म करवाने योग्य जीव लागे छे. तेथी जो ए धर्मने न पामे

तो मारी मैत्रीनुं फळ शुं ? कपूर ज वधारे सारो, जे पोतानी सुगंध सर्वने आपे. जे न्यायने आपनारो ते राजा, जे अंधकारने नाश करनारो ते दीवो, जे त्रण वर्गने अर्थे थाय ते धन अने जे प्रतिबोध पमाडे ते मित्र जाणवो. तेनो श्लोक नीचे प्रमाणे छे.

स राजा न्यायदेष्टा यः स दीपो यस्तमोपहः ।
तद्धनं यन्त्रिवर्गार्थं, तन्मित्रं यत्प्रबोधकम् ।।

परंतु दूर देशमां रहेलो ए शी रीते प्रतिबोध पामे ! अथवा अरिहंतना प्रतिबिंबना दर्शनथी कदाच ए जातिस्मरण ज्ञान पामे अने त्यार पछी सुखे प्रतिबोध पामे.

एम विचारी ते अभयकुमारे समकितरूप वृक्षना बीज समान सुवर्णाभरणवाला श्री आदिनाथ परमात्माना सुवर्णप्रतिबिंबने डाबडामां मूक्युं. वळी तेमां दिव्य बे वस्त्रो, आभूषण, पूजानां उपकरण, धूप, केसर, सुखड वगेरे भर्या. ते पेटीना द्वार पर ताळुं दई अभयकुमारे तेनी उपर महोरछाप करी.

ज्यारे राजा श्रेणिके मंत्रीने घणी भेटो आपीने प्रिय आलापपूर्वक विदाय कर्यो. ते वखते अभयकुमारे पण तेना हाथमां ते पेटी आपी अने अमृत जेवी वाणीथी तेनो सत्कार करीने कह्युं के "हे भद्र ! आ पेटी आर्द्रकुमारने आपजे अने ते मारा बंधुने मारो आ संदेशो कहेजे. आ पेटी एकांतमां जईने तारे एकलाए ज उघाडवी अने तेमां जे वस्तु छे, ते तारे ज जोवी, बीजाने बतावबी नहि."

आ प्रमाणे तेनुं कहेवुं कबूल करी ते पुरुष अनुक्रमे पोताना देश आर्द्रक तरफ पहोच्यो. श्रेणिकराजाए आपेली भेट आर्द्रकराजाने आपी अने एकांते आर्द्रकुमारना मंदिरे आव्यो. मंत्रीए आर्द्रकुमारने पेटी आपीने अभयकुमारनो संदेशो कह्यो. ते सांभळीने ते कुमार अमृतथी सिंचन कर्यानी पेठे आनंद पाम्यो. जिनप्रतिमाना दर्शनथी आर्द्रकुमारनो निस्तार केवी रीते थाय छे ते कवि आगल बतावशे. आ प्रमाणे सारा विचारवाली पांचमी ढाल पूर्ण थई.

दूहा

अति अंधारई मंजुषा, जव उघाडी तेह,
प्रतिमा प्रथमजिणंदनी, झगमग करती तेह... १

दिग दिसनई परकासती, रवि जिम निज उद्योति,
देखीनइं कुंअर कहि, अहो अहो अद्‌भूत ज्योति.... २

क्षण एक साहमी थापिनई, विस्मित चिंतई सोय,
सीस चरण करि कोटिनो, किहां नो भूषण होय... ३

स्युं ए बांधी जई लगि, कहि पहरिजि पाय,
के स्युं बांहि बांधीई, न मलई कोई उपाय... ४

ढाल-६

देशी-विंछीयानी

साहमउं निरखी निरखी कहि, दीठउं छई एहवुं क्यांहि रे,
इम वारंवार सांभरता, तव जातीसमरण त्यांहि रे... १

तेह आर्द्रकुमरनइ उपनइ, करुणानिधि किरतार रे,
एतउ एकमना आराधतां, परमारथ पंथ दातार रे.... २

तरणतारण त्रिभुवनधणी, जे छेदई मोहनी जाल रे,
ए भयभंजन भगवंतजी, भेटीया भलई देवदयाल रे,... ३

सामायिकनो भव सांभरिओ, चारितमां विषयविकार रे,
चिंतिउ चित्त आलोयउ नहीं, तिण हुं लहिउ म्लेच्छावतार रे... ४

अहो भावशल्य भारे घणुं, दुःखदायक थयुं एम रे,
जे अमृतमांहि विष नीपनुं, ते टाली सकस्युं केम रे... ५

जिहां जीवतणइ घातइ करी, रुधिरइं भीनां रहइं हाथ रे,
धिग धिग मदन तुम्हिं होज्यो, तइं तो दीधी छे बाउल बाथ रे... ६

अवतर्यो देश अनारजिं, जिहां नहि ध्यानी ख्याति रे,
जिहां अभक्षनुं भक्ष करिस, हुं अपेय पीइ दिनराति रे... ७

एकइं अक्षर जिहां धरमनउं, कहीइं नवि सुणवो कानि रे,
तो पोसह पडिकमणउं किहां, किहां मेल्हिजि धर्मध्यानि रे... ८

जउं मनना दुश्चिंत थकी, पामिउं कडूआं फल जोर रे,
तउं त्रिधा योग पातकतणां, फल भोगवसिउं किम घोर रे... ९

पामीउ प्रतिमादरिसण थकी, संवेग घणउ सुखकार रे,
चिंतइ आरयदेसइ जई, संवर आराधउं सार रे... १०

धन्य धन्य अभयकुमारनइं, अकारण बांधव एह रे,
भवोदधि कुपथकी उद्धर्यो, करुणा परमाहि रेह रे... ११

परम दावानल बळतां थकां, भीषण भव अटवीमां हि रे,
मोह नीद्राइ धार्या भणी, जेह ठाडी ग्रही लांहि रे... १२

ते परम बंधु तेहनउ सही, उपगारीमांहि सिरदार रे,
थयउ धरमाचारय माहरु, मारग देखाडणहार रे... १३

हवइ नाही निरमल धोतीया, पहिरिनइं मुखकोस रे,
जिनपूजा युगतिसुं करी, पामिउ मनि परम संतोष रे... १४

राग सारंगमल्हारमई, कही छठी ढाल रे,
जिनप्रतिमा भविस्युं भजी, कहई न्यान दि मंगलमाल रे... १५

परमात्मदर्शननी प्राप्ति

पछी नाहीने अंधारी ओरडीमां जईने महारा मित्रे आ पेटीमां शुं मुक्युं हशे एम उत्साहथी व्याकुल मनवाळा तेणे पोते पेटी उघाडी, जाणे चंद्रकिरणथी रचेला होय एवां अंदर बे वस्त्र जोईने रसिक एवा तेणे ते पहेर्या अने पछी दिव्य आभूषणो वडे पोतानां शरीरने सुशोभित कर्युं. पछी डाबडो उघाड्यो एटले तेणे ते डाबडानी अंदर अंधकारने नाश करवा माटे उदय पामेला चंद्रबिंब सरखा, चारे दिशाने प्रकाशित करता दिव्यज्योति समान अरिहंतना बिंबने दीठुं.

ते वखते आभूषणनी बुद्धिथई एटले आ कांई आभूषण छे एम धारीने आर्द्रकुमारे मस्तके, कंठे, हृदयने विशे एम सर्व अंगने विशे पण घटना पाम्युं नहि. तेणे विचार्युं के बाजुबंध हशे के पगे पहेरवानुं हशे ?

पछी खेद पामेला अने अनिमेष दृष्टिथी परमात्माना बिंबने जोई रहेला ते आर्द्रकुमारने, "पूर्वे में कोई ठेकाणे आवी वस्तु जोयेली छे, पण मंदाभ्यासीने शास्त्रनी जेम ते मारा स्मरणमां आवतुं नथी." एवो ऊहापोह करतां पूर्वजन्म सांभरी आव्यो. अने थयुं के, अहो ! अद्‌भुत ! आ बिंब तो वीतरागी, देवाधिदेव, तरणतारणहार, त्रण भुवनना नाथ, परमारथ पंथने आपनार, मोहनी जालने छेदनार, भवभय ने भांगनार, भीषण भवाटवीमां सार्थवाह, भवसमुद्रमां दीवादांडी समान परमात्मानुं छे. हुं धन्य बन्यो के मने युगादिदेव श्री आदिनाथ भगवंतना दर्शन थया. पूर्वे हुं फक्त नाम मात्र

सामायिक नामनो साधु थईने भाव सामायिकथी भ्रष्ट थवाने लीधे अनार्यपणाने प्राप्त थयो छुं. खरेखर, भावशल्य घणा दुःखने आपनारुं छे. जे अमृतमांथी खरेखर विष उत्पन्न थयुं. हवे ते केम करीने टळशे ?

वळी, जे अनार्यदेशमां दयाधर्म नथी, अभक्ष्य पदार्थोने भक्ष्य समजीने खाय छे. अपेय पीणांओने रात-दिवस पीए छे. जे देशमां धर्म शब्द सांभळवो दुर्लभ छे, तो पौषध अने प्रतिक्रमणनी तो वात ज क्यां ? खरेखर, मनना दुष्ट चिंतनथी कडवां फळ प्राप्त थाय छे. मन-वचन-कायाना पापथी भयंकर कर्म बंधाय छे. अहो ! जिनप्रतिमाना दर्शनथी मने आजे घणो संवेग उत्पन्न थयो छे, हवे हुं आर्यदेशमां पहोंची संवरनी आराधना करुं.

वळी हुं मानुं छुं के-बुद्धिवंत एवा अभयकुमारे दूरदेशमां रहेला अनार्य एवा मने प्रतिबोध करवा माटे आ प्रतिमा मोकली छे. अभयकुमारना आवा अद्‌भुत बुद्धिवैभवने कोण न वखाणे ? के जेणे दूर रहेला एवा मने प्रतिबोध पमाड्यो. उत्तम झवेरी पण जोयेलां रत्ननी परीक्षा करे छे, सुभट जोयेला निशानने पाडी शके छे. वैद्य पण जोयेला रोगीने सारो करे छे. सुगुरु जोयेला शिष्यने ज बोध करे छे अने मार्गनो जाणनारो मार्गने विशे जोयेला मार्ग प्रत्ये लगाडी शके छे, परंतु हर्ष थाय छे के-जेणे नहि जोयेला मने बोध पमाड्यो छे, ते बुद्धिवंतोने विशे शिरोमणी सरखो मगधपतिनो पुत्र महारो मित्र जयवंतो वर्ते छे.

आ प्रमाणे मनोरथ करतो, स्नान करी, निर्मळ वस्त्र परिधान करी, मुखकोश बांधी जिनेश्वरनी प्रतिमानुं पूजन करे छे. मनमां परम संतोष मेळवे छे. सारंगमल्हार रागमां छट्ठी ढाल संपूर्ण थई, खरेखर, जिनप्रतिमाना भावथी नमस्कार करतां मांगलिकनी माळा थाय छे.

दुहा (सोरठा)

जई जनकनी पास, करजोडी कुंवर कहइ,
अवधारी अरदास, जो अनुमति द्यो तातजी... १

तो हुं जाउं त्याहीं, प्रभुजी राजगृही पूरइ,
मैत्री मांहमांहि, अभयकुमारस्युं आकरी... २

पेखी तस मुखचंद, नयन अमीरस सिंचीइ,
मिली आवउं भूमीं वहिलउ विलंब नहीं करुं... ३

तन्निसुणी कहि राय, गमनागमन नथी कहे,
जई बइठा निज ठाउ, मैत्री तिणस्युं अम्हतणी... ४

तातवयण सुणी ताम, कुंवर अणबोलिउ रहिउ,
आरजदेस आम, चिंतई चित्त किम पहूंचसुं ? ५

नापइ अनुमति ताय, तो तिहां किणी पर जाईइ,
करीइ कोय उपाय, वेसासी वारू परइं... ६

ढाल-७

(राग-सारंग) देशी-हूंओ रे रसीया साहिबा...

ए संसार असारनइं, हुं कदी मूकीस हेव, महाराज
संवेगी सिरि सेहरु, इम चिंतइ नितमेव, महाराज... १

आंकळी मननो लूखउं महुलमइं, न करइ रंग विलास, म.
नाटक गीत विनोद ते, न जुई प्री(प्रि)यमुखहास, म... २

जिनप्रतिमा पूजी कहइ, दि प्रभु दुःखनो पार, म.
अभक्ष्य अपेय त्यजी करी, लीए नित निरस आहार, म... ३

रही उद्विग्न मनइ इसउ, ते जाणी भूनाथ म.
राजकुमार सई पांचनई, मूक्या चोकी साथ म... ४

यदुक्तं- आर्द्रकुमार चरित्रे-

अह तस्स अभिप्पायं, नाउं संभतएण नरवइणा ।
रक्खंतु दिन्नाइं, पंचसयाइं निवसुयाणं ।

दिन प्रति ते साथइ हवइं, थइ घोडे असवार म.
पुरबाहिर अतिवेगला, खेलवाइ तोखार म. ५

कुंवर सायर तटि, जाइ आवी ते ठाम, म.
ईम नृपनंदन पांचसइं, वीसायां तिण जाण, म... ६

एकदिन प्रवहण रत्नउं, सायर तीरि भराय, म.
जिनप्रतिमा माहे ठवी, पोतई अश्व दउडाय म... ७

आवी बिठो पोतमइं, आपइ आर्द्रकुमार, म.
वहाण हंकारि जोरमइं, चालिउं जलधि मझार, म... ८

अनुक्रमि आरजदेशमां, इणिपरि पहुतउ तेह,
जिनप्रतिमानइं रत्न ते, सेवक साथि नेह, म... ९

अभयकुमारनइं मोकलइं, कहावी निज परिणाम,
मित्रजी ए खरचजो, जिनपूजा शुभ कामि, महाराज... १०

यदुक्तं- आर्द्रकुमारचरित्रे-

अभयकुमारस्स तउं, पडिमा पठाविया सयं तु पुणो ।
जिणपूयाइविहाणे, दाउं धम्मेण रयणाइं ।।

सारिंग राग ए कही, सातमी ढाल रसाल, म.
न्यानसागर कहि सांभलो, उच्छक थई उजमाल, महाराज... ११

आर्द्रकुमारनो वैराग्य

एकदिवस आर्द्रकुमारे पोताना पिताने विनंती करी के-हे तात ! मने आज्ञा आपो के जेथी करीने हुं अभयकुमार मित्रने मलीने दृढ सौहृदवाळो थाउं, राजगृही पहोंची तेमना दर्शन करीने विलंब कर्या वगर पाछो आवी जईश. राजाए जणाव्युं के-हे वत्स ! आपणी अने तेमनी प्रीति भेट तथा संदेशा मोकलवाथी छे, परंतु परस्पर मळवाथी नथी. एम कहीने राजाए तेने राजगृही जवानी ना पाडी. पछी वडीलनी आज्ञाने वश एवो आर्द्रकुमार सर्वकार्यने त्यजी दई जेम योगी परमात्मानुं ध्यान करे तेम अभयकुमारना नामनुं ध्यान करवा लाग्यो अने आर्यदेशमां केवी रीते पहोंचीश एम वारंवार विचारवा लाग्यो.

आर्द्रकुमार विचारे छे के – आ संसार असार छे. हुं तेने क्यारे मूकीश ? हवे हुं रंगविलास नहीं करुं, नाटकगीत अने विनोद नहीं करुं तेमज जिनेश्वरनी प्रतिमाने हंमेशा पूजीश, अभक्ष्य अने अपेय पदार्थोनो त्याग करी हंमेशां निरस आहार लईश. तेनी आवी चेष्टाथी पूछ्या विना पण आ चाल्यो जशे ! एम संशय पामेला अने चकित थयेला राजाए तेनुं रक्षण करवा माटे पांचसो योद्धाओ राख्या. परंतु कर्मवडे घेरायेला श्रद्धालु पुरुषनी पेठे सुभटोथी घेरायेला एवा पण ते कुमारे मोक्षनी ईच्छानी पेठे मित्रने मळवानी उत्कंठाने त्यजी दीधी नहि.

पछी कुमारे सर्वे योद्धाओने विश्वास पमाडवा माटे अश्वक्रीडा करवा जवा लाग्यो अने घोडाने दोडावी सौना आगल नीकळी जईने फरी क्षणमात्रमां तेमनी पासे

आववा लाग्यो. घडी, अर्ध पहोर, पहोर विगेरेथी अनुक्रमे समयने वधारतो ते कुमार कसरत करनारानी पेठे नित्य दूर थकी पण पाछो आवतो हतो. निरंतर आवजाव करतां ते सर्वे योद्धाओ सूर्यना तापथी व्याकुल थया छतां खेद पामवा लाग्या. पछी विश्वास पामेला ते सुभटो कोई दिवसे झाडोनी छायामां बेठा अने कुमार पण एक पहोर विगेरेनुं अंतर करीने फरी तेमने मळयो. एम केटलाक दिवसे ते सर्वे सुभटोने विश्वास पमाडीने कुमारे पोताना विश्वासवाळा माणसोथी गुप्त रीते एक वहाणने तैयार कराव्युं.

कोई वखते योद्धाओ झाडनी छायामां बेठा-बेठा कुमारनी प्रतीक्षा करता हता एवामां ए आर्द्रकुमार सुवर्ण, रत्न तथा प्रतिमाने लईने वहाण उपर चडी गयो. जे वायुनो पुत्र हनुमान पोते सुखे समुद्रने तरी गयो हतो, ते वायुनी सहाय वडे आ वहाण पण शीघ्र समुद्रना पारने पाम्युं, पछी संसारसमुद्रने पण तरी गयो होय एम मानता ते आर्द्रकुमारे दीक्षा लेवाने उत्साहवाळा थया छतां मित्रना पण मेळापनी ईच्छा राखी नहि. परंतु जिनबिंबनी आशातनाथी भय पामता तेणे पोताना माणसोनी साथे ते प्रतिमा अभयकुमारने मोकली आपी. आर्द्रकुमार त्यां ज सात क्षेत्रमां केटलुंक सुवर्ण वापरीने अने बाकीनुं पोताना सेवकोने सोंपीने पोते संयम ग्रहण करवानी उत्कंठावाळो थयो. आ प्रमाणे सातमी ढाल श्री न्यानसागरे भावपूर्वक कीधी ते तमे उत्साहपूर्वक सांभळजो.

दुहा (सोरठो)

आणी मन आलोच, चढतिं परिणामि,
करी पंचमुष्टी लोच, ते करि आर्द्रकुमार... १

ढाल-८

राग-केदार

गगनथकी कहई देवतां, अहो अहो नरराज,
भोगकरमनइं ताहरइं, मत लि चारित्र आज,
मानी जई शीख साजनां, मिलसि माननी संग,
मानी जई शीख साजना, करशउ व्रतनो भंग... १

तन्निसुणी चिंतवई, कुंवर साहस धीर,
सूरपुरुषनि स्युं करई, भोगकरम भडवीर, मानी.... २

कापुरुष कहीइ ते को देवतणाइ जे सीस,
पाडीनई छई सीरहइ, कायरमांहि ते ईस, मानी... ३

हवणा भोगवतउ नथी, जो ए परतख भोग,
पंचविषयपरिघल त्यजी, लिउ छउं त्रिकरण योग, मानी... ४

आगति भोगकरम मुहई, हवई स्युं करसि तेह,
पंचमहाव्रत उच्चरइ, एम कही गुणगेह, मानी... ५

उग्रविहारइ विहरतो, आर्द्रकुमार अणगार,
नयर वसंतपुर बाहिरइ, देउलमां सुविचार, मानी... ६

आवी काउसगइं रहिउं, जाणी निरवद्य ठाम,
पूरवभवनी भारया, बंधूमती इण नाम, मानी... ७

देवलोकथी ते चवी, नयर वसंतपुरमाहिं,
इभ्यशेठनी नंदनी, थई छे धनवती त्यांहि, मानी... ८

लेई साथ सहेलडी, दिन प्रति देवल सोय,
रमवा आवइ छइ रुली, सुरवचन अफल न होय, मानी... ९

ढाल केदारई आठमी, ए कही अमृतरूप,
न्यानसागर कहीं सांभलउ, भवियण भावी स्वरूप, मानी... १०

चारित्रमां चेतवणी

अनार्यदेशमांथी आर्यदेशमां आवेला, संसारनो त्याग करवानी उत्कंठावाळा, जातिस्मरण ज्ञानथी पूर्वभवने निहाळता आर्द्रकुमारे मन एकाग्र करी, चढता शुभ परिणामपूर्वक स्वयं ज पंचमुष्टी लोच करी यतिलिंग ग्रहण कर्युं.

तेटलामां आकाशथी देववाणी उत्पन्न थई के "हे महासत्वशाळी ! आर्द्रकुमार ! तुं दीक्षा ग्रहण करीश नहि, केमके तारे भोग्यकर्मअवशेष छे, ते भोगवीले अने भोगावली कर्म भोगव्या पछी योग्य समये दीक्षा ग्रहण करजे. केमके भोग्यकर्म तीर्थंकरोने पण अवश्य भोगववुं पडे छे. माटे तारे हाल व्रत लेवानी जरूर नथी."

जेम कोई खडग् वडे दोरडाने कापी नाखवानी ईच्छा करे तेम तपवडे भोगावलीकर्मने छेदी नाखवानी ईच्छा करतां साहसिक आर्द्रकुमारे ते दैवीवाणीने

निष्फल करवा तरत व्रत ग्रहण कर्युं. संघरी राखेला धननी पेठे पूर्वभवसंबंधी श्रुतने पामीने ते श्रुतवडे ग्रहण करेला दीवानी पेठे आर्द्रकुमार मुनि मुनींद्रोना मार्गने जोवा लाग्या. तपथी शरीरने सुकवी नाखता अने शुभ भावनाने वृद्धि पमाडता ते मुनि पासथी छुटा थयेला पक्षीनी जेम पृथ्वी उपर विहार करवा लाग्या.

अनुक्रमे विहार करता ते वसंतपुर नगरमां आव्या. ते नगरमां देवदत्त नामनो शेठ रहेतो हतो. जे शेठ गुणे करीने राजाने पण मान्य हतो. ते शेठने एकठा करेला उत्तम शीलरूप धनवती नामनी स्त्री हती. हवे ते बंधुमतीनो जीव देवभवथी चवीने तेमनी पुत्रीपणे उत्पन्न थयो. धनवती नामथी प्रसिद्ध थयेली सुवर्णसमानतेजवाळी अने विद्यार्थी साक्षात सरस्वती तुल्य ते कन्या अनुक्रमे वृद्धि पामी, हवे भाग्ययोगथी खेंचायेला ते मुनि नगरनी बहार देवालयमां निरवद्य ठामे कायोत्सर्ग ध्याने रह्या. ते नगरनी बीजी बाळाओनी साथे धनवती क्रीडा करवा माटे ते ज देवालयमां प्रवेशी. खरेखर देवनुं वचन क्यारेय पण निष्फळ जतुं नथी. आ प्रमाणे केदारागमां अमृत समान आठमी ढाल श्री न्यानसागरे रची. तेने हे भव्यजीवो, तमे स्वस्थतापूर्वक चित्त एकाग्र करी सांभळो.

दूहा

पुरमां सिधारथी, तिण दिन सहीर पंच,
मांहोमांहि एहवु, करइ कीडानउ संच... १

रमत आज ए आपणी, करवी अवर न कोय,
कीजइ करमनां पारिखा, जे सरज्यो ते होय... २

इहांथई देउल बारणई, एक ससी(खी) ईण वार,
जे अडसि जे थंभनि, ते तेहनउ भरतार... ३

ढाल-९

देशी – रमता फाटउ घाघरउ रे, दसगज फाटउं चीर रे, हुंबइ
आवी रे उलगाणा ताहरी कांकिणीनि, झुंबइ...

दे तालीनइ दउडती रे, चिंहु थंभे जइ चार रे, झुंबइ
बाइ रे वर लाघो बहेनडी रे, हुं छइ
आ एकनी घणी आरडी रे, रही निरभाखि कुमारि रे, हुं छइ
आवउ रे बाइ दीजइ, एहनी सिसमांहे, टुंबइ... १

एम सुणीनई धनवती रे, देउलमांहे ताम रे, रुंबइ
देखी रे ऋषि उभो, तेहने पाउले रे, झुंबइ
सांभळज्यो सघली सखी रे, मिलिओ मुझ वर जिस्यो कामरे, हुंबइ.
हांसु रे जउं करस्युं, तो तुम्हनि आणसिउं रे... २

मुझ वखतइ भरता मलिउ रे, भाल भलउ जिसो भाण रे हुंबइ
जाणे रे सुरसाखी, मधुमासनिउ रे, लूंबइ
करउ आ सफल रे कामजी, तुम चिहुं वखते पहांण रे हुंबइ
धाइ रे तिहां आवी चारइ कुंअरी रे, तुंबई... ३

निरखो नियमघर साधुजी रे, रक्तोत्पल दल काय रे, रुं(रु)डउ
नाशा रे जेहनी देखीनई हारिउ रे, सूडउ
रहि अलगी ऋषिस्युं वरिउं रे, अडतां संघट थाय रे कूडउ
कहि रे ते किम परणी पहिरावसि चूडउं... ४

कहि देउलना देवता रे, अहो अहो ए वरिउ सार रे,
एणी कांइ रे नावि चूकी, सो तिहां साखवि रे,
तेणी तेम कहीनइ घनघटा रे, कीधी घोर अंधार रे,
देवि गाजी रे वरसावी वृष्टि रयणऩी रे, हुं छई... ५

गरजारव तिम वीजथी रे, बीहती धनवती त्यांहि रे,
बाला काने रे सुणीनइ, कट कट कटिना चाला रे,
जाणि उन्हालि नदी रे, जिम वहइ बे तटमांहि रे, ऊंडी
राखी रे तिउ रही ऋषिना पग विचे रे मूंडी... ६

तव मुनिवर तेह चालीयउ रे, सोपसरग लहीं काम रे,
तिहांथी रहिता रे लूटारी व्रत लूंटसिए रे,
इहांथी इम चिंती अणगारजी रे, गयउ क्य बीजइं गाम रे, दोडी
केडइ रे कन्याउ सघली मेघ रहइ रे, मोडी... ७

देउलमांहीथी नीसरी रे, आविउं पूरनउ राय रे,
ते तंइ राशि रे, रयणनी ते लेवानइ हेतइ,
रयण लीइ जव राजीयउ रे, तिहां सुरवाणी थाय रे,
ते तइ मारे मि दीधी छे धनवतीनि हेतइ रे.. ८

ए ऋषि आर्द्रकुमारनइ रे, परणसि जिणवारि रे, रंगइ
एणे रे रयणे सुख विलसि ते, संगइ
रत्ननइ तनुजा लेयनइ रे, तात गयउ निज ठाम रे, सडइ
जाय रे, राजेसर बिठो मुहुलमां रे मूडइ ९

धनवती प्रतिज्ञा धरी रे, रहि पोतानि गेह रे वारू
आणइ रे भवि ए प्रति माहरी दीहाइ
निरुपम नवमी ढाल ए रे, न्यानसागर कहि नेह रे वारू,
थई रे एकण मनि सांभलउ श्रोतारू... १०

आर्द्रकुमार मुनिनुं पतन

एक दिवस ते नगरमां लाज विना वर वरवानी क्रीडा करती पांचे सखीओ ते ज देवलमां आवी अने बोली के आजे आपणे करमना पारखां करवा रमत रमीए. देवलना बारणामांथी प्रवेश करी जे सखी जे थांभलाने अडशे ते तेनो पति थशे.

भोली मृगलीनी पेठे चारे तरफ पण भमती एवी ते शेठनी पुत्री धनवती पोताने वरवा योग्य कोई पण थंभने जोई शकी नहि, पछी साचा पतिनी पेठे पोतपोताना स्थंभने नहि मूकती एवी ते सखीओ कहेवा लागी के-हे सखि ! तुं शुं दुर्भाग्यवाली छे ? जे वरने नथी पामती. ते हृदयभेदक वचनने सांभलीने धनवती जाणे के तलवारथी भेदायेली होय के विंछीथी दंश देवायेली होय अथवा तो अग्निवडे दझायेली होय एम क्षणमात्र स्थिर थईने ऊभी रही. पछी त्रास पामेलां मृगना सरखा नेत्रवाली ते धनवती आमतेम भमतां पूर्वना पुण्ये देखाडेला ते ज मुनिने एकांतमां उभेला दीठा हे सखीओ ! हुं आने वरी छुं. हवे क्यारे पण एने हुं नहि मूकुं. तमे पण जो पतिव्रता हो तो पोतपोताना वरने त्यजी देशो नहीं.

एम ते कन्या कहेती हती एवामां "ते सारुं वर्युं" एम कहेती एवी देवीओ गर्जनाथी आकाशने जर्जरित करतां रत्नसमूहनी वृष्टि करी. सखीओ गर्जनाथी त्रास पामी एटले धनवती बे कांठानी वचमां रहेली शरदऋतुनी नदीनी पेठे मुनिना बे पगनी वचमां संताई गई.

मुनिए विचार्युं के अहीं क्षणवार रहेवाथी पण व्रतरूपी वृक्षने महान पवन जेवो आ मने अनुकूळ उपसर्ग थयो, माटे अहीं वधारे वार रहेवुं योग्य नथी. महर्षिओने कोई स्थळे निवास करीने रहेवानी आस्था होती नथी. तो ज्यां उपसर्ग थाय त्यां रहेवानी तो

आस्था क्यांथी होय ?" पछी हाथी आकडाना थंभना बंधनने जेम तोडी नाखे तेम दिव्यवाणीथी चकित थयेला ते मुनि बालाने छोडावी नांखीने त्यांथी वेगे करी नासी गया.

जेनो कोई स्वामी नथी एवा धननो स्वामी राजा होय छे. एवी नीतिनो जाण राजा नगरवासी लोको सहित त्यां आवीने ते धनने लेवानी ईच्छा करवा लाग्यो. राजपुरुषो राजानी आज्ञाथी ज्यारे ते द्रव्य लेवा देवालयमां आव्या, त्यारे देवीए तिरस्कारपूर्वक कह्युं के, "हे भूप ! तुं शुं ईच्छा करे छे ? में आ धन धनवतीने वरवाना उत्सवमां आप्युं छे माटे कन्यानो पिता देवदत्त ए धनने ग्रहण करो. बीजा कोईपण नहीं." ते सांभळी राजा विलखो थईने पाछो गयो एटले देवदत्त शेठे ते सघलुं धन ग्रहण कर्युं. पछी धनथी परिपूर्ण थयेल देवदत्त शेठ अने कौतुकथी आश्चर्य पामेला सर्व महाजन पोतपोताने घेर गया. अहो ! कोई ठेकाणे कन्या पण फल आपनारी थाय छे. आ भवमां मारो आ ज पति थशे एम प्रतिज्ञा करी धनवती पोताना स्थानके गई. निरुपम नवमी ढाळमां न्यानसागरे जे कह्युं ते हे श्रोताजनो ! तमे एकाग्रचित्ते सांभलो.

दूहा

मागा मोटा दामथी, दिन प्रति रुडइ साज,
वड वड व्यवहारी तणा, आवइ धनवती काज... १

तव पूछइ तातनइं, आवइ ए किण काम,
तनुजा तुझ वरवा भणी, कहावई ठामोठाम... २

सा कहि तात सुणो तुम्हे, मत जोज्यो वर कोय
देउलि जे देवे कह्यो, इण भवि भरतार सोय... ३

सागवन लीजी सहि, जो पति न मलइ तेह,
सपरि शील सोहावइ, राखीजि जग रेह... ४

ढाल-१०

देशी-थारा मोहलामांथी मेह झरुखि वीजली हो लाल...

सुणि पुत्री कहे तात, तेह तो छई यती हो लाल, तेह.
हठ त्यजी मउकिं ए वात, केम वरसि व्रती हो लाल, केम.. १

सुपनइं शीलनइं भंगि, जेह मुनिवर करइं हो लाल, जे.
कुसुंमणा मनि रंग, काउसग तिण परइं हो लाल, का... २

वली इरियावही जास, स्त्री संघट्टि उपजई हो लाल...स्त्री
ते किम रही घरवास, गृहस्थ किम नीपजइ हो लाल... गृ... ३

कहउ हवइ मिलसि क्यांहि, तेह पुरि पुरि फरइं हो लाल ते....
रहइं वनटवीमांहि, जेह गिरिकंदरई हो लाल... जे ४

जो कदि भावी भोगि, ते फिरतउ वसि हो, लाल ते...
ओलखशो किण जोगि, सि हुकमति फावसि, हो लाल सि... ५

पगतलि पदम छई तास, तातजी सांभळो हो लाल, ता...
ओळखशो छई आस, छोडि दिउ आमलउ हो लाल, छो... ६

सुणि वत्स जो तई एम, प्रतिज्ञा ए करी, हो लाल प्र.
तउ हवई ते मिलइ जेम, करउ जे परखसी, हो लाल... ७

मांडउ शत्रुकार, दान देवउ सदा हो लाल... दा.
श्रमण माहण तिण ठार, आवेसि सरवदा हो लाल... आ. ८

मांडइ कुमरी तेह, दानशाळा भणी, हो लाल दा.
भिक्षा वरसवि गेह, आवइं तिणि मसिवली हो लाल... ९

देता इणिपरि दान, बार वरसा तरइ हो लाल, बा...
फिरतउ थानोथान, तेहनइ मंदिरइ हो लाल ते... १०

किम आविउ ऋषिराज, तेह कहिस्युं हवई हो लाल, ते.
न्यानसागर शुभ काज, ढाल दसमी कहई हो लाल... ढा... ११

धनवतीनो निर्णय

हवे धनवती वरवा योग्य थवाथी तेने वरवाने घणा वर तैयार थईने आव्या एटले तेना पिताए तेने कह्युं के आमांथी योग्य वर अंगीकार कर. ते सांभळी धनवतीए पिताने कह्युं के, "हे तात ! पूर्वे मे जेने वरेल छे. अने भय पामेली हुं जेने शरणे गई छुं. वरवाना द्रव्यने ग्रहण करता एवा तमे पण जेने माटे मने आपी छे, ते ज मुनीश्वर महारो पति थाओ. तमे शा माटे वृथा खेद करो छो ? ते महर्षिने हुं मारी रुचिथी वरी

चूकी छुं, अने तमे पण द्रव्य लेवाथी तेमां संमत थया छो. वली शुं तमे नथी सांभल्युं के राजाओ एक ज वार बोले, मुनिओ एक ज वार वंदे अने कन्या पण एक ज वार अपाय- आ त्रणे बाबतो एक ज वार थाय छे." जो पति ना मळे तो तेनी पाछळ बळीने मरी जाय छे पण शीलने सोहावे छे.

एवा ते पुत्रीना निश्चयने जाणी उत्तम एवा देवदत्त शेठे कह्युं के-हे डाही पुत्री ! कहे, वायुनी पेठे भमता एवा ते मुनिने शी रीते ओळखवा ? पुष्पमां भ्रमरनी जेम ते नवनवा स्थानमां फरे छे. ते मुनि पाछा अहीं आवशे के नहीं ? कदी आवशे तो शी रीते ओळखाशे ? तेमनुं नाम शुं ? तेनुं अभिज्ञान शुं ? तेवा भिक्षु तो केटलाय आवे छे.

धनवतीए घणी लज्जाने लीधे मंद मंद वचने कह्युं- हे तात ! ते देवालयमां देवतानी गर्जनाथी हुं भय पामी हती, तेथी हुं तेमना चरणने पकडी रही हती, ते वखते तेमना चरणमां एक चिह्न मारा जोवामां आव्युं छे. माटे हे पिता, हवे तमे एवी गोठवण करो के जेथी हुं प्रतिदिन जता-आवता साधुओने जोई शकुं. दानशालामां निरंतर तमारा तरफथी दान आपती एवी हुं अवसरे तेने पण पामीश. कारण दान फलवालुं छे.

भिक्षुको दानेश्वरी पुरुषोना घरने विशे भमे छे, एम विचारीने शेठ बोल्या के-हे पुत्री ! जे कोई मुनिओ दानशाळामां आवे ते सर्वे मुनिओने तारे स्वयं ज भिक्षा आपवी. पितानी आज्ञाथी दानशाळा खोलावी अने पोताना हाथे ज मुनिओने दान आपवा लागी. ते धनवती पण त्यां आवता एवा साधुओने शुद्ध अन्न-पाणी आपीने तथा नमीने पगीनी पेठे पगनां चिह्नने जोवा लागी. जो के ते धनवती तो साधुओने इच्छित एवां अन्नपानादिक आपवाथी कल्पलतारूप थई. परंतु साधुओ तो श्रीमतीनी ईच्छाने अपूर्ण करवाने लीधे त्यां निष्फल थवा लाग्या. ए प्रमाणे अरण्यमां रहेली मालतीनी पेठे निष्फल जती युवावस्थावाली धनवतीए आशा वडे ज अनुक्रमे बार वर्ष निवृत्त कर्या. आ प्रमाणे दसमी ढाल पूर्ण थई.

दूहा-सोरठा

भोग करम वसि सोय, आविउं तिहां अजाणतउ,
रही मुख साहमउं जोय, ऋषीनई देखी धनवती... १

जेम चकोरी चंद, निरखी निरभर नेहस्युं,
तिम मुनि मुख अरविंद, निरखी निजपति ओलख्यो... २

ढाल-११

देशी- उंची मेडी रही रही हो राजि, दीवडउ बलि रे,
आकाशकलाल तणी मांहि को सहि मोहीओ हो लाल...

धनवती उठी ध्यायनइं हो राजि, लागी ऋषिनइं पाय, सुवासिनी बोलई
विरहणि व्याकुली हो राजि, कीजइ एम किम नाह, सु. बो.
निरधारी नाखी गया हो राजि, देवल थाकिउं पुलाय सु... १

निठुर इम थई नहीं हो राजि, एकलडी एण ठाय, सु. बो.
जोवनवय युवती घणुं हो राजि, अबला तो अकुलाय, सु.बो. २

जिण दिनथी तुम्हनईं वर्या हो राजि, देउलमांहि देव, सु.बो.
तिण वेला हइडइ लख्या हो राजि, संभारु नितमेव, सु. बो.... ३

जलधरनी परि वाटडी हो राजि, जोती तुम्ह गुण दास सु. बो.
पाउधारो प्राणेसरु हो राजि, परणी पूरउ आस, सु. बो... ४

कहि ऋषि तेह तो हुं नहीं हो राजि, होसि बीजउ कोय, सुश्राविका अडीइ
मुज सरीखा मुनि छई घणा हो राजि, हीयइ विचारी जोय, सु.अ. ५

सांसारिक सुख भोगनी हो राजि, प्रार्थना करि प्राहि, सु.अ.
साधुनउं शील भंजावता हो राजि, रुलसिउं दुरगतिमांहि, सु. अ. ६

कहि कुमरी जउ मूहनइ हो राजि, छटकी देशउ छ्येह, सु. बो.
तउ तुम्ह हत्या आपसिउं हो राजि, अगनि प्रजालीस देह सु. बो. ७

पहिलउं व्रत प्रीउजी कहउ हो राजि, रहसि इणी परि केम सु. बो.
बोलिनि जाउ छउ नरटी हो राजि, बीजउं पण गयउं एम, सु.बो. ८

चोरी लीउं चित्त माहरुं हो राजि, त्रीजउं भांगिउं तेण, सु.
रामा हृदयमांहे वसिया हो राजि, गयउं व्रत चउथउं एण सु... ९

दीयां तुम काजइ देवता हो राजि, वृष्टि करी मणि जेह, सु.
तुम्हे कहउं छुं वती हो राजि, पांचई व्रत गयो एह, सु... १०

जीवन जूठु बोलउं किसउं हो राजि, तेही ज थे नरहंस, सु.
पगतलि पदमइ ओलखाउ हो राजि, थे मुझ सिर अवतंस, सु... ११

तेहवइं तिहा कणि आवीया हो राजि, ईभ्य सेठ ततकाल सु.
न्यानसागर कहि सांभलउं हो राजि, एह अग्यारमी ढाल सु... १२

आर्द्रकुमारमुनिनुं वसंतपुरमां आगमन

एवामां पृथ्वी उपर विहार करता अने विस्मृतिथी विकल थयेला आर्द्रकुमार मुनि दैवयोगे ते ज वसंतपुर नगरे आव्या. भमरो उत्तम पुष्पवाला वृक्ष तरफ जेम जाय तेम भोगावली कर्मथी भ्रमित थयेला मनवाला आर्द्रमुनि ते दानशाला प्रत्ये न बोलाव्या छतां पण गया. धनवती ए पण मुनिने हर्षथी शुद्ध अन्नपान वहोरावी अने नमन करी तेमना जमणा पगमां रहेला चिह्नने जोईने सारी रीते ओळखी काढ्या. तत्काल प्रगट थयेला रोमांचथी तुटी गया छे कंचुकीना बंधन जेना, तथा हर्षना आंसुथी विरहाग्निने शांत करती होय एवी ते श्रीमती मेघना आववाथी मोरलीनी पेठे नाचती, चकोर पक्षी जेम चंद्रने नीरखी रहे तेम ते मुनिना मुखारविंदने नीरखीने कहेवा लागी के हुं जाणुं छुं के दानथी पापो नाश पामी जाय छे ए वचन सत्य छे.

धनवती बोली के, "हे स्वामि ! भले पधार्या ! भले पधार्या ! तमे आटला घणा वखत सुधी क्यां रह्या हता ? ते देवालयमां हुं तमने वरी हती. माटे तमे ज मारा पति छो. ते वखते तो हुं मुग्धा हती. तेथी मने पसीनाना बिंदुनी जेम त्यजी दईने तमे चाल्या गया हता, पण आजे सपडाया छो, हवे करजदारनी जेम अहींथी शी रीते जशो? हे नाथ ! ज्यारथी तमे दृष्टनष्ट थया हता. त्यारथी प्राणरहितनी जेम मारो बधो काळ निर्गमन थयो छे. माटे हवे प्रसन्न थईने मने अंगीकार करो. ते छतां पण कदी जो क्रूरताथी मारी अवज्ञा करशो तो हुं अग्निमां पडीने तमने स्त्रीहत्यानुं पाप आपीश."

तेटलामां तरत आवेला धनवतीना भाईओ मुनिने कहेवा लाग्या के- हे मुनि ! तमे भोजननी ईच्छावाळा छो ? अने भोजननी आपनारी तमने मली छे, तो पछी केम विमुख थाओ छो ? हे मुनि ! तमे ज खरेखरा चतुर छो,जे ते वखते आ बाल्य वस्थावालीने त्यजीने गया हता अने हमणां प्रकट यौवनवाली जाणीने पारेवानी पेठे आव्या छो. जो तमे चोथुं व्रत पालवा माटे एने त्यजो छो तो अमने खेद थाय छे के-एम करवाथी तमे पहेला व्रतने भंग करो छो, अने तेम करवाथी तो बे पगनुं रक्षण करवा जतां मस्तक लेपाय छे. " अरे अरे ! तमे शुं महारा व्रतने भांगो छो ? हुं ते नथी." एम कहेतां एवा मुनिने कन्याए कह्युं के-आगलथी तमारा पांच व्रत भांगेला छे.

"बादर जीव एवा महारे विशे कृपा त्यजी देनारा तमने पहेलुं व्रत क्यांथी होय? अने ते हुं नथी, एवुं वचन तमे बोल्या तेथी बीजुं व्रत पण हारी गया छो. तथा महारा चित्तरत्नने चोरता एवा तमने त्रीजुं व्रत क्यांथी होय ? वली स्त्री एवी महारा हृदयमां स्थान करनारा तमारुं चोथुं व्रत पण नाश पाम्युं छे. वली तमारा माटे देवताए रत्न अने मणिनी वृष्टि करी तेथी पांचमां व्रतमां पण भांगो आव्यो. तेथी तमारा पांचेय व्रत निष्फल गया छे."

वली मने अंगीकार करो तो पहेलुं व्रत जीवे, अथवा ते हुं नथी, अने बीजा अर्थमां मनुष्यरूप हंस एवां तमारां वचनथी तमे जे जणाव्युं छे. जे हुं हंस छुं, तो वळी ए हंस पण हंसीना संबंधने योग्य छे. में तमारा पगमां पद्मनुं चिह्न जोई तमने ओळखी लीधा छे. तमे मारा मस्तकना मुगट समान छो. ते समये श्रेष्ठी त्यां आवे छे ए प्रमाणे अग्यारमी ढाल पूर्ण थई.

दूहा

सेठई जई नृपनइं कहिउं, देउल माहइं जेह,
धनवतीइं ऋषिनइं वरिउं, घर आविउं छेह तेह... १

ढाल-१२

राग-केदार

देशी-सुमति सदा दिलमां धरो....

एह मनोरथ पूरवउ, विनवउं करजोडि, सोभागी
थायइ सोहागणि धनवती, सरिखा सरिखी जोडि, सोभागी
एह मनोरथ पूरवउ, ए आंकणी... १

कुमरीइं तस ओलखउ, नथी अनुमतउ सोय, सोभागी
आविउं मनावउं भूधणी, जिम जमाई होय, सोभागी एह... २

भूमीपति आवी कहई, मानो जी महाराज, सोभागी
वरउ कन्या वेला सरई, जो करुणासिउं काज सोभागी एह... ३

जो नहीं एहनईं आदरो, तो सुणज्यो एक साच, सो.
सागवान लेसि सही, ए कुमरी हुं वाच, सो. एह.. ४

ते पातक तुम्हनइ हुंसई, वरसिउं केण उपाय, सो.
ए हठ मूकी दिउ तिणइ, दया धरम दुखाय, सो.एह... ५

छि सुविशेष तुम्हनि एणी, दया धरम सुविसाल, सो.
तिणि सुपुरुष परणउ तुम्हे, मूकी दिउं ढंकचाल, सो. एह.. ६

ते निसुणी मन चिंतवई, अहो अहो कीजइ केम, सो.
भोगकरम देवइ कहिउं, आगलि आविउं एम, सो. एह.. ७

विण वेदइ किम छूटसिउं, जेह निकाचित बंध, सो.
भोगकरम विण भोगवि, करइ चारित्तमां धंध, सो. एह.. ८

राग केदारई बारमी, न्यानसागरइं कही ढाल, सो.
हवई ऋषि आर्द्रकुमारजी, किम परणई छई बाल, सो. एह.. ९

कर्मविपाक

पछी कन्याना पिताए तथा कौतुकथी राजाए त्यां आवीने अतिशय विनंती करायेला एवा ते महामुनि देवतानां वचनने संभारवा लाग्या. सर्वे लोकोए गढनी पेठे घेरी लीधेला होवाथी नासी जवाने असमर्थ ते मुनि नगरमां रह्या, अने सालाओए मुनिना वेशने मूकाव्यो. पछी ते आर्द्रकुमार मौनपूर्वक उभा हता.

धनवती ए पोताना मनोरथ पूरवा करजोडीने राजाने विनंती करे छे. पछी राजाए अने महाजने आवी ऋषिने विवाह माटे प्रार्थना करी. एटले ते मुनिए व्रत लेवाना समये दिव्यवाणी थई हती ते याद करी. ते वाणी संभारीने तेमज सर्वनो विशेष आग्रह जोईने विचारे छे के-जे निकाचित भोगकरम भोगव्या विना छूटी शके तेम नथी. त्यार पछी ते आर्द्रकुमार अपवादना पदथी होय तेम धनवतिने परण्यो. अहो ! समुद्रना पूर सरखो कर्मविपाक कोना वडे रोकी शकाय ? कन्याने वरवामां देवी पासेथी राजानी साक्षीपूर्वक जे धन प्राप्त थयुं हतुं, ते धन देवदत्त शेठे ते वखते हर्षथी आर्द्रकुमारने आपी दीधुं, केदारागमां बारमी ढाल पूर्ण थई. हवे ते मुनि आर्द्रकुमार केवी रीते परणशे ते श्री न्यानसागर कवि आगलनी ढालमां बतावशे.

दूहा

हीनदीन वचने करी, हवई राजनई सेठ,
प्रारथना मुनिनइं करइ रहिउं ऋषि नीचि द्रेठि... १

मानिउं मानिउं सहु कहि, कीधउ सफल प्रयास,
मोटा एह मया करइं, मूकइ केम निरास... २

नृप कहि सामग्री सजउ, वीवाह करवा वेग,
छई सारिउ वर राजीयउ, महीपति मननइं गेह... ३

ढाल-१३

राग-सारंगमल्हार

देशी-दुलह किवसण दुहणी राधिकाजी...

सोहवि सोहवि मिलिनइं आर्द्रकुमारनीजी, पीठी चोलई हो त्यांहि,
सोवन सोवन पीठइ बिसी करीजा न्हवरावईं ते तांहि सो... १

बावन बावन चंदन लावइ अगरजाजी, चोआनई हो चमेल,
रतन रतन जडीत सिरि ठावइं सहेरोजी, नयणि अंजण धरइं सो... २

भूषण भूषण पहिरावइं भामिनि मिलीजी, वागा अवल चुणाय,
सुंदर सुंदर तूर तिहां बाजई घणांजी, गोरी थोके हो गाय, सो... ३

तुरत तुरत विसार्या वरवहू माहरईजी, घडीउं लगन हो लीध,
मंगल मंगल चारइं वरत्या चोरीइजी, आरिम कारिम कीध, सो... ४

भरता भरतानई कन्या बेहुं एकठाजी, आरोगईं हो कंसार,
मिसरी मिसरी सिउमांहे धृत मेलीआजी, जाणे अमीरसो संसार, सो... ५

सहुको सहुको कहिइं धन ए धनवतीजी पामी, पुण्य प्रमाणि
आदन आदन देसन तणउ राजीओजी, पति भलउं इंद्र समाणि, सो... ६

इणीपरि इणीपरि सुंदरी गावई सोहलोजी, सारंगनइं मल्हार
तेरमी तेरमी ढालइ न्यानसागर कहीजी, परण्या आर्द्रकुमार, सो... ७

आर्द्रकुमारना लग्न

राजा अने शेठ मुनिने प्रार्थना करे छे त्यारे ऋषि नीची दृष्टि राखे छे. “तमे वात मानो” ए प्रमाणे विनंती करे छे. ऋषि तैयार थाय छे. पछी राजा सामग्री सज्ज करीने विवाहनी तैयारी करे छे.

बंने ठामे लग्ननी जोरदार तैयारी चाले छे. श्रेष्ठीओ बधां एक ज सहोदरानी जेम चित्तना भावथी लग्ननी सजाई करे छे. एकमतथी बधे तैयारी चाले छे. विवाह माटे मोटा सुंदर मंडपो रचाव्या छे. पंचवर्णना चंद्रुआ सुंदर शोभी रह्या छे. संध्याना समये वादळामां रंग बेरंग कलरो जेम शोभायमान थाय तेवा मंडपो शोभी रह्या हता. मंडपना चंद्रुवामां आभला शोभता हता. जाणे तारागणे धरती उपर आवी वास कर्यो होय तेवुं लागतुं हतुं. मंडपमां झाकझमाळ मोतीओनी माळा जाणे चंद्रमानी चांदनीनो विस्तार थयो होय तेवी शोभती हती. तोरणो पवनना सुसवाटाथी हली रह्या हता. चंचळ तोरणो वरराजाने जल्दी आववानुं आमंत्रण आपी न रह्या होय तेवा दीपी रह्या हता. मोतीना साथीआ चारेबाजु पूराव्या हता. लालरत्न वृक्षमां सुंदर फळो विकसीत थयेलानी जेम वधु शोभाकारी बन्या हता.

आर्द्रकुमारना लग्न समये मांडवाना मंगलमुहूर्त करवामां आव्या. सुवर्णवर्णवाळा एवा तेमना शरीरे पीठी चोळी त्यारे ते सुंदर तन वधु देदीप्यमान बनी गयुं. पूर्व दिशामां रवि उगे. तरतनो उगेला रविना सुवर्ण किरणोनी जेम कुमारनुं शरीर सुंदरताने धारण करतुं हतुं. बीजा कुमार ने कुमारिका ते वखते भेगा थया हता. ते बंने देव-देवी जेवा शोभता हता. बधांए शुभक्षणे मंगल स्नान कराव्युं. तेमना वाळमां अनेक सुगंधी पदार्थोथी वासित तेल माथामां नांख्युं छे. धूपनी अंदर अगरु ने कपूर नाखवाथी धूप वासित बने छे. तेम सुगंधथी आर्द्रकुमारनुं आखुं शरीर वासित बन्युं हतुं. बीजी बाजु वहुना पक्षमां कन्याओए सुंदर वाळने शणगारी फूलनी माळाओ गोठवी हती. सहुसहुने अनुरूप बंने पक्षे शृंगार धारण कर्या हता. जाणे कामदेवे बे रूप धारण कर्या होय तेवु भासतुं हतुं.

नदीमां सफेद फिणथी लावण्य विस्तार पामे छे तेम नवलखा हारथी आर्द्रकुमारनो देदार वधु शोभतो हतो. आखु अंग चंदनथी लेपेलुं हतुं. मौक्तिकथी सर्वांग शोभतुं हतुं. जेम शशी तारागणथी शोभे तेम आर्द्रकुमार शोभी रह्या हता. बे वस्त्र सुंदर पहेर्या हता. रत्नजडित मुगट मस्तके शोभे छे. विवाह मंगलना सूचक हता. जातिवंत अश्व उपर आरोहण करी मयुरनुं छत्र माथे धारण करी आर्द्रकुमार परणवा चाल्या. सोहागणनारी मंगल गाती हती. भेरी भुंगल वागता हता. शरणाईओना सुर तेना शब्दथी दिशाने भरी देता हता. जुदां-जुदां वाजाना सुंदर अवाजथी आखुं गगन पूराई गयुं हतुं.

सहु जानैया मंडपे आवी ऊभा रह्या. सुहागण नार अर्ध्य आपती हती. एटले दहीं आदिनुं शुकन आपती हती. लग्ननी वेळा थई, कन्या सावधान कही तेने चोरीमां

लाववामां आवी अने हस्तमेळाप थयो. ते वखते बधा हर्षायमान थया. पछी चोरीमां चार फेरा फेरव्या. चार फेरा चार गतिमां भमाडनार छे. चार मंगल वर्त्या पछी अग्निमां होम हवन गोर महाराज करे छे. हस्तमेळाप वखते मात-पिता तरफथी अढळक द्रव्य अपाय छे. पोतानी आबरू प्रमाणे दायजो आपे छे. त्यारबाद वर-कन्या साकर अने घीथी मिश्रित अमृतसमान कंसार आरोगी रह्या छे.

सर्वे नगरजनो धनवतीने धन्य धन्य मानी रह्या छे. अने कहे छे के-खरेखर तेना पुण्यना योगे तेने आर्द्रदेशना इंद्र समान एवा आर्द्रकुमारनी साथे लग्न थया. आ प्रमाणे सारंगमल्हार रागमां श्री न्यानसागरे तेरमी ढाल वर्णवी जेमां आर्द्रकुमारना लग्न महोत्सवनुं वर्णन कर्युं.

दूहा

पंचविषय सुख भोगवई, नाटक गीतविलास,
भोगकरमनइं निरजरई, रहितो रंग आवास... १

अनुक्रमि प्रसविउ धनवती, सुत सुरकुमर समाज,
वरस आठनउ ते थयउ, वधतई सुगुण निधान... २

तव भरता त्रीयनइं कहि, ए सुत तुम आधार,
अम्हनईं आपो आगन्या, लीजइ संयम भार... ३

ढाल-१४

देशी-ऋतु पावस आई, बोल न लागे मोर वयण रयणहइ...

विलखाणी तब धनवती, सु. विरहिनि कयो रहे,
गदगदसिरि अबला कहई, सु. कौन करइ तुमहोरि,
सुनि पीउ सुखदी, बोली हो करजोडी, आंकणी... १

लोचन की जलधारसो, सु. सींचे पिउकी देह, सु.
प्रीतम थे जब विछुरी, सु. जब जग सूना एह, सु... २

महुल अटारी बंगला, सु. बाग बगीचे गोख सु.
कंत विना किन कामके, सु. जंगल से सब जोग, सु... ३

तो लगि माननीहको, सु. मात-पिता-सुत-वीर, सु.
ज्यों लगि सिर को सेहरो, सु. प्रतपो शिरपति धीर...सु. ४

एक नर दूजी नायका, सु. तीसरी सरिता देखि, सु.
चोथी परंजन पांचमी, सु. सब वनराजी पेखि सु... ५

पांचो कुं यौवन गई, सु. बहुरिम गावि हे पंच सु.
नर को धनपति नारी को, सु. इन में नहीं खलपंच सु.... ६

सरिता कौ वरसा कहु, सु. परजा कौ नृपनाई, सु.
ऋतु वसंत धनरायकौ, सु. आने यौवन ठाई सु... ७

तिनि अवधारो विनती, सु. जब चजौथी वय होय सु.
तब दीक्षा व्रत लेवज्यो, सु. रामाईयों कहे रोय सु... ८

नेहबाण पति उपरइं, सु. छोरि नौ नौ भाति, सु.
न्यानसागरई कही चौदमी, सु. ढाल धूमालि की जाति, सु... ९

धनवतीनी व्यथा

पूर्वभवनी भार्या एवी ते धनवतीनी साथे भोग भोगवता तेमने अवसरे गृहस्थाश्रमरूप वृक्षना फलरूप पुत्ररत्ननी प्राप्ति थई. ए बाळक सौभाग्यथी शोभतो देवकुमार जेवो लागतो हतो. रूप अनुपम हतुं. अनुक्रमे काळ पसार थतां ते बाळक आठ वर्षनो थयो त्यारे पोतानो उद्धार करवानी ईच्छावाला आर्द्रकुमारे धनवतीने कह्युं के-हे प्रिये ! तुं पुत्रवाळी थई छे. माटे मने मूके अने रजा आपे तो हुं फरीथी व्रतने आदरुं. आ पुत्र तने सहायरूप थशे. माटे हुं उत्कृष्ट चारित्रधर्मनी आराधना करी कर्मोनी निर्जरा करी शकुं.

पतिना आ प्रकारना वचन सांभळती धनवती शोकथी आंसुयुक्त नेत्रवाली, गद्गद्स्वरे रूदन करती, वलखा मारती कहेवा लागी के-"अरे रे ! हवे अमारी संभाळ कोण करशे ? तमारा विना मारे माटे आखुं जगत शून्य छे. महेल, बंगला, बाग, बगीचा बधुं ज कंत विना जंगल समान छे. ज्यां सुधी माता-पिता पुत्र के पतिनो सहारो होय त्यां सुधी सुरक्षा होय छे. अबला स्त्रीने एक क्षण पण पतिनो विरह सहन करवो शक्य नथी."

कवि कहे छे-नर, नायिका, नदी, मेघ, वनराजी आ पांचने निरखतां युवानी खीले छे. पुरुषोने धनपति थवानी ईच्छा होय छे, ज्यारे नारीने आवा कोई प्रपंचनी अपेक्षा नथी. नदीने वर्षानी अपेक्षा होय छे. प्रजाने राजानी अपेक्षा होय छे. वसंतऋतु वनराजाने

यौवनवयमां लावे छे. तेथी तमे अमारी विनंती ध्यानमां लो. ज्यारे चोथी वय एटले के वृद्धावस्थामां दीक्षा व्रत लेजो. आ प्रमाणे स्त्री रडती रडती आर्द्रकुमारने विनंती करे छे. खरेखर संसारनी मोहमय जालमांथी छूटवुं घणुं ज कपरुं छे. रागना बंधन तोडवा अघरा छे. दीक्षा माटेनी अनुमति मेळववी ए सत्वशालीनुं ज काम छे. स्त्रीना भयंकर नेहपाशमांथी छूटवुं ते देवताओने पण दुष्कर छे. आ प्रमाणे जुदा-जुदा प्रकारे पतिने संसारमां राखवा माटे तेमना उपर नेहरूपी बाण फेंके छे. विरहना वेदनवाळी धूमालि रागमां चौदमी ढाल पूर्ण थई.

दूहा

आर्द्रकुमार वलतुं कहई, ए मूकी द्यो वात,
चतुरी चारित्र लेयस्युं, कालि अम्हे परभात... १

पाडोसण ना घर थकी, शोकातुरि सा बाल,
आणी पूणी रिहरीउ, मांडिउ घरि ततकाल... २

थोडी सी एक को कडी, कातीनइं करी जाम,
बाहिरथी रमतउ थकउ आविउ बेटउ ताम... ३

ढाल-१५

देशी-वाल्होजी वाई छि वांसली रे...

माजी ए स्युं मांडिउं तुम्ह रे, आपणडइ धरि आज,
कहीउं हंतु कांतणउ रे, कां लोपी कुल लाज माजी... १
आंकणी-माजी ए स्युं मांडिउ तुम्हे रे,

सुणि वत्स सा कहि दुःख भरी रे, पीउ पहुतई परलोकि,
ए आधार छई नारिनइ रे, वस्त्र आभरण ए रोक, माजी... २

ते निसुणी सुत ईम कहे, जयवंतई मुज तात,
ए अपशुकन करउ किशा रे, मूकइ रहईरीउ मात, माजी... ३

सुणि सुत ते तो ताहरउ रे, जउ घरि कुशलउ होइ,
तउ किम मांडीयई रतनसी रे, सूतनिं इम कही रोय, माजी... ४

मा पोढओ छि माहरो पिता, आ हींडोला खाट,
पालसि लाड ए माहरा रे, कहउ छउ इम किण नाट, माजी... ५

उठी जायई छई तुज पिता रे, सुणि दुःखभंजक पुत्र,
तुं लघुबाल लहितो नथी, किम चलसि घर सुत्र, माजी... ६

लावउं सूत्रनी कोकडी रे, बांधी राखउं पाय,
तिहां रही कहउ किम जाईस रे, नासीनइ मुझ ताय, माजी... ७

पग बे सूत्रने तांतणे रे, वींटीया वारोवार,
मनमां आर्द्रकुमारजी रे, चिंतइ मोह विचार, माजी... ८

म्हारी मानइ मुजनइं त्यजी रे, कहइ किहां भसिउ हेव,
किम मूकी ए मोहिनी रे, अहो अहो अरिहंत देव, माजी... ९

वींटिया तंतु पगि ज जेतला रे, वरस तेतला ताइं,
रहिउं एह बालक वती रे, मोहकर्म लसि आइं माजी... १०

तंतु बार गणतां थयां रे, कहई विनीतानइं ताम,
रहिसिउं बारवरसघरइं रे, आ बालकनइं काम माजी... ११

सुतनइं करइ जाउ आणो रे, इम सुणी धनवती बाल,
न्यानसागर कहि सांभलउ रे, एह पनरमी ढाल, माजी... १२

पुत्रचातुर्य

आर्द्रकुमार वळतुं एम कहे छे के-अमे तो काले सवारे दीक्षा लईशुं. ते सांभळी धनवती पाडोशीना घरमांथी रेंटीयाने लावीने सूतर कांतवा लागी. एटले ते आर्द्रकुमारनो ललितवाणीवालो पुत्र रमतो रमतो बहारथी आवे छे.

बुद्धिमान धनवती(श्रीमती) ते वात पुत्रने जणाववाने माटे रूनी पूणी साते त्राक लईने रेंटीओ कांतवा बेठी ते जोईने पुत्र माताने पूछवा लाग्यो के-हे मात ! पति पुत्र विनानी स्त्रीनी पेठे तुं आ शुं काम करे छे ? वली पिता, भाई, पति अने पुत्र जीवतां छतां तें आ शोक लक्षणवालुं रूदन केम आरंभ्युं छे ? श्रीमती कहेवा लागी के-हे वत्स ! तारो पिता मने त्यजीने क्यांय पण जाय छे. वली हजी पण तुं बालक छे, पति रहित एवी मारे आ रेंटीओ छे, ते ज कायमनी आजीविका छे. हजी सुधी महारुं उत्तम एवुं यौवनपणुं छे. अने दया वगरनो कामदेव छे. वली न उल्लंघी शकाय एवी कुलमर्यादा छे, तेथी हुं नथी जाणी शकती के हवे शुं थशे ?"

हे मात ! हुं जता एवा महारा पिताने वारीश, एम कहेता एवा कोमल बुद्धिवाला बालके माताना हाथथी रेंटीयाने छोडावी नाख्यो. आ प्रमाणे कही लाळथी करोळीआनी जेम ते मुग्धमुख बाळक, चंचल नेत्रवाला, चपल शिखावाला अने कांईक हसता मुखवाला ते पुत्र त्राकना सूत्रथी पिताना चरणने वींटवा लाग्यो अने बोल्यो के, "हे माता ! हवे भय राखो नहीं, स्वस्थ थाओ, हवे में मारा पिताना पग बांधी लीधा छे. तेथी बंधायेला हाथीनी जेम हवे ते शी रीते जई शकशे ?" हे तात ! कहो, तमे समर्थ छतां पण हवे पछी नवीन अवस्थामां विरहथी व्याकुल एवी महारी माताने मूकीने शी रीते जशो ?

बाळकनी आ प्रमाणेनी चेष्टा जोई आर्द्रकुमारे विचार्युं के-जे मारा मनरूप पक्षीने पाशलारूप थई पड्यो छे, जेथी हुं हवे तरतमां दीक्षा लेवा माटे जवाने अशक्त छुं. माटे आ प्रेमाळ बाळके मारा पग साथे जेटला सूत्रना आंटा लींधा छे. तेटला वर्षो सुधई आ पुत्रना प्रेमथी हुं गृहस्थपणे रहीश. पछी तेणे पगना तंतुबंध गण्या एटले बार थया. तेथी बार वर्ष गृहस्थपणामां निर्गमन कर्या. खरेखर मोहनीयकर्मनी माया मोटी छे. आ प्रमाणे श्री न्यानसागरे पंदरमी ढाल वर्णवी.

दूहा

एम वरस चउवीश तिहां, आर्द्रकुमार घरवास,
रही छे हियडइ मन चिंतवई, धिग धिग मोह विलास... १

बार वरस बीजा इहां, रहिउ हुं सुतनइं नेह,
पूरवभव मन इसाथकी, व्रत लई भांगु जेह... २

थयउ अनारय तेहथी, ईण भवि महाव्रत पंच,
जो मिल्या ज्यां सर्वथा, ते छूटीस किण संच... ३

वली देवइं वारीजतइ, हाहा लीधी दीख,
सूतो विषयनइं कादवइं, न पली जिननी सीख.. ४

कूप झंप दीधी खरी, देखत दीवि लेय,
विषय भंजिउं विषथी बूरउं, दुःख अनंता देय... ५

हवि सुतनइं विनीतातणो, अति आग्रहसिउं सार,
अनुमति लेइनइं ग्रहइं, पंच महाव्रत भार... ६

ढाल-१६

(राग-सारंग) देशी-विंदलीनी

ऋषि आर्द्रकुमार एकांगि, आणी समता मनरंगि हो, विचरई वयरागी
जिम कंचूकी नाग उतारी, नासइ न रहइ तिण ठारी हो, वि... १

राजगृहपुरनि राहि, आविउं ऋषि अटवीमांहई हो, वि.
निजसेवक राजकुमार, शत पंच मिल्या तिणि वार हो, वि... २

भय नृप आर्द्रकनउं तेह, लही लाज त्यजी निज गेह हो, वि.
जोई जइ कुमरनी शुद्धि, आणी मन एहवी बुद्धि हो, वि... ३

जोतां बहु देसविदेस, न लही किहां शुद्धि विसेस हो, वि.
अटवीमां मारग पाडी, भर इकठा थया सवि घाडी हो, वि... ४

कहइं प्रणमी ऋषिना पाय, आवउ पुरि करउ हो पसाय हो, साहिब सोभागी
सुणि मुनि कहई पुरि घर केहथी, पामी जई मुगति न तेहथी हो,
समझउ एम जाणी... आंकणी- ५

छई ए संसार असार वली, अथिर कुटुंबपरिवार हो, सम.
केहनउ पिता केहनी माता, केहना सुत केहना भ्रात हो, सम.. ६

स्वारथ सरिजाई नासी, केहनी मामी कुण मासी हो सम...
कृतकरम उदय जव आवई, तव कोय न आडो थावइ हो, सम... ७

हिंसा नई मृषावाद, चोरी मिथुन उनमाद हो, सम.
परिग्रह ए आश्रव पंच, मेली दइ नरकनो संच हो, सम... ८

उपदेस सुणी प्रतिबुद्धा, वयरागी ते थया सुद्धा हो, वि.
सई पांचनइं दीक्षा दि, संघलांनि साथई लेई हो, वि... ९

हवई सपरिवार उल्लासइं, जातां जिन वीरनी पासि हो, वि.
मिलिउ मारगमां गोसालो, कुमती जे पापई कालो हो,
दुरमति दोभागी... १०

निज बुद्धि विकलापित तेणी, जगमांहि प्रगट कर्या जेणइ हो, दु.
श्री वर्धमान जिन केरा, तेहतउ ग्रही दोष धणेरा हो, दु... ११

ऋषि आर्द्रकुमारसिउं वांदइ, आविउ पापी सीहनादइं हो, दु.
ति वारइं ते महामतिवंत, आपइं उत्तर एकांत हो,
सुंदर सोभागी... आंकणी १२

अति क्षुद्र दुष्ट महाकाठउ, नयभृष्ट थयो ते नाठउ हो, दु.
कही राग सारंगई रसाल, न्यानसागरे सोलमी ढाल हो...सु. १३

पांचसो सुभटोने प्रतिबोध

पछी सहेजवारमां बार वर्ष अने गृहस्थवासना चोवीश वर्ष चाल्या गया एटले आर्द्रकुमार विचार करवा लाग्या के-धिक्कार थाओ ! जे प्रमाद वडे आ हुं केम छेतरायो ? जे पूर्वे अभयकुमार मित्रे मने बोधिरत्न मोकल्युं हतुं, ते मारा जागता छतां पण अरे ! विषयचोरोए चोरी लीधुं, पूर्वभवमां व्रत भांगवाथी अनार्य देशमां उत्पन्न थयो. अने हमणां सर्वरीते चारित्रभ्रष्ट थयो छुं. तो हवे हुं कई गतिमां जईश ? वहाण प्राप्त थया छतां हुं डूब्यो, अन्न मल्या छतां हुं भूख्यो रह्यो. वली लक्ष्मी प्राप्त थया छतां हुं दरिद्री रह्यो. जिनधर्म प्राप्त कर्या छतां पण विषयोथी हुं पीडा पामेलो छुं. हाथमां दीवो होवा छतां ने देखतो होवा छतां हुं कुंवामां पड्यो, विषथी बूरां विषयो छे, जे अनंता दुःख आपनारा छे. अथवा हवे चिंता करवाथी शुं ? हमणां पण शुद्धिने माटे करेलुं तप तथा जो भाव छे, तो पाछलथी पण मोक्ष दूर नथी. आम निश्चय करीने सवारे स्त्री तथा परिवारना माणसोनी रजा लईने ते आर्द्रकुमार माळामांथी पक्षीनी पेठे साधुनो वेश धारण करीने घरथी चाली नीकल्या.

जेम सर्प कांचली उतारे तेम परिवारनो त्याग करी आर्द्रकुमार एकला समताने धारण करी, पृथ्वी पर विचरवा लाग्या. वसंतपुरथी राजगृह नगर तरफ जतां मार्गमां पोताना पांचसो सुभटोने चोरीनो धंधो करतां जोया. तेमणे ओळखीने भक्तिथी आर्द्रमुनिने वंदना करी. मुनिए कह्युं-तमे आवी पापी आजीविका शा माटे आदरी छे ? तेओ बोल्या के-' हे स्वामी ! ज्यारे तमे अमने ठगीने पलायन थई गया त्यारे अमो लज्जाथी अमारूं मुख राजाने बतावी शक्या नहिं. तेथी तमारी शोधमां पृथ्वी पर भमतां चोरी वडे आजीविका करवा लाग्या. निर्धन शस्त्रधारी बीजुं शुं करे ?'

मुनि समतापूर्वक, मधुरवाणीथी बोल्या के-'हे भद्रो ! कदी माथे कष्ट आवी पडे तो पण धर्मानुबंधी कार्य होय ते ज करवुं के जे बन्ने लोकने सफळ करे. कोई

महापुण्यना योगथी आ मनुष्यजन्म प्राप्त थाय छे. अने ते प्राप्त थयानुं फळ स्वर्ग तथा मोक्षने आपनार धर्म ज छे. सर्व जीवोनी अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, निष्परिग्रहता ए धर्म तमारे मानवा योग्य छे. हे भद्र ! तमे स्वामीभक्त छो, हुं राजानी जेम तमारो स्वामी छुं. माटे तमे प्रतिबोध पामी अने सत्यधर्मने स्वीकारवा तत्पर बनो.'

वली, आ संसार असार छे. कुटुंबपरिवार अस्थिर छे. कोना पिता ने कोनी माता ? कोना पुत्र ने कोना भाई ? बधा स्वार्थना सगा छे. ज्यारे करेला कर्म उदयमां आवे छे त्यारे कोई आडुं आवतुं नथी. हिंसा, मृषावाद, चोरी, अब्रह्म, परिग्रह पांचेय आश्रव नरकमां लई जाय छे. आ प्रमाणेनो उपदेश सांभळी पांचसो सुभटो वैराग्य पाम्या अने आर्द्रकुमारे तेओने दीक्षा आपी. परिवारसहित ते श्री महावीरस्वामीने वंदन करवा राजगृह तरफ चाल्या.

मार्गमां जतां आर्द्रकुमारने पापथी कालो एवो गोशालो सामो मल्यो. पोतानी बुद्धिथी कल्पेलो मार्ग तेणे प्रगट कर्यो. आर्द्रकुमारनी साथे वाद करवानो शरू कर्यो. ते कौतुक जोवाने हजारो मनुष्यो अने विद्याधरो एकठां थया. ते महामुनिए वादमां गोशालाने निरुत्तर करी दीधो. त्यारे देवता अने विद्याधरोए जय जय शब्द करीने तेमनी स्तुति करी. अने गोशालो नासी गयो. आ प्रमाणे रसाल एवा सारंगरागमां न्यानसागरे सोलमी ढाल कही.

दूहा

तिह्यार पछी जातां थकां, पुर राजगृह पास,
मारगमां आव्या घणां, गज तापसना वास... १

ते अज्ञानवादी इशा, तापस थापइं एम,
बीजादिक बहु जीवनी, हत्या कीजइ केम... २

ते पाहि वनहाथीयउ, बांधी हणई एक,
जा पल पहुंचइ तेहनु, तां भखीई परत्येक... ३

तउं हिंसा थोडी हुवई, एम कहि अज्ञान,
बांधिउ छइ गज एकनई, तिणि दिन तेणइ थान... ४

लोहभार शतक सांकलई, महातरुवरस्युं आणि,
चारइ पगनइं कौटिस्युं, तापसि जूडिउ ताणि... ५

ढाल-१७

(राग-धोरणी) देशी-ऋषभशांति मन मोहीओजी...

तव जनवृंदई परिवर्या, आर्द्रकऋषि हो उपशम भंडार,
देखीनइं मातंग ते, मनमांहि हो चिंतई तिणिवार... १

धन धन ए ऋषिराजजी, तेह धन धन हो नरनारी,
जेह पद वंदी एहना, निज जीवित हो करई जनम प्रमाण... २
आंकणी-धन धन ए ऋषिराजजी

जउ छूटउं बंधन थकी, तउं हुं पणि हो जई छांडु साध,
त्रुटि मुनि अतिशयइं तदा, लोह संकल हो गज थयउ बाध, धन... ३

भगति इसिउं मुनि वांदीनई, पिण उभो हो मुखि अनिमेष
जोइनइ गज वनि गयउ, मानंतउ हो तव निजमति लेख, धन... ४

अतिसय देखी साधुनउ, अति अमरषि हो ताम,
उठिया गज केडि घसिया, वसि नाविउ हो तव वल्यो करि मुखश्याम... ५

कां पंचेद्रिय वध करउ अगन्यानी हो ईम पीओ मेव,
ते सवि तापस बूझविया, करिया सीतल हो वचनामृत सींचि, धन... ६

काढीया उनमारग थकी, शुद्ध मारगि हो थापी करिया संत,
एहवई अभयकुमारजी, नृप श्रेणिक हो तिहा आव्या खंत, धन.. ७

छूटउ गजबंधन थकी, प्रतिबूधउ हो बंधा ऋषिपाय,
इम अतिशय जनमुखि सुणी, आश्रम यदि हो वनि आवु, धन... ८

त्रण प्रदक्षिण देयनइं, वांदीनई हो मंत्रीनई भूप,
बईठा जयणासिउं सहु, तव देसन हो दीइ साधु अनुप, धन... ९

परम भगति देसन सुणी, महीपतिनइं हो मंत्रीसर तेह,
आर्द्रकुमारऋषिनइ स्तवइं, धन धन हो उपशम रस गेह, धन... १०

लोहतणी दृढ संकलई, बांधिउ तउ हो तापसि परपंचि,
अहो अति दुष्कर ए प्रभु, मूकाविउं हो वारण तिरयंच, धन... ११

अहो अहो ए अतिशय घणो, सोभागी हो मांहि सिररेह,
धन धन अभयकुमारनी मैत्री, करी हो तुम्हस्युं धरीओ नेह, धन... १२

राग धोरणीइं सत्तरमी, न्यानसागरइं हो भाखी एह ढाल,
आर्द्रकऋषि हवइ रायनइं, सुणउ कहिसि हो तेह वचन रसाल, धन... १३

गजमुक्ति

त्यारपछी बच्चाथी वींटलायेला हाथीनी पेठे ते पांचसो शिष्योथी वींटलायेला आर्द्रकुमार मुनिराज राजगृह नगर तरफ जता छतां हस्तितापसनामना आश्रममां आव्या. त्यां पर्णकुटीओमां हाथीओनुं मांस तडके सुकवेलुं तेमना जोवामां आव्युं. त्यां रहेला तापसो एक मोटा हाथीने मारी तेनुं मांस खाईने दिवसो पसार करता हता. अज्ञानवादी तापसनो एवो मत हतो के-एक मोटा हाथीने मारी नांखवो सारो के जेथी एक जीवनो ज नाश थाय, वनना धान्य विगेरेथी अने मृग विगेरेने मारवाथी घणा जीवोनो घात थाय छे. एम मानवाथी जे आश्रममां तापसो दरेक पारणे एक हाथीने मारे छे. ते वखते तापसोए भारे सांकलवडे मजबूत बांधेला हाथीए मुनिने दीठा.

पांचसो मुनिओथी परवरेला ते महर्षिने अनेक लोको पृथ्वी पर मस्तक नमावीने वांदता हता. ते जोई लघुकर्मी गजेन्द्रे विचार्युं के-जो हुं बंधनथी मुक्त थाउं तो हुं पण आ मुनिने वंदन करुं. एम हाथीए विचार कर्यो एवामां ज मुनिना अतिशयथी अने तेमना दर्शनथी ते हाथीना लोहमय बंधन जूनी दोरडीनी पेठे तूटी गया. हाथी छूटो थई ते महामुनिने वंदन करवा चाल्यो.

मुनि तरफ बंधन विनानो ए हाथी दोडवा लाग्यो एटले माणसो त्रास पामी आम तेम नासवा लाग्या, परंतु धीरबुद्धिवाला मुनि त्रास पाम्या नहीं. पछी शूरवीरपणाथी, महोटापणाथी अने गति वगेरे गुणोथी जाणी पोते जीतायेलो होय एवा ते हाथीए पोतानी सूंढ वडे मुनिना पगने स्पर्श करीने वंदना करी. पछी मनवडे ए उत्तम मुनिने विशे घणी भक्तिवालो हाथी पोताना घरनी पेठे वनमां पेसी गयो.

आर्द्रकुमार मुनिना ते अतिशयने नहि सहन करी शकनारा जटाधारी, कपटचित्तवाला सर्वे हस्तितापसो त्यां आव्या अने कहेवा लाग्या-हे भिक्षु ! घणां जीवपींडोने भक्षण करनारा तमारी क्रिया व्यर्थ छे. वली धर्मवंत तो अमे ज एक ज हाथी वडे पारणुं करीए छीए. पशु एवा हाथीवडे वंदायेलो तुं पशुं सरखो छे. ते शुं अमने आश्चर्य छे ? एम ते तापसोए कह्युं एटले मुनीश्वर कहेवा लाग्या के-जेवी एक एवी पण महोटा जीवनी हत्या पापने माटे थाय छे, तेवी घणी पण सूक्ष्मजीवोनी हत्या पापने माटे थती नथी. जेवी रीते एक एवी महोटी शिला अंगने भांगवा माटे थाय,

तेवी रीते शुं कांकरानो समूह थाय खरो ? पोताने माटे रांधी राखेला लोकना घरोना विशे मध्याह्न वखते थोडुं थोडुं ग्रहण करता एवा मने हिंसकपणुं लागतुं नथी. हे मांसभक्षको ! प्रथम हाथीने घात करनारा एवा तमने दया नथी, अने निर्दयने पुण्य क्यांथी होय ? तेम ज निःपुण्यने क्रिया ज शी होय ? ए प्रमाणे लाभने ईच्छनारा तमने मूलखामी प्राप्त थई. तो तेमे एक दयाने सेवो. घातक एवा तमाराथी भय पामतो आ हाथी जो कृपाना स्थान अने सौम्य एवा म्हारे शरणे आव्यो तो तेथी तमे शा माटे क्रोध करो छो ? योगसिद्ध मुनिनो प्रभाव कोई जुदा प्रकारनो होय छे. जेणे करीने उत्तम बुद्धइवाला तो दूर रह्या. परंतु निश्चे पशुओ पण तेने सेवे छे. पछी साधुनी अमृतझरती वाणीथी क्षणमात्रमां शांत थयो छे क्रोधरूप अग्नि जेमनो एवा सर्वे तापसोए जैन दीक्षा लीधी.

ते आर्द्रकुमार मुनिने आवेला सांभळी श्रेणिक राजा अभयकुमार सहित त्यां आव्यो. मुनिने भक्तिथी त्रण प्रदक्षिणा करी. गजबंधननी मुक्ति अने हस्तितापसोना प्रतिबोधनी वात सांभळी हाथ जोडवापूर्वक नमस्कार करी मगधपति श्रेणिक राजाए तेमना अद्‌भुत चरित्रनी प्रशंसा करी. आ प्रमाणे श्री न्यानसागरे धोरणी रागमां सत्तरमी ढाल वर्णवी.

दूहा

सुणि नृप वनगज पासथी, जे मूकाविउ आज,
ते दुष्कर कांई नथी, जोतांस्युं नरराज... १

जे महाबलस्युं तांतणा, मूंक्यानइं छिंडि तेह,
तेहथी अति दुष्कर नथी, गज छोडाविउ जेह... २

पूछई नृपति कौतकइं, कहउ प्रभु करी पसाय,
नेह पास केणी परई, मूक्युं तुम्हे मुनिराय... ३

ढाल-१८

(राग-सारिंग) देशी-धरि आवोजी आंबो मोरीओ...

तिह्यार पछी सघलउ कहिउं, मांडीनई निज विरतंत,
सित्तरि कोडाकोडि जस उदय छई, सागरतंत,
आंकणी-छई मोटउंजी करम ए मोहनी... १

जउ बालकि सूत्रने तांतणे, करी बांधिया जे मुझ पाय,
ते नेहपास महाबलि करी, छोडिउ दुष्कर महाराय, छई... २

भंभसारराजा सुणी, सघळउ ऋषिनउं संबंध,
कहि धन्य तुमे मुनिराजजी, मनथी मूकिउं प्रतिबंध, छई... ३

महीपतिनइं मंत्री बिहुई, वांदीनई निज पुरि जाय,
आर्द्रकऋषि परिवारस्युं, जई वंदई वीरना पाय, सोभागी नृप सेहरो.. ४

वांदीनई इम वीनवईं, सुणि जगगुरु एक अरदास , सो.
छउ अपराधी ताहरउ, व्रत खंडी हिउ घरवास, सोभागी... ५

तुं तारक त्रिभुवनधणी, दुःखभंजक देवदयाल, सो.
छोडावई पातिक थकी, प्रभु शरणागत प्रतिपाल, सो... ६

मारगमांहे आवतां, देई उपदेश जे लोक, सो.
राजकुमार आदि बहु, समजाव्या थोकथोक, सोभागी... ७

दीक्षा सहु साथि फरी, ग्रही वीरजिणेसर पास, सो.
तिण परिवारइं परवर्या, भूतलि विचरई उल्लास, सो... ८

जीव घणानइं बूझवई, आपई शुद्ध समकित दान, सो.
तपजपकीरियाइं करी, चडीउं चडतइं गुणथान, सोभागी... ९

करम खपी केवल लहिउं, करई केवलओच्छव देव, सो.
कनक कमल बइंसारिनइं, सारइंजी सुरनर सेव, सो... १०

राग सारिंग अढारमी, कही न्यानसागरि ए ढाल, सो.
आर्द्रकुमार अणगारनइं, भवि वंदिउ वार त्रिकाल, ओ... ११

प्रभुमिलन

भक्तिथी वंदना करता राजाने मुनिए धर्मलाभरूप आशीषथी प्रतिलाभित कर्या. पछी राजाए आश्चर्यसहित कह्युं के-तमे हाथीनी मजबुत सांकल तोडी नाखी. तमे धन्य छो ! कृतपुण्य छो ! पछी थोडा हास्यने लीधे मनोहर मुखवाला आर्द्रकुमार मुनिए राजा श्रेणिकने कह्युं के-हे नृप ! बीजा बंधथी मुकावुं ते मने दुष्कर नथी लागतुं, कारणके मदोन्मत्त हाथीने वनमां पण बंधन थाय छे, परंतु रेंटीयाथी उकलेला सूतरना तांतणाना बंधनथी मुकावुं ते मने घणुं दुष्कर लागे छे. राजाए अतिकौतुकथी पूछ्युं के-हे मुनि ! प्रसाद करी ते नेहपासनो मोक्ष केवी रीते दुष्कर छे ते कहो.

आर्द्रमुनिए तांतणा संबंधी कथा शरूआतथी कही संभळावी खरेखर, सीत्तेर कोडाकोडीनी स्थितिवाळुं मोहनीयकर्म तोडवुं खूब अघरुं छे. आ प्रमाणे मुनिनो वृत्तांत सांभळी, राजा अने मंत्रीए तेमनी भावपूर्वक स्तवना करी. पछी आर्द्रकुमार मुनिए अभयकुमारने कह्युं के-हे मित्र ! ए तमारो प्रभाव छे, जे हुं अनार्यदेशमां जन्म पाम्यो छतां पण राजाओथी वंदन कराउं छुं. जो चंद्रने विशे चकोर पक्षीनी पेठे में तमारे विशे सुहृदयपणुं न धारण कर्युं होत तो आ चारित्ररूप चंद्रिकानुं पान शी रीते पामत ? हुं तमारा उपकारनो बदलो वालनार क्यारे पण नहिं थाउ ! तेथी एटलुं कहुं छुं के-तुं आवी रीते ज निरंतर सम्यक्त्वने दीपावजे. पछी ते मुनिनी दीक्षानी भावनाथी पवित्र मनवालो राजा श्रेणिक ते आर्द्रमुनिने सारी रीते वंदना करीने अभयकुमार सहित राजगृही तरफ गया.

हवे आर्द्रऋषि पोतानो शिष्यपरिवार लई वीरप्रभुने वंदन करवा नीकळ्या. ते मुनि प्रभुना चरणोमां नमस्कार करी विनंती करे छे-हे प्रभु ! हुं तारो अपराधी छुं. महाव्रत ने ग्रहण कर्या पछी तेनुं खंडन करी गृहस्थावास स्वीकारवो पड्यो. हे प्रभु ! आप दुःखभंजक त्रिभुवनतारक, दीनदयाळ छो तेथी हुं आपना शरणे आव्यो छुं. रक्षण करो, रक्षण करो...

श्री वीरजिनेश्वरनी पासे सर्वेए विधिवत् दीक्षा ग्रहण करी. परिवारसहित पृथ्वीतल पर उल्लासपूर्वक विहार करे छे. मुनिभगवंत तप, जप, क्रिया करतां अनुक्रमे गुणस्थानक चढवा लाग्या अने घातीकर्मोनो क्षय करी अनुक्रमे उत्तम एवा केवलज्ञानने प्राप्त कर्युं. देवताओ आवी केवलज्ञाननो ओच्छव करे छे, नवा नवा सुवर्णकमल रची तेना पर बेसाडी देशना संभळावे छे. आ प्रमाणे सारंगरागमां श्री न्यानसागर मुनिए आर्द्रकुमार अणगारने भावथी त्रिकाल वंदन कर्या.

दूहा

अंत समय अणसण ग्रही, करी सैलेसी जाण,
आर्द्रऋषि सुख सासतां, पाम्या पद निरवाण... १

ढाल-१९

(राग-धन्यासी) देशी-दीठो दीठो रे वामा को नंदन दीठो...

भावशल्य राख्यानां भवियण, ईम कूडा फल जाणी,
निरतिचारपणई व्रत पालउ, श्री जिनवचन प्रमाणी रे... १

भवि मानवभव फल साधउ, सुरतरुथी ए धरम अधिको,
विनयमूल आराधउ रे, भवि मानवभव फल साधउ... २

हित सुख मोक्षतणी छई दाता, अरिहंत प्रतिमा एम,
जिनप्रतिमा दरसणथी बूझु, जूओ एह आर्द्रक जेम रे... भवि ३

श्री सूयगडांगसूत्रनी वृत्ति, ए अधिकार वखाणु,
वली उपदेसचिंतामणी मांहिथी में इहां विस्तार आणिउ रे, भवि... ४

गाथाबंध चरित पणि एहनु, एम कहिउ अधिकार,
त्रिहुं ग्रंथेथी करिउ चोकस, सरस घणउं सुखकार रे भवि... ५

रसनानइं रसिउं छउं अधिकुं, तेहथी जे कहिउं होइ,
मिच्छामि दुक्कडं संघनी साखि, दिउं करजोडी दोई रे, भवि... ६

चारसइं नइं एकावन एहनु, ग्रंथकार गुणि कीधउ
साधुतणा गुण गाता सुपरिइ सकल मनोरथ सीधउ रे, भवि... ७

श्री अचलगच्छि गिरुआ गच्छनायक, श्री गुणरत्नसूरिंद,
ब्रह्मचारीमांहि चूडामणि, अभिनव जंबूमुणिंद रे, भवि... ८

श्री क्षमारत्नसूरि तस पाटइं, सोहइं जेम दिणंद,
नाम तिसिउ परणामइं दीठउ, नयणि अमीरसबिंद रे, भवि... ९

श्री गजसागरसूरितणा शिष्य, पंडित अधिक प्रतापी,
ललितसागर बुध लावण्यधारी, जगि जसु कीरति व्यापी रे, भवि... १०

प्रथमशिष्य मुनि माणिकसागर, तेह तणा मतिमंत
ते गुरुनइं सुपसाइं गायु, आर्द्रकऋषि गुणवंत रे, भवि... ११

सत्तरसत्तावीसई चैतर सुदि तेरस ससिवारई,
पूरवाफाल्गुनी ध्वजयोगई, लघुवटपद्र मझारइं रे, भवि... १२

ए ओगणीसमी ढाल, धन्यासी न्यानसागरि कहीं तेहई,
धवल धिंग गउडीनी सांनिधिं, दिन प्रति दोलत गेहई, भवि... १३

उपसंहार

केवल साधुना गुणोथी ज आश्रय करायेला होवाथी उत्पन्न थयेला केवलज्ञानवाला ते आर्द्रकुमार मुनीश्वर पोतानो अंतिम समय जाणी अणसण ग्रहण करी शाश्वता सुख समान निर्वाणपदने पाम्या माटे हे भव्यजीवो ! तमारे उत्तम पुरुषोनी साथे मैत्री करवी.

वीतराग, अरिहंत परमात्मा जणावे छे के भावशल्य राखवानां कडवां फळ भोगववां पडे छे. माटे निरतिचार व्रत पालन करो अने संयममां स्थिर बनवुं. दश दृष्टांतथी दुर्लभ, सुरतरू थी अधिक, पंचमगतिने आपनार एवा मनुष्यभवनुं फल प्राप्त करवुं जोईए. आत्यंतिक सुख, अव्याबाध सुख अजरामर पदनी प्राप्ति करावनार जिनप्रतिमाना दर्शनथी आर्द्रऋषि प्रतिबोध पाम्या.

हृदयने द्रावित करनार, रोमांचक एवा आर्द्रकुमारनुं चरित्र श्री सूत्रकृतांग आगमनी वृत्तिमांथी तेमज अंचलगच्छाधिराज श्री जयशेखरसूरिकृत "उपदेश चिंतामणी" नामना ग्रंथना आधारे वर्णन करेलुं छे. गाथाबंध आर्द्रकुमार चरित्रमां पण एनो अधिकार छे. त्रणेय ग्रंथमांथी नक्की करीने आ रास रचायो छे. ग्रंथकार अंतमां रास रचती वखते कांई पण अधिक-ओछुं कहेवायुं होय तो संघनी साक्षीए ते सर्वनुं मिच्छा मि दुक्कडं आपे छे.

प्रस्तुत रास ४५१ ग्रंथाग्रवालो छे. आवा उत्तम ऋषि आर्द्रकुमारना गुण गातां सकल मनोरथ सिद्ध थाय छे. ग्रंथना अंते प्रशस्ति करतां ग्रंथकार पोतानी गुरुपरंपरा बतावे छे. श्री अंचलगच्छना गच्छनायक, ब्रह्मचारीओमां चूडामणि समान, अभिनव जंबूकुमारनी जेम शोभता गुणोनी खाण समान श्री गुणरत्नसूरीश्वरजी म.सा.नी पाटे थयेला श्री क्षमारत्नसूरि गच्छमां सूर्य समान शोभे छे. तेमनी पाटे थयेला श्री गजसागरसूरिना शिष्य उपाध्याय श्री ललितसागर अने तेमना प्रथम शिष्य मुनिवर्य श्री माणेकसागर छे. ते गुरुनी कृपाथी आर्द्रऋषिनुं चरित्र वर्णन कर्युं. विक्रम संवत १७२७ मां चैत्र सुद तेरस, शनिवारना दिवसे, पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमां, ध्वजयोगमां धवलधिंगड श्री गोडीजी पार्श्वनाथ दादानी सांनिध्यमां, लघुवटपद्र गाममां श्री न्यानसागरे आ रासनी रचना करी.

।। श्री आर्द्रकुमार रास संपूर्ण ।।

श्री मृगध्वजकेवलीरास

रासपरिचय -

अहिंसा, संयम अने तपरूप धर्म ए उत्कृष्ट मंगल छे. जीवोनी हिंसानो त्याग ते अहिंसा धर्म. दरेक ने पोतानो जीव प्रिय होय छे. माटे दरेक जीवोनी रक्षा करवी जोईए. जीवहिंसाथी आ भव अने परभवमां कटुफळ भोगववा पडे छे. दुर्गतिमां धकेलाईने अनंत भवभ्रमण थाय छे. तेवी जीवहिंसानुं सादृश्य वर्णन पद्मकुमारे 'मृगध्वज केवली रास'मां करेल छे.

श्री नमिनाथ प्रभुना शासनमां थयेल मृगध्वजकेवलीरासनो मुख्य उद्देश जीवमैत्री, करुणा अने अहिंसा धर्मना लाभ तेमज जीवहिंसाना नुकसान दर्शाववानो छे. पूर्वभवना संबंधथी चालती वेरनी परंपराथी जीवो केवा कटुफळ भोगवे छे तेनुं तादृश्य वर्णन आ रासमां करवामां आवेल छे ते जाणी सर्व जीवो वेरनी परंपराने तोडी भवनिर्वेद पामी भव बंधननी बेडीने तोडी जल्दीथी मोक्ष साथे संबंध जोडे तेवो ज आ रासनो उद्देश छे.

चार ढाळमां रचायेल आ रास नानो पण बोधदायक छे. अने सज्जायरूपे गाई शकाय तेवो खूब रसप्रद छे. अंत्यानुप्रास अलंकारथी सुशोभित छे.

कर्तापरिचय-

आ रासना रचयिता खरतरगच्छीय पूर्णचन्द्र उपाध्यायना परम विनेय श्री पद्मकुमार छे. तेमना विषेनी माहिती कोई प्राप्त थई शकती नथी. आ रास पण कया समयमां रचायो छे ते जाणी शकातु नथी. मृगध्वजकेवलीनुं चरित्र पण बीजा कोई पण ग्रन्थमांथी प्राप्त थई शक्यु नथी. केवल हर्षपुरगच्छीय मलधारी श्री हेमचन्द्रसूरिसन्दब्ध 'भवभावना' ग्रन्थमां मृगध्वजकेवलीना चरित्रनी संक्षेप माहिती जाणवा मळी छे. श्लोक नं. २०८० थी २०९० सुधीमां आनुं वर्णन छे तेमज क्षत्रिय वंशीय मृगध्वज केवलीना वंश परंपरामां थयेल एणीपुत्र विगेरे तथा कामदेव श्रेष्ठीना वंशमां थयेल कामदत्त विगेरेनुं वर्णन पण आ ग्रन्थमांथी प्राप्त थई शक्यु छे.

आ ग्रन्थमां 'कामदेवश्रेष्ठी त्रण मंदिर बंधावे छे. तेमां प्रथम मंदिरमां त्रिखुरवाला रत्नमय महिषनी प्रतिमा, बीजामां पोतानी अने त्रीजा मंदिरमां मृगध्वजकेवलीनी प्रतिमा भरावे छे.' आ प्रमाणे उल्लेख छे. ज्यारे पद्मकुमार रचित आ

रासमां जुदो उल्लेख जोवा मले छे के महिषनो जीव असुरकुमार एक मंदिर बंधावी तेमां केवली अने त्रिखुरवाला महिषनी प्रतिमा स्थापन करे छे. बाकीनुं वर्णन प्रायः समान प्राप्त थाय छे.

केवल हर्षपुरगच्छीय मलधारी श्री हेमचन्द्रसूरिसन्दृब्ध 'भवभावना' ग्रन्थमां मृगध्वजकेवलीना चरित्रनी संक्षेप माहिती जाणवा मळी छे. श्लोक नं. २०८० थी २०९० सुधीमां आनुं वर्णन छे तेमज क्षत्रिय वंशीय मृगध्वज केवलीना वंश परंपरामां थयेल एणीपुत्र विगेरे तथा कामदेवश्रेष्ठीना वंशमां थयेल कामदत्त विगेरेनुं वर्णन पण आ ग्रन्थमांथी प्राप्त थई शक्यु छे.

आ ग्रन्थमां कामदेवश्रेष्ठि त्रण मंदिर बंधावे छे. तेमां प्रथम मंदिरमां त्रिखुरवाला रत्नमय महिषनी प्रतिमा, बीजामां पोतानी अने त्रीजा मंदिरमां मृगध्वजकेवलीनी प्रतिमा भरावे छे. आ प्रमाणे उल्लेख छे. ज्यारे पद्मकुमार रचित आ रासमां जुदो उल्लेख जोवा मले छे के महिषनो जीव असुरकुमार एक मंदिर बंधावी तेमां केवली अने त्रिखुरवाला महिषनी प्रतिमा स्थापन करे छे. बाकीनुं वर्णन प्रायः समान प्राप्त थाय छे.

क्षति बदल विद्वानोने सूचन करवा नम्र विंनती.

सा. नयदर्शनाश्रीजी ना शिष्या
सा. नम्रनिधि तथा नम्रगिरा

पं. श्री चंद्रसागरजी गणित

श्री मृगध्वजकेवलीरास

ढाळ-१

पणमवि सिरि गोयम गणहर मणहर राय,
हउ गाइसु गुरुआ मृगध्वज मुनिवरराय
श्रावस्ती नयरी अमरापुरी समाण,
जिहां राज करई जितशत्रु नरेसर जाण.... १

तउरे जाण शीरोमणी शीलतणइ गुणी सती शील समाणी
शशीवरणी मृगनयणी सुंदरी कीर्तिमती तसु राणी,
तिणि जायउ कुमर सोभागी सुंदर कलातणइ भंडार,
विनय-विवेक विचार विचक्षण मृगध्वजनामि कुमार.... २

तिणि नयरी वसई श्रेष्ठि कामदेव उदार,
धनवंतपणइ दिइ भूपति मान अपार,
इक दिवस विशेषई जोवा गोकुल ठाम,
तिहा दंडक गोपति आवी मिलियउ ताम... ३

तउरे आवी मिलियउ गोपति जंपइ, स्वामी नयणि निहालउ,
ए गोवृंद चरइ ए महिषी, टोला तुम्हे संभालउ,
जोता महिष एक तिहां दीठउ, कातर पणइ निहालई,
धूजइ खीजई वली विशेषइ, आखिइ आसू ढालइ... ४

तिणि अवसरि दंडक तेडइ महिष तुरंत,
तु आवी न अम्ह तुम्ह सामी ए बलवंत
ततखिण ते आवी हरखिइ करइ प्रणाम,
जिह्वा काढीनइ ऊभउ रहिउ ताम... ५

तउरे निश्चल ठामि रहिउ, ते देखी कारण पूछइ सेठि
गोप भणइ सुणी सामी एह बीहइ तुम्हची द्रेठी,

आगइ सातवार मइ सइ हथि, हणी हत्याफल लीधउ,
ज्ञानी तणइ वचनि जाणीनइ अभयदान हिव दीधउ.... ६

इसउ वचन सुणीनइ श्रेष्ठि धरइ वईराग,
जीवहिंसा करिवा मुझनई नही छई लाग,
जे दीसइ टूंटा, कोढी, अंधा, काणा,
ते जाणी न सगलउ हिंसा तणउ प्रमाण... ७

तउरे हिंसा तणई प्रमाणि अनंतउ काल भमइ ए जीव,
नरक अनइ तिरजंच तणइ भवि फरइ घणेरउ जीव,
आज पछई हिव जीवतणउ वध करीवउ नही लगार,
ए महिषनइ मइ पणि दीधउ अभयदान सुविचार... ८

धन धन सामी तुम्ह जागिउ हीयइ विवेक,
एह पुण्यप्रमाणि लहिस्यउ सुख अनेक,
नरभव फल लीधउ कीधउ निरमल वंश,
इम श्रेष्ठि तणी ते गोपति करइ प्रशंस... ९

तउरे करइ प्रसंसा गोप भली परि तेडीनई घरि जाई,
खीर-खंड-घृत-घोल जिमाडइ हीयडइ हरख न माइ,
भोजन करी श्रेष्ठि निजमंदिरि सुपरि पहोतइ जाम,
अणतेडिउ ते महिष बापडउ केडिइ हूओ ताम... १०

धूबडपणइ धसमस धाइ गोप अनेक,
वेगि पाछउ चालइ पुणि ते न वलइ छेक,
तव श्रेष्ठि कहइ तुम्हे रखे दुहवउ एह,
आवइ तउ आवउ हीयडई धरीय सनेह... ११

तउरे नेह धरीनई पूछिउ आवउ सिउ अम्ह भाग
आपणपीनइ वली विशेषई दूहविवा नही लाग,

ते लेइनइ निजघरि पहुता दीधउ सुघृत आहार,
चारा-पाणीनी चिंता करता, हुओ सुखी अपार... १२

एक दिवस विशेषइ भूपति मिलवा काजि,
परिवार सहित ते श्रेष्ठि पहुतउ राजि,
संघातइ चालइ महिष न मेल्हई साथ,
एकलडउ बीहई न रहई किम्हई अनाथ... १३

तउरे किम्हई अनाथ भणी तेहनई पहुतउ राजदुवारि,
पौलि तणउ रखवालउ वालइ श्रेष्ठि कहइ म निवारि,
राजसभा राउ बइठउ देखी हरखिइ करई प्रणाम,
जीभ काढीनई ऊभउ रहिओ किम्हई न मेल्हई ठाम... १४

अर्थ- आसन्न उपकारी परमतारक परमात्मा महावीर स्वामी अमारा मंगल माटे थाओ, अनंतलब्धिनिधान गुरु गौतमस्वामीना चरणकमलमां वंदन करीने परममुनि मृगध्वज कुमारना चारित्रनुं वर्णन कराय छे.

अमरपुरी समान श्रेष्ठ श्रावस्ती नामनी नगरी छे. तेमां न्यायप्रिय प्रजावत्सल जितशत्रु नामना राजा राज्य करे छे. ते प्रजानुं पुत्रनी जेम पालन करनार हता. जीवदया प्रेमी अने धर्मानुरागी हता. न्याय-नीतिपूर्वक राज्यने संभाळनार हता. ते राजाने सती शिरोमणि कीर्तिमती नामनी राणी हती. ते रूपथी चंद्रने पण जीतनारी हती. गुणोनो भंडार हती. शीलवती, गुणवती, मृगनयनी राणी राजाने अत्यंत प्रिय हती. राजा-राणी सुखपूर्वक गृहस्थधर्मनुं पालन करता हता. संसारना सुखो भोगवता राजाने त्यां एक पुत्ररत्नो जन्म थयो आखा नगरमां उमंग अने उत्साहपूर्वक जन्मोत्सव उजवायो. नाम राख्युं **मृगध्वज कुमार !**

उत्तम लक्षणोथी शोभतो माता-पिताना अपार वात्सल्यथी उछरतो ते मोटो थयो. विनय-विवेकथी शोभतो बुद्धिनो भंडार हतो. उंमर थता योग्य कलाओनो पण जाणकार थयो.

हवे ते ज नगरमां एक कामदेव श्रेष्ठी रहेता हता. धनवंतनी साथे दानवीर पण हता. गुणोथी शोभता एवा तेने राजा पण मान आपता हता. राज्यमां तेमनुं स्थान

मानपूर्वकनुं हतुं. ते एक दिवस गोकुल जोवा गया. तेमां सारा प्रमाणमां गायो अने महिष हता तेनी सारसंभाळ सारी रीते थती हती. तेने साचवनार दंडक गोपति खूब काळजीपूर्वक देखरेख राखतो हतो. ते दंडक गोपति कामदेव श्रेष्ठिने गोकुल देखाडवा लई जाय छे. त्यां गायना टोळा अने महिषना टोळाने देखाडे छे. तेमां एक महिष (पाडो) खूब भय पामेलो जणाय छे. आंसु सारता अने ध्रुजता ते महिषने जोईने श्रेष्ठि गोपतिने पूछे छे के आ महिषनी आवी स्थिति केम छे ? ते आटलो भय पामेलो केम जणाय छे ?

दंडक गोपति ते महिषने टोळामांथी तेडावे छे अने कहे छे के 'हे महिष ! आ मारो अने तारो स्वामी छे तेथी तु भय न पाम.' आ सांभळी ते महिष भयने दूर करी हर्ष पामे छे. तेने नमे छे. अने श्रेष्ठीनी सामे जीभ काढी ऊभो रहे छे. महिषनी आवी चेष्टा जोईने श्रेष्ठी गोपतिने तेनु कारण पुछे छे त्यारे गोपति कहे छे के ज्ञानीना वचनथी जाण्यु छे के आ महिषनी सात भव सुधी हत्या थयेल छे. ते पोताना जातिस्मरणथी जाणे छे माटे हंमेशा माटे भय पामेलो रहे छे. आवु सांभळी शेठ तेने अभयदान आपे छे.

आ प्रसंगथी श्रेष्ठिने वैराग्य उत्पन्न थाय छे. जीवहिंसाना त्यागनो नियम ग्रहण करे छे. हिंसाना कारणे जीव कोढी, लंगडो आंधळो अने काणो थाय छे. हिंसाथी जीव अनंतकाल भमे छे. नरक अने तिर्यंचना भवोमां पण अनेकवार रखडे छे. हिंसा ए दुर्गतिनी खाण छे. वैश्वानरनी सहचारिणी हिंसा जीवोने चोराशी लाख योनिमां भटकावे छे अनेक दुर्गुणोने उत्पन्न करे छे. हिंसानुं आवुं स्वरूप समजीने श्रेष्ठि महिषने अभयदान आपे छे अने जावज्जीव हिंसाना त्यागनी प्रतिज्ञा करे छे. ते समये गोपति श्रेष्ठिनी प्रशंसा करे छे के "खरेखर आप महान छो. आपना हृदयमां प्रगटेल विवेकथी अने प्राप्त पुण्यथी आप अनेक सुखनी प्राप्ति करशो, खरेख आपे मनुष्य जन्मने सफल कर्यो छे. आपना वंशनी उज्ज्वळता आपे वधारी छे." एम हृदयना भावथी गोपति श्रेष्ठिनी प्रशंसा करे छे अने उछळता भावथी हर्षथी दूध-खांड-घी-गोळ मिश्रित आहार करावे छे. खूब संतोष व्यक्त करे छे अने आनंदथी वळाववा पण जाय छे.

श्रेष्ठी पोताना मंदिरे (हवेलीए) जवा माटे नीकळे छे त्यारे अणतेड्यो ते महिष तेमनी पाछळ-पाछळ जाय छे. तेने पाछो लाववा माटे जंगलीनी जेम अनेक गोप तेनी पाछळ दोडे छे पण ते महिष वधारे-वधारे दोडतो जाय छे अने पाछु वळतो नथी. आ जोईने करुणायुक्त श्रेष्ठीए गोपने कह्युं के आ महिषने तमे दुःखी करशो नहि. तेने हुं

मारी साथे लई जईने संभाळीश तमे चिंता करशो नहि. स्नेहपूर्वक तेने संभाळीश. पछी बधाने समजावीने घरे लई जाय छे चारा-पाणी सारसंभाळपूर्वक करे छे तेने खूब सारी रीते साचवे छे. तेनी सारी संभाळथी ते सुखी थाय छे. ते महिष सारी रीते रहे छे.

एक दिवस श्रेष्ठी राजाने मळवा राजमंदिर जाय छे. ते समये ते महिष पण शेठनी पाछळ-पाछळ जाय छे तेने एकलाने भय लागे छे नाथ रहित रहेवा ते तैयार नथी माटे तेमनी साथे जाय छे. शेठ राजद्वारे पहोंचे छे त्यारे द्वारपाळ ते महिषने रोके छे. श्रेष्ठि द्वारपाळने समजावी ते महिषने राजसभामां लई जाय छे. राजाने श्रेष्ठी प्रणाम करे छे ते जोई महिष पण राजाने नमे छे अने जीभ काढीने तेमनी सामे ऊभो रहे छे. कोई पण रीते ते स्थानने छोडतो नथी. अने हर्षथी बधाने सामे जोईने श्रेष्ठिनी जेम ते पण राजसभामां बेसे छे.

ढाळ-२ (छनासी)

इसउ अचंभम नयणे देखी कारण पूछइ राय,
श्रेष्ठि कहइ स्वामी तुम्हे निसुणउ एहनउ कर्मविपाक... १ राजनजी...

राजनजी, जोवउ हृदय विचारि, एक जीवदया धर्मसार,
जो ए होम मिसि जे वध करिस्यइ, ते रुलिस्यइ संसार... २ राजनजी...

महिष एक अम्ह गोकुलि चरइ, दिनि दिनि मउटउ थाइ,
मरण थकी बीहई बापलडउ, कहि कुण शरण जाइ... ३ राजनजी...

जातिस्मरण तणइ बलि देखइ, पूरवलउ भव सोइ,
धूजइ खीजई आंसू ढालइ, मरम न जाणइ कोई... ४ राजनजी...

इणि अवसरि ज्ञानी तिहां आव्या, कहइ गोप सुणी वात,
सातवार तइ महिष तणइ भवि, कीधउ एहनउ घात... ५ राजनजी...

तिणि कारणि ए तोरइ दरिसणि, थरथर धूजइ अंगि,
जीव सहुनइं जीव आपणु, वाल्हउ छइ बहु भंगि... ६ राजनजी...

सत्यवचन ज्ञानी मुखि निसुणी गोप धरइ वइराग,
सद्गुरु तणी सखि तिणि कीधउ, जीवहिंसानउ त्याग... ७ राजनजी...

एक दिवसि हउ गोकुलि पहुतइ, देखी इसउ विनाण,
मइ पुणि जीवतणउ बंध छांडिउ सांभली सुगुण सुजाण... ८ राजनजी...

आज अम्हारइ साथि बापुडउ, आव्यउ राज मझारि,
अभयदान मांगइ तुम्ह आगलि, उभउ छउ निराधारि... ९ राजनजी...

इसउ स्वरूप महिषनउ सुणी, भूपति करइ विचार...
जीवतणी गति विसमी दीसई, धिग् धिग् एह संसार... १० राजनजी...

नरक-अनइ तिरजंच तणइ भवि, दीसइ दुःख अनेक,
जीव अजाणपणइ नवि चेतइ, हियडइ धरिय विवेक... ११ राजनजी...

लाख चउराशी जीवयोनि माहे... भमइ अनंतउ काल,
छेदन-भेदन सहइ विविह परि, किमइ न छूटइ काल... १२ राजनजी...

जीव नटवानी परि फिरतउ, करइ अनेरा रूप,
कर्म तणइ वसि सुखदुःख भोगवई, इम चेतिउ मनि भूप... १३ राजनजी...

राय विमासी देशि आपणइ, दिइ आदेश अखंड,
एह महिष वध करिस्यइ तेहनउ, चोर तणउ छइ दंड... १४ राजनजी...

चउपट चहुटइ चिहुदिशि फिरता, कोई न करई कणवार,
महिष आपणइ इच्छा हिंडइ, निरभय हुओ अपार... १५ राजनजी...

एक दिनि मृगध्वजकुमार विचक्षण, सुभट तणइ परिवारि,
मन इच्छा वनमांहि रमीनइं, पहुतउ पउलि दुवारि... १६ राजनजी...

महिष आवतउ दृष्टिइं देखी, कोपिइ चडिउ कुमार,
निरदय पणइ खड्ग ले घायउ, न गिणइ पुण्य आचार... १७ राजनजी...

अर्थ- राजसभामां थयेल नवीन घटना जोई सहु आश्चर्य पामे छे. राजा पण विस्मयथी शेठने तेनुं कारण पूछे के आ महिषनी आवी चेष्टा केम ? शेठ राजाने कहे छे के आ महिषनुं चरित्र आप शांतिथी सांभळजो. जीवदयाना पाया पर रचायेल आ महिषनी आपवीति हृदयद्रावक छे.

आ महिष एक गोकुलमां रहेतो हतो धीमे-धीमे फरतो ते क्यांय बहार जतो नथी. तेने दरेक व्यक्तिथी भय लागे छे. ते कोईना पण शरणे जवा तैयार नथी. जातिस्मरणना बलथी ते पोतानो पूर्वभव जुए छे ते कारणथी ते भयथी धूजे छे. आंसु पाडे छे परंतु तेना मर्मने कोईपण जाणी शकतु नथी. ते अवसरे एक ज्ञानीभगवंत विचरता त्यां पधारे छे ते सांभळी ते गोकुलना दंडक नामना गोपति त्यां जाय छे वंदना करी देशना सांभळे छे. देशनाने अंते गोपति महिषनी वात पूछे छे. तेना मर्मने जणाववा भगवंतने विनंती करे छे. ज्ञानीभगवंत गोपतिने तेना पूर्वना भवोनी वात कहे छे. आ महिषनो पूर्वना सात भव सुधी घात थयेल छे. दरेक भवमां होम विगेरे कोईपण कारणथी तेनी हिंसा थयेल छे ते कारणथी आ भवमां तेने बधाथी भय लागे छे. अने अनेकवार आंसू सारे छे. सर्व प्राणीओने पोतानो जीव व्हालो लागे छे माटे ज ज्ञानीनुं वचन छे के "सव्वे जीवा वि इच्छन्ति, जीविउं न मरिज्जिउं"।

दंडक गोपति महिषनी वात सांभळीने वैराग्यने धारण करे छे. जीवहिंसाना कटुफळ जाणी सद्गुरुनी साक्षीए जीवहिंसा त्यागनी प्रतिज्ञा करे छे. हुं (श्रेष्ठी) एक दिवस गोकुल जोवा गयो. त्यां महिषनी पूर्वभव संबंधी वातो जाणी में (शेठे) पण जीवहिंसा त्यागनी प्रतिज्ञा करी अने महिषने अभयदान आप्युं. त्यांथी पाछा फरता आ महिष मारी पाछळ पड्यो कोईपण रीते ते पाछो जवा तैयार न थयो त्यारे हु तेने मारी साथे मारा मंदिरे लई आव्यो. तेनी सारसंभाळ करी. तेना चार-पाणीनी पण सारी व्यवस्था गोठवी. राजमंदिर आवता ते मारी साथे आव्यो छे. ते एकलो रहेवा तैयार नथी तेथी में तेने न वार्यो. अहीं आवेल ते हर्षपूर्वक आपनी सामे ऊभो छे. माटे हे राजाजी ! तेने आप अभयदान आपो.

राजा महिषनुं चारित्र सांभळी विचारमां गरकाव थई जाय छे. खरेखर जीवोनी गति विसमी छे. आ संसारने धिक्कार छे. ८४ लाख योनिमां फरता जीव कर्मनो बंध करे छे. अजाणता के जाणता पण जीव कर्मबंध करती वखते विचारतो नथी अने तेना कारणे नरक अने तिर्यंचना अनेक भव करे छे अने अपार दुःखने प्राप्त करे छे.

अनेक प्रकारनी छेदन-भेदन आदि दुःखद अवस्थाने मेळवे छे. नटवानी जेम नाचता जीव अनेक रुपोने धारण करे छे. एकेन्द्रियथी पंचेन्द्रिय पणाने पामे छे चारे गतिना चौटामां फरता तेनो अनंतकाल पसार थाय छे. पण संसारना पारने पामवा समर्थ थतो नथी. आ प्रमाणे वैराग्यद्रावित हृदयथी राजा पोते पण जीवहिंसा त्यागनो नियम करे छे. महिषने अभयदान आपे छे अने पोताना देशमां आदेश आपे छे के आ महिषनो जे वध करसे तेने चोर जेटलो दंड थशे. शूलीरोपण जेवी मोटी सजा थशे. माटे आ महिषनी सर्व रक्षा करे छे. ते निर्भयपणे देशमां फरे छ. पोतानी ईच्छामुजब चोगानमां, चौटामां, बजारमां, वनमां बधे ज फरे छे. कोईपण व्यक्ति तेने कनडगत करता नथी. बधा तेनी सारसंभाळ करे छे.

एक दिवस मृगध्वजकुमार सुभट परिवार सहित वनमां रमवा नीकळे छे. ते ज्यारे राजद्वारे पहोंचे छे त्यारे ते महिष फरता-फरता त्यां राजद्वारे ज आवी पहोंचे छे. आवता महिषने जोई राजकुमार अत्यंत कोपे चढे छे. क्रोधने वश थयेल कुमार खड्ग लईने ते महिषने मारवा माटे दोडे छे. कोईपण विचार कर्या विना पुण्य-पापने अवगणी ते महिष तरफ दोडे छे.

ढाळ-३

पाय लागी सेवक कहई रे, सामी म करो कोप
महिष तइ वधि रायनउ रे, होस्यइ आज्ञा लोप
कुमरजी, कांई भूलउ सुविचार ए(आंकणी)
जीव तणइ वधि पाडियइ रे, परभवि दुःख अपार... १ कुमरजी...

सेवक उवेखी करी रे, दीधउ खड्ग प्रहार,
ततखिण पग त्रूटि पडिउ रे, वरत्यउ हाहाकार... २ कुमरजी...

घात तणई दुःखी दूहव्यउ रे, मनमांहि धरइ संताप,
एकलडउ जीव भोगवइ रे, पूरवभवनउ पाप... ३ कुमरजी...

मउडइ मउडइ चालता रे, पगि पगि लेइ विश्राम,
थंभि अनाथि आवी रहिउ रे, आणइ शुभ परिणाम... ४ कुमरजी...

पूरवलउ भव सांभरई रे, तीणई न करइ मनि रोस,
कृतकर्म झूरइ आपणउ रे, कुणनइ देइ नवि दोस... ५ कुमरजी...

जण-जणनइ मुखि सांभल्यउ रे, कुमर तणउ अन्याय,
मनि रीसाणउ अतिघणउ रे, रोस न मेल्हई राय... ६ कुमरजी...

कुमर शूली आरोपिवा रे, ततखिणि देइ आदेश,
पुत्र भणी दाखि न तिहा रे, नवि कीधउ लवलेश... ७ कुमरजी...

कीर्तिमती राणी कहइ रे, करजोडीनइं नाह,
ए अपराध तुम्हे खमउ रे, पाछइ होसी दाह... ८ कुमरजी...

कोपि चडिउ राणी तणउ रे, किमइ न मानइ बोल,
राजलोक सवि अवगिण्या रे, नीठुर हुओ निटोल... ९ कुमरजी...

खर उपरि चडाविउ रे, गली करणनी माल,
आगलि वाजइ काहली रे, जोवइ बाल गोपाल... १० कुमरजी...

वध्य भूमिका आणिउ रे, कुणही किंपि न होइ,
महतउ बल भेदइ तिसइ रे, छानउ राखइ सोइ... ११ कुमरजी...

कोठामांहि छानउ रहइ रे, मंत्री दियइ प्रतिबोध,
उपशमरसि मन वसि करी रे, छंडि नयर विरोध... १२ कुमरजी...

माय-बाप बंधव तणउ रे, सगपण जोई असार,
एक जिनधर्म रुवडउ रे, न लहइ भेद अपार... १३ कुमरजी...

आप सवारथ जगि मिलिउ रे, कृत्रिम धरइ सनेह,
तडकइ लागइ प्रेम जिउ रे, झटकिं दिखडइ छेह... १४ कुमरजी...

सगपण धर्मतणउ खरउ रे, बीजउ सहुयइ आल,
हीयइ विमासी जोवता रे, दीसइ मायाजाल... १५ कुमरजी...

इणि भव फल हिंसा तणउ रे, परतखि दीठउ एह,
परभवि जे फल पाइये रे, तेह न लभइ छेह... १६ कुमरजी...

हिंसा दुरगति बारणउ रे, हिंसा दुःखनी खाणी
जीव अनंता भव रुलई रे, हिंसा तणइ प्रमाणी... १७ कुमरजी...

श्री नमिनाथ मुखिइ सुणी रे, नरक तणी दुःख कोडी,
मंत्री विस्तरि ते कहइ रे, कुमर सुणइ करजोडी... १८ कुमरजी...

चिहुगतिना दुःख सांभली रे, आणिउ चित्त सुठामि,
जातिस्मरण उपनउ रे, शुभलेश्या परिणामि... १९ कुमरजी...

ततखिण मुहतउ कुमरनइ रे, निजमंदिर ले जाइ,
साध वेष आपइ तिहा रे, मनमाइ हरख न माइ... २० कुमरजी...

महिष दुःखी जाणी तिहां रे, महतउ आवइ वेगि,
दशविध आराधन भली रे, संभलावइ संवेग... २१ कुमरजी...

मनशुध्धि अणसण उचरइ रे, पालइ दिवस अढार
लोहिताख्य नामिइं हुओ रे, बलवंत असुरकुमार... २२ कुमरजी

अर्थ- मंत्री-सुभटो राजसेवको सहु कुमारने पगे पडीने समजावे छे के आ महिषना वधथी राजानी आज्ञानो लोप थशे तेमज जीवहिंसाना कटुफळ परभवमां भोगववा पडशे. माटे हे कुमार आप कोप न करो. शांत थाओ. शांत चित्ते विचारी आ अकार्यथी अटको. समजाववा छता पण कुमार सहुने अवगणीने खड्ग लई महिष तरफ दोडे छे अने जोरथी पगमां प्रहार करे छे. महिषनो पग भांगी पडे छे अने ते नीचे पडी जाय छे. सर्वत्र हाहाकार फेलाई जाय छे. सहु कुमारने धिक्कारे छे. महिष पण मनमां संताप करे छे परंतु जातिस्मरण थयेल होवाथी आत्माने समाधिमां राखी शके छे.

पूर्वकृत कर्म जीवने पोताने ज भोगववुं पडे छे. माटे सुख-दुःखमां आत्माने समाधिमां राखवो ते ज जीवननुं परम ध्येय छे एम आत्माने समजावी महिष समतापूर्वक त्यां थोडी वार रहे छे पछी भांगेला पगे धीम-धीमे ऊभो थईने पगलु मांडे छे. विश्राम लेता लेता एक थांभलाने टेके आवी ऊभो रहे छे.

जीवने प्राप्त थयेल सुख-दुःख ए पोताना ज पूर्वकृत शुभ-अशुभ कर्मनुं फळ छे. एमां कोईनो पण दोष होतो नथी. बीजा जीवो तो निमित्तमात्र ज होय छे. माटे मननो रोष दूर करी कोईनो पण दोष न जोवो ए ज साची समाधि छे. एम शुभपरिणामनी धाराए ते महिष चढे छे अने पोताना आत्माने निंदे छे.

राजाने लोकवायकाथी कुमारना दुष्कृत्यनी जाणकारी थाय छे. जे महिषने पोते अभयदान आप्युं हतुं ते महिषने ज कुमारे मार्यो छे. ए समाचार सांबळी राजा अत्यन्त कोपे भराय छे. राता-पीळा थयेल राजा कोईनी पण वात सांभळवा तैयार नथी. आ अन्याय तेमनाथी सहन थयो नहि अने ते ज क्षणे राजाए कुमारने शूलीनी सजा जाहेर करी दीधी. पोतानो पुत्र होवा छतां पण राजाए जरापण दया न लावी. दरेकने माटे न्याय एकसरखो होय छे. एम समजेला ते राजाए पोताना द्वारा जाहेर थयेला सजामां जरापण फेरफार कर्यो नहि.

कीर्तिमती राणी खूब विलाप करे छे. हाथ जोडी राजाने गदगद् स्वरे समजावे छे के पुत्रनो आ अपराध तमे खमी लो. आटली मोटी सजाने माफ करी तेमां कांक फेरफार करो नहितर पाछळथी पस्तावानो वारो आवशे. मंत्री-सुभटो विगेरे पण राजाने समजाववामां कांई बाकी राखता नथी. खूब समजाववा छता पण राजा एकनो बे थतो नथी. पोतानो निर्णय अडग ज राखे छे. क्रोधथी हृदय निष्ठुर थई जाय छे. सहुने अवगणीने अफर निर्णयने अमलमां मुकवा सौने आज्ञा करे छे.

कुमारने एक गुनेगारनी जेम गधेडानी उपर बेसाडे छे. गळामां करेणनी माळा पहेरावे छे अने आगळ काहल वगाडता-वगाडता आखा नगरमां फेरवे छे. आवी घटनाथी समस्त नगर जाणे रडी रह्युं छे. चौटे-चौटे सहु नगरजन दुःखी हृदये ऊभा रहे छे नाना मोटा बधा कुमारनी पाछळ-पाछळ जाय छे. विस्मित अने दुःखित हृदये सहु नगरजन पाछळ जता-जता वध्यभूमिका सुधी पहोचे छे. सौना हृदयमां एक विस्मय छे के हवे शुं थशे ?

राजमंत्री खूब चालाक अने चतुर होय छे. राजा ज्यारे समजवा तैयार नथी त्यारे मंत्रीनी फरज बने छे के राजकुमारनुं कोइपण भोगे रक्षण करवुं. एम विचारी

मंत्री ते नगरजनोना टोळाने भेदीने कुमार पासे जाय छे. कुमारने छुपी रीते चालाकीथी त्यांथी खसेडी दे छे अने कोई न जाणे तेम पोताना कोठामां लईने संताडी दे छे. राजकुमार पण उत्तमकुलना खानदान अने गुणियल हता. पोतानी भूल समजे छे अने आत्मनिंदा करे छे. अवसर जाणी मंत्री कुमारने प्रतिबोध करे छे संसारनी असारता अने जीवहिंसाना कटुफळ समजावे छे.

श्री नमिनाथना मुखथी सांभळेलु संसारनुं स्वरूप कुमारने विस्तारथी समजावे छे. संसारना सर्व संबंधो स्वार्थना छे, माता-पिता-बांधव कोई साथे आववाना नथी. ते पुण्य-पापमां क्यांय भाग पडावी शकता नथी. फक्त एक जिनधर्म ज परभवमां सद्गति अपावनार छे अने परंपराए मोक्षफलने अपावनार छे. स्वार्थी जगतना लोको गरज पडे त्यारे कृत्रिम स्नेह देखाडे छे अने पोतानो स्वार्थ पूरो थता दगो दईने जता रहे छे. इन्द्रजाळ सरखा सहु संबंध अनित्य अने अशरण छे. जिनधर्मनुं शरण ज आधारभूत छे. पूर्वकृत पुण्य-पाप ज जीवने सुख-दुःख अपावनार छे. जीवहिंसादि पापो जीवने परिभ्रमण करावे छे. चोराशी लाख योनिमां भटकावे छे. हिंसा ज दुर्गतिनुं बारणुं छे हिंसा ज दुःखनी खाण छे अने हिंसा ज सर्व पापोनुं मूळ छे. माटे हिंसादि पापोनो त्याग करवो ए ज श्रेयस्कर छे.

मंत्रीना उपदेशथी अने चारे गतिना दुःख सांभळीने कुमारने जातिस्मरणज्ञान उत्पन्न थाय छे. शुभ अध्यवसायथी आत्मानी निर्मळता प्राप्त थाय छे. शुभलेश्या मेळवे छे अने समाधिमय मन करे छे. उत्पन्न थयेल जातिस्मरणवाळा कुमारने जाणीने मंत्री तरत ज तेने पोताना महेले लई जाय छे. सर्व नगरविरोधने टाळीने लावेल कुमार प्रतिबोध पाम्यो छे. तेम जाणी हर्षथी तेने साधुवेष अर्पण करे छे. कुमारनो जन्म सफळ करे छे. कुमार पण हर्षथी ते वेषने धारण करे छे अने तरत ज त्यांथी विहार करी देशनी बहार नीकळी जाय छे रखेने राजा कोप करे. संयमनुं निरतिचार पालन करे छे. कुमारना संयमग्रहणथी मंत्री पण निश्चिंत थई जाय छे.

हवे घायल थयेल महिष एक जग्याए स्थिर रहे छे. त्यांथी क्यांय जवा माटे समर्थ नथी. आत्म निंदतो ते समभावमां रहे छे. ते महिषनी आवी स्थिति सांभळीने मंत्री वेगथी तेनी पासे आवे छे. अंतिम आराधना करावे छे. दशविध आराधना समजावी अंतिम निर्यामणा करावे छे. संसारनुं स्वरूप समजावी समाधिमां स्थिर करे छे अणसण उच्चरावे छे. शुभध्यानथी आराधना करता तेना अढार दिवस पूर्ण थाय छे. अणसणने अंते आयुष्य पुरू थता शुभध्यानथी मरी देवलोकमां जाय छे. लोहिताख्य नामनो बलवान असुरकुमार देव थाय छे.

ढाल-४

मृगध्वज मनि करइ विचार, जउ मिलिय राय एकवार
तउं भांजइ मनना रोस, मुझनइ नवि लागइ दोस... १ धन धन...

धन-धन ते साधु नमीजइ, तेहना गुण हीयडइ धरीजइ,
जे लेइ संयम भार, नित पालइ निरतिचार... २ धन धन...

मुनि इसउ विमासी चालई, पगि पगि जीवराशि निहालइ,
क्रमि क्रमि राय मिलिवा काजि, पहुता महंता सिउं राजि... ३ धन धन...

मुनि देखी राउ दिइ मान, जोवउ जोवउ पुण्य प्रमाण,
ततखिण सिंहासन मंडइ, मनमांहि प्रीति न छंडइ... ४ धन धन...

तिंहा बइठा मुनिवरराय, मनरंगिहि प्रणमइ पाय,
मुह साम्हउ जोवइ भूप, पुणि न लहइ कुमर सरूप... ५ धन धन...

तव मुहतउ बोलइ तेह, स्वामी कुमर तुम्हारउ एह,
इण मानवभव फल लीधउ, वली निजकुल निरमल कीधउ... ६ धन धन...

इसउ वचन सुणी मन जागिउ, मुनिवरनइ पायइ लागइ,
मनमांहि घणउ पछितावइ, रोस छोडी राय खिमावइ... ७ धन धन...

मइ कीधउ तुम्ह अपराध, पणि खिमइ तुम्हि छउ साध,
गुरुआ सहजिइ उपगार, करता न लगाडइ वार... ८ धन धन...

राज-राणी रिद्धि भंडार, राउ आपइ सुतनइ सार,
पणि निर्मलपणइ न इहइ, चउगइ संसारह बीहइ... ९ धन धन...

अनुमति लेइ शुभ ध्यानी, क्रमि क्रमि पहुता उद्यानि,
तिहा सीमंधर गुरु पासे, लिइ दीक्षा मनि उल्हासि... १० धन धन...

तप छट्ठ करइ सुविचार, वली उज्झित लिइ आहार
दिन बावीस संयम पालइ मनि राग रोस सवि टालइ... ११ धन धन...

चडइ क्षपकश्रेणि तुरंत, सवि कर्म्मह आणिउ अंत
ऊपनउ केवलनाण, जेणे जगि उगियुं भाण... १२ धन धन...

सुर सोवन पंकज सार, विरचइ हरखिइ अतिफार,
तिहां बइठा ज्ञानी दीपइ, तेजइ रवि मंडल जीपइ... १३ धन धन...

राय लोक सहित आवी वांदइ, मनमांही घणउ आणंदइ,
केवलधर दिइ उपदेश, सुणता सवि भाजइ क्लेश... १४ धन धन...

देशना सुणी पूछइ राय, भगवन् कहिउ करिय पसाय,
एह महिष अनइ तुम्ह सामि, वइर कारण कहउ सिवगामी... १५ धन धन...

ज्ञानी कहइ सांभलो भूप, पूरवभव तणउ स्वरूप,
हूं आसग्रीवराय हूंतउ, ए नास्तिक हरिमंसु महतउ... १६ धन धन...

अम्हे कुमत तणइ निखेवइ, सातमी पहुता छेवई,
तिहां झूझ करता रीसई, आउ पुरी सागर तेत्रीसइ... १७ धन धन...

अति द्वेष लगी अधिकेरउ, इणि बांधिउ कर्म्म अनेरउ,
संसारि फिरिउ बहुवार, पुणि किही न कीधी सार... १८ धन धन...

हिव करम-विवर जउ दीधउ, तउ काज अम्हारउ सीधउ,
ए महिष रुलिउ बहु काल, ते निसुणउ तुम्हि भूपाल... १९ धन धन...

इणि फरस्या नरक जि सात, तिरजंचपणइ सह्या घात
जउनि महिषि उदर ऊपनाउ, वार सात इहां विपन्नउ... २० धन धन...

इम चउगइभवमांहि रुलिउ, इणि भवि आवी मुझ मिलियउ,
मइ दूहविउ गाढउ एह, हिव पाम्यउ भवनउ छेह... २१ धन धन...

सांप्रत हुओ असुरकुमार, उणि पामी रिद्धि अपार,
क्रमि क्रमि लहिसिइ निरवाण, ते जोवउ पुणय प्रमाण... २२ धन धन...

अम्ह पूरवभव संबंध, जाणीनइ द्वेषनिबंध,
मनि म करउ दोस लगार, जिम पामउ भवदुह पार... २३ धन धन...

इम निसुणी केवलनाणी, प्रतिबुझ्या भविक जीवप्राणी,
महंतास्यउ संजम भार, राय लीधउ निरतीचार... २४ धन धन...

तिणि थानकी असुरकुमार, प्रासाद करइ अतिफार,
महिमा मांडइ मोटइ जंग, मृगध्वज तिणि मूरति रंग... २५ धन धन...

पगि खोडइ महिष महंत, थिर थापइ मूरतिवंत
श्रेष्ठि कामदेव कन्हइ आवइ, धन देइ चैत्य भलावई... २६ धन धन...

केवलधर करइ विहार, प्रतिबोधइ भविक अपार,
दिनकर जिम ज्ञान प्रकाशइ, मोहतिमिर दुरंतर नासइ... २७ धन धन...

आउ पुरी शुभ परिणामइ, पहुता सिवमंदिर ठामिइ
तिहां पाम्या सुख अनंत, ते सिद्ध नमउ भगवंत... २८ धन धन...

मृगध्वजमुनि तणउ चरित्र, सुणता हुइ जनम पवित्र,
श्री नमिनाथ वारइ एह, रिषिराय हुआ गुणगेह... २९ धन धन...

धन धन मृगध्वज मुनिराय, प्रह ऊठी प्रणमी पाय,
जसु नामइ नवइनिधान, पामीजइ सुख संतान... ३० धन धन...

खरतरगच्छि सुह गुरुराय, श्री पूर्णचन्द्र उवज्झाय,
तसु सीस सदा सुविचार, इम बोलइ पद्मकुमार... ३१ धन धन...

।। इति श्री मृगध्वजगीत संपूर्ण ।।

अर्थ- मृगध्वज मुनिराय निरतिचार चारित्रनुं पालन करता भव्य जीवोना उपकार काजे देश-विदेश विचरता हता. पांच समिति अने त्रण गुप्तिनुं पालन करता हता. मनना रोस दूर करी शुद्ध अध्यवसायमां वासित मन करी विचारे छे के "हुं राजा(पिता) पासे जईने सर्व राग-द्वेष दूर करी खमावुं. सर्व जीव साथे मैत्रीभाव केळवुं." एम शुभाशयथी मन पवित्र करीने नगरी तरफ प्रयाण करे छे.

नगरमां पहोंच्या पछी ते तरत मंत्रीने मळे छे के जेना उपकारथी आ संयममार्ग मळ्यो हतो. महापुरुषो उपकारीना उपकारने क्यारेय भूलता नथी. मंत्री पण कुमार मुनिने जोई खूब खूश थाय छे. चारित्रनो स्वीकार खरेखर भवबंधननी बेडीने तोडनार छे. खूब उल्लसित हृदये मुनिवरने वंदना करे छे. सुखशातानी पृच्छा करे छे. अने वारंवार नमन करे छे. हर्षथी मंत्री कुमारने लईने राजमंदिरे जाय छे. राजा पण मुनिवरने जोई विनयपूर्वक सिंहासनथी ऊभा थाय छे. सामे जाय छे. मुनिना दर्शनथी तेमनो मनमयूर नाची ऊठे छे. मुनिवरने बेसवा योग्य सिंहासन आपे छे. मुनिवर त्यां बेसी देशना आपे छे. सहु सभाजन भावपूर्वक सांभळे छे. राजाना हृदयमां वात्सल्यनी धारा ऊभराय छे परंतु पोताना पुत्रमुनिने ओळखता नथी.

मंत्री राजाने कुमारमुनिनी ओळख आपे छे. राजा पण तेमनुं मुखकमल वारंवार नीरखे छे अने पोताना कुमारने ओळखे छे, अने आनंदथी भेटी पडे छे. तेमना चरणे नमस्कार करे छे अने वारंवार पोताना अपराधनी क्षमा मांगे छे. क्षमावंत मुनिराय पण सहुने खमावे छे. महापुरुषो खरेखर बीजानी भूलने भूली जनारा होय छे. मंत्री पण राजाने कहे छे के "हे राजन् ! आपना कुमारे चारित्र लईने मानवजीवन सफल कर्यो छे. आपनुं कुल पवित्र कर्युं छे." राजा-राणी बंने पोताना पुत्रने मुनिवेषमां जोईने खुब आनंदित थाय छे. चारेगतिना भयथी पुत्रने वैराग्य थयो छे ते खरेखर उत्तम भाव छे आ पुण्यप्रभाव ज छे.

आ नगरना उद्यानमां विचारता-विचारता एक ज्ञानीभगवंत पधारे छे. सहु नगरजन राजा सहित त्यां वंदन करवा जाय छे. त्यां बेसी सहु सीमंधर गुरुनी देशना सांभळे छे. मृगध्वज मुनिवर पण त्यां आवी अनुमति पूर्वक विधि सहित त्यां चारित्र उच्चरे छे. छठ्ठ-छठ्ठ पारणे (आयंबिल) निरस आहार ले छे. ईर्यासमिति, भाषासमिति, एषणासमिति, आदानसमिति, पारिष्ठापनिकासमिति अने त्रणगुप्ति पूर्वक संयमनुं

पालन करे छे. मनना राग-दोष वगेरे टाळी बावीस दिवस निरतिचार चारित्रनुं पालन करे छे.

मृगध्वज मुनि क्षपकश्रेणी मांडी बावीस दिवसना अंते घातीकर्मनो क्षय करी निर्मल केवलज्ञाननी प्राप्ति करे छे. जाणे साक्षात् सुरज ऊग्यो होय तेवो प्रकाश थाय छे. सहु लोकालोकना भावने हस्तआम्लवत् जाणे छे. ते ज समये देवताओ आवी हर्षावेशथी सुवर्णकमळनी रचना करे छे. त्यां बेठा तेजस्वी एवा केवली शोभे छे. राजा अने मंत्री पण समाचार मळता आनंदथी त्यां आवे छे. सहु नगरजन पण उल्लसित हृदये त्यां आवे छे. ज्ञानी मृगध्वजमुनि देशना आपे छे. देशना सांभळी सौ पोत-पोताना शंसय भांजे छे. पोताना आत्माने धन्य-धन्य माने छे.

देशनाने अंते राजा विनयपूर्वक कहे छे के हे भगवन् शिवगामी, पसाय करी आप आपना अने महिषना वैरनुं कारण कहो. केवली भगवंत पण भविजनना उपकार माटे पोतानो पूरवभव कहे छे. "हुं पूर्वभवमां अश्वग्रीव राजा हतो. आ महिषनो जीव हरिमंसु नामनो मारो नास्तिक मंत्री हतो. कुमतना कारणे जिनधर्मथी विरुद्ध आचरणथी सातमी नरकमां गया. त्यां तेत्रीस सागरोपमनुं आयुष्य युध्ध करता पुरु थयुं. अतिद्वेषथी परस्पर वैर थयुं घणा अशुभ कर्मनुं ऊपार्जन कर्युं. कर्मना भारेपणाथी संसारचक्रमां घणा भव भटक्या. कालरूपी अरघट्ट फर्या करे छे. कर्मनुं जोर थोडुं ओछुं थाय छे. चारेय गतिमां जीव भटके छे. नरकगतिना सातेय भागमां घणीवार फरसी अने तिर्यंचगतिमां घणा भवमां घणा दुःखोने सहन करे छे. कर्म-विवर प्राप्त थता अमारो कांईक पुण्योदय जाग्यो.

महिषनो जीव तिर्यंचगतिमां महिष तरीके सात वार उत्पन्न थयो. अने दरेक भवमां तेनी हत्या थयेल छे. चारेगतिमां अनेक भव फरता-फरता आ भवमां आवीने मारी साथे तेनो भेटो थयो छे. पूर्वभवना वैरना संस्कारना कारणे मारा वडे तेने गाढ रीते दुःख अपायुं. परंतु कंइक सद्भाग्यना योगथी समाधिनी प्राप्ति थई, शुभध्यान ध्यावता ते महिष अणसण करी देवगतिने पाम्यो छे. ऋद्धिवंत असुरकुमार देव थयो छे. पुण्योदयना प्रभावथी ते अनुक्रमे कर्मनो क्षय करता-करता निर्वाणपदने पामशे."

पूर्वभवना द्वेष संबंधथी केवा कटुफळ भोगववा पडे छे तेवी ज्ञानीनी वाणीने सांभळीने घणा जीव बोध पाम्या. हवे सर्व वैर दूर थयुं छे. मननो रोस खतम थयो छे. अनुक्रमे ते जीव कर्मक्षय करी अक्षयसुखने प्राप्त करशे.

राजा-मंत्री ज्ञानीना मुखथी पूर्वभवनो संबंध अने संसारनुं स्वरूप सांभळीने बोध पाम्या. मानवजीवनने सफळ बनाववा चारित्र धर्मनी आराधना अंगीकार करी.

महिषना जीव असुरकुमारे ते स्थानने विषे एक सुंदर मंदिर बंधाव्युं. तेमां मृगध्वज मुनिरायनी मूर्ति मोटा महोत्सवपूर्वक पधरावी. केवली मृगध्वजनी मूर्तिनी पासे ज एक पगे खोडवाळा महिषनी मूर्ति पण स्थापन करी. भव्जीवोना बोध माटे आ एक श्रेष्ठ मंदिर कहेवायुं. असुरकुमारे ते चैत्य कामदेव श्रेष्ठीने धन आपीने सोपी दीधुं. श्रेष्ठि पण हृदयना भावथी तेनी संभाळ राखे छे.

सूर्य जेवा तेजस्वी, चंद्र जेवा निर्मळ अने सागर जेवा गंभीर केवली मृगध्वज मुनिराय भव्य जीवोना अज्ञानरूपी अंधकारने दूर करता-करता आ पृथ्वीतल पर विचरे छे. मोहरूपी चोरोने भगाडीने सर्व जीवोने सुखी करे छे. अनुक्रमे अघाती कर्मोनो भुक्को करीने शाश्वतसुखना धाम एवी सिद्धशिला पर बिराजमान थया. सिद्धिगतिने प्राप्त करी अक्षयसुख मेळवी केवळी भगवंत अनंतकाळ सुधी त्यां वास करशे. हुं अनंतसुखना स्वामी एवा सिद्धोने वंदन करुं छुं.

श्री नमिनाथ प्रभुना समयमां थयेल मृगध्वज केवलीनुं चरित्र सांभळतां जन्म पवित्र थाय छे. गुणसागर केवलीना चरित्रने भणता-गणता सुख-संपत्तिनी मंगलमाळा प्राप्त थाय छे. जेनुं नामस्मरण पण सर्व दुःखने दूर करनार छे, आत्माने निर्मळ करे छे, सिद्धिगतिने अपावनार छे. नवनिधान ने प्राप्त करावनार छे एवा मृगध्वज केवली धन्य छे.

खरतरगच्छमां शोभता गुरू पूर्णचन्द्र उवज्झाय छे. तेमना शिष्य परमविनेय पद्मकुमारे आ मृगध्वजकेवलीचरित्र रास रूपे रच्युं छे. आवा महापुरूषोना गुणो हैयामां धारण करवाथी सर्व दोषो-दुर्गुणो दुःखो दूर थाय छे अने अनुक्रमे समता-समाधि-सिद्धिगतिनी प्राप्ति थाय छे.

।। श्री मृगध्वजगीत संपूर्ण ।।

ढाळने विस्तार करता मारा वडे कांईपण जिनाज्ञाविरुद्ध के कविना आशयविरुद्ध लखायु होय तो त्रिविधे त्रिविधे मिच्छा मि दुक्कडं.

मुद्रित ग्रन्थाः

प्राचीन पांडुलीपि पर से संशोधन-संपादन करके गत वर्ष में प्रकाशित सभी ग्रंथो का विवरण इस विभाग में दिया गया है।

प्राचीन श्रुतोद्धारक पू. आ. श्रीमद् विजयहेमचंद्रसूरीश्वरजी म.सा.की प्रेरणा से श्री जिनशासन आराधना ट्रस्ट द्वारा सेंकडो वर्ष टकाउ कागज पर प्रकाशित किये गये ग्रन्थरत्न

क्रम	ग्रंथ नाम	क्रम	ग्रंथ नाम
०१	अनेकान्तजयपताका भाग १ थी ५	१७	पिंडनिर्युक्ति (हारिभद्रीय टीका, वीरगणी)
०२	अनेकान्तवादप्रवेश	१८	बृहत्संग्रहणी
०३	उत्पादादिसिद्धि	१९	बृहत्क्षेत्रसमास
०४	उपमितिसारसमुच्चय	२०	मरणविभक्तिप्रकीर्णक-१
०५	कर्मग्रंथ (५, ६)	२१	महाप्रत्याख्यानप्रकीर्णक
०६	चतुःशरणप्रकीर्णक	२२	मुनिसुव्रतस्वामीचरित्र
०७	चंद्रप्रज्ञप्ति भाग १-२	२३	यतिदिनचर्या
०८	चंद्रप्रभचरित्र	२४	योगबिंदुश्लोकवार्तिक
०९	चंद्रावेध्यकप्रकीर्णक	२५	श्राद्धप्रतिक्रमणसूत्र
१०	तन्दुलवैचारिकप्रकीर्णक	२६	संवेगरंगशाला भाग-१ अने २
११	धर्मविधिप्रकरण	२७	सप्तभंगीनयप्रदीप
१२	धन्यचरित्र	२८	समाचारी
१३	न्यायावतार	२९	सिरिवालकहा
१४	पंचसूत्र	३०	स्थानांगदीपिका भाग-१-२ (नगर्षिगणि)
१५	पांडवमहाकाव्य भाग-१ अने २	३१	स्याद्वादभाषा
१६	पाक्षिकसूत्र		

प्राचीन श्रुतोद्धारक पू. आ. श्रीमद् विजयहेमचंद्रसूरीश्वरजी म.सा.की प्रेरणा से श्री जिनशासन आराधना ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित किये गये भिन्न भिन्न विषयो के नवनिर्मित १७ ग्रंथ

क्रम	ग्रंथ नाम	क्रम	ग्रंथ नाम
०१	आशातनोपनिषद्	१०	महोपनिषद्
०२	उपनिषद्-सर्वस्वम्	११	मोक्षोपनिषद्
०३	ज्ञानसार-उपहार	१२	योगबिंदुश्लोकवार्तिक
०४	चंद्रावेध्यकप्रकीर्णक-टीका	१३	योगोपनिषद्
०५	तरंगलोलासमास	१४	विचारबिंदु
०६	सद्दानोपनिषद्	१५	विमुक्त्युपनिषद्
०७	प्रवचनप्रसूपनिषद्	१६	श्रुतमहापूजा
०८	मरणविभक्तिप्रकीर्णक टीका-१	१७	समाधिसुधा
०९	महाप्रत्याख्यानप्रकीर्णक टीका		

- **भवभावना भाग-१ अने २**

  गुजरात के राजा सिद्धराज जयसिंह के समय में मलधारी आ. श्री हेमचन्द्रसूरि ने सटीक भवभावना ग्रन्थ की रचना की है। इसमें सविस्तर नेमिनाथ चरित्र व १२ भावनाओं का वैराग्यपूर्ण वर्णन है। इसकी सर्वप्रथम संस्कृत छाया आ. मुक्ति/मुनिचन्द्रसूरि शिष्य मुनि श्री मुक्तिश्रमणविजयजी ने की है। आचार्य भगवन्त ने संशोधन-परिमार्जन किया है।

  प्रकाशक - शांति जिन आराधक मंडळ (मनफरा, गुजरात)

- **द्व्याश्रयमहाकाव्यम् भाग-१,२,३ (दो भाग संस्कृत,तीसरा भाग प्राकृत व्याकरण के लीये)**

  कलिकालसर्वज्ञ श्री हेमचन्द्रसूरिजी ने अपने सिद्धहेम व्याकरण का प्रयोग दिखाने के लिए इस महाकाव्य की रचना की है। जिस प्रकार भट्टि ने पाणिनि व्याकरण के लिए की है। इस महाकाव्य में मूलराज से लेकर कुमारपाल तक के गुजरात को चौलुक्य राजाओं के वर्णन के साथ व्याकरण के प्रयोग भी अद्भुत ढंग से दिये गये है। एक से बीस सर्ग तक संस्कृत द्व्याश्रय है और २१ से २८ तक प्राकृत व्याकरण के प्रयोग दिये गये है। संस्कृत व्याकरण की टीका अभयतिलक गणि ने एवं प्राकृत व्याकरण की टीका पूर्णकलश गणि ने की है। आ. मुक्ति/मुनिचन्द्रसूरि कृत गुजराती अनुवाद भी ग्रन्थ के पीछे दिया गया है। प्राकृत द्व्याश्रय में अनुवाद के साथ संस्कृत-अन्वय भी दिया है।

  प्रकाशक - शांति जिन आराधक मंडळ (मनफरा, गुजरात)

  प्राप्तिस्थान - लालभाई दलपतभाई संस्कृति विद्यामंदिर (अहमदाबाद, गुजरात)

पू. योगतिलकसूरिजी म.सा. द्वारा संपादित काव्यसाहित्यमाळा अंतर्गत वीरशासनम् द्वारा प्रकाशित ग्रंथ

क्रम	भाग	काव्य नाम	कर्ता	रचनाकाळ
०१	१	चतुर्विंशतिजिनेन्द्रचरितानि	पू. अमरचंद्रसूरिजी	१२९५
०२	२	पद्मानन्दमहाकाव्यम्	पू. अमरचंद्रसूरिजी	१२९५
०३	३	चन्द्रप्रभचरितम्	पू. देवेन्द्रसूरिजी	१२६४
०४	२	श्रेयांशनाथचरितम्	पू. मानतुंगसूरिजी	१३३२
०५	३	वासुपूज्यचरितम्	पू. वर्धमानसूरिजी	१२१९
०६	३	विमलनाथचरितम्	पू. ज्ञानसागरसूरिजी	१५१७
०७	४	शान्तिनाथचरितम्	पू. मुनिभद्रसूरिजी	१४१०
०८	४	शान्तिनाथचरितम्	पू. वत्सराजगणि	१६१२
०९	४	शान्तिनाथचरितम्	पू. मेघविजयजी	१८१२
१०	५	शान्तिनाथचरितम्	पू. माणिक्यचंद्रसूरिजी	१२४६
११	५	शान्तिनाथचरितम्	पू. अजितप्रभसूरिजी	१३०७
१२	६	मल्लिनाथचरितम्	पू. विनयचंद्रसूरिजी	१२८६
१३	६	मुनिसुव्रतस्वामिचरितम्	पू. विनयचंद्रसूरिजी	१३१८
१४	७	नेमिनाथचरितम्	पू. कीर्तिराजोपाध्यायजी	१३२८
१५	७	पार्श्वनाथचरितम्	पू. भावदेवसूरिजी	१४१२
१६	७	पार्श्वनाथचरितम्	पू. पद्मसुंदर गणिजी	१६१५
१७	७	पार्श्वनाथचरितम्	पू. हेमविजयज गणिजी	१६३२
१८	८	अममस्वामिचरितम्	पू. मुनिरत्नसूरिजी	१२४२
१९	९	भरतबाहुबलिमहाकाव्यम्	पू. पुण्यकुशल गणिजी	१६ मी
२०	९	पुण्डरीकचरित्रम्	पू. कमलप्रभसूरिजी	१३७२
२१	९	आर्षभीयचरित्रम्	पू. यशोविजयजी उपा.	१८१२
२२	१०	जयानन्दकेवलिचरित्रम्	पू. मुनिसुंदरसूरिजी	१४१४
२३	१०	पृथ्वीचन्द्रचरित्रम्	पू. वत्सराज गणिजी	१४३४
२४	१०	पृथ्वीचन्द्रचरित्रम्	पू. लब्धिसागरसूरिजी	१५५८
२५	११	नलायनम्	पू. माणिक्यसूरिजी	१४१२
२६	११	समरादित्यसंक्षेप	पू. प्रद्युम्नसूरिजी	१३२४
२७	११	यशोधरचरित्रम्	पू. माणिक्यसूरिजी	१४१२

पू. योगतिलकसूरिजी म.सा. द्वारा संपादित वीरशासनम् द्वारा प्रकाशित उपदेशसाहित्यमाळा के ग्रंथ

क्रम	ग्रंथनुं नाम	टीकाकार	कर्ता / पूर्व संपादक
०१	नवपदप्रकरणम्-लघु नवपदप्रकरणम्-बृहद्	पू. देवगुप्तसूरिजी पू. यशोदेव उपा.	पू. आनंदसागरसूरिजी पू. आनंदसागरसूरिजी
०२	श्राद्धप्रतिक्रमण सूत्रम् (चार टीका)	पू. रत्नशेखरसूरिजी पू. पार्श्वरत्नसूरिजी पू. श्रीचंद्रसूरिजी पू. तिलकाचार्यजी	पू. आनंदसागरसूरिजी पू. मुनि हर्षविजयजी पू. मुनि हर्षविजयजी पू. मुनि हर्षविजयजी
०३	ऋषिमंडल प्रकरणम् (टीका अवचूरि साथे)	पू. धर्मघोषसूरिजी टी. पद्ममन्दिर गणि	पू. मानविजयजी टी. उमंगसूरिजी
०४	सम्यक्त्वसप्तति सटीक	पू. सोमतिलकसूरिजी	पू. मुनि ललितविजयजी
०५	विवेकमंजरी	पू. बालचंद्राचार्य	पं. हरगोविंददास
०६	श्राद्धदिनकृत्यम् (टीका अवचूरि साथ)	पू. देवेन्द्रसूरिजी	पू. आनंदसागरसूरिजी
०७	दानादिकुलकम् सटीक	पू. देवविजयजी	पं. हिरालाल हंसराज
०८	धर्मोपदेशकर्णिका	अज्ञात	पं. हिरालाल हंसराज
०९	उपदेशचिंतामणी सटीक	पू. जयशेखरसूरिजी	पं. हिरालाल हंसराज
१०	उपदेशमाला-पुष्पमाळा सटीक	पू. हेमचंद्रसूरिजी	पू. आनंदसागरसूरिजी
११	उपदेशप्रासाद सटीक	पू. लक्ष्मीसूरिजी	पू. वल्लभविजयजी

प्रकाशक एवं प्राप्तिस्थान

वीरशासनम्

रविन्द्र शाह

२०३, निलय चेम्बर्स, दालिया शेरी,

महीधरपुरा, सुरत-३. फोन – ९८२५१२३३५२

भरतभाई फोजालाल संघवी

५०८, सील्वर ओक बील्डींग, महालक्ष्मी क्रोस रोड,

पालडी, अहमदाबाद-०७. फोन-९८९८०२५१८९

- **पू. अध्यात्मयोगी आ. श्री कलापूर्णसूरीश्वरजी म. सा. के शिष्य आ. श्री तीर्थभद्रसूरिजी के द्वारा अद्यावधि अप्रकाशित स्तोत्र रास व संस्कृत चरित्र ग्रंथो को प्राचीन हस्तप्रत पर से संशोधित करके संपादित कर प्रकाशित किये गये है ।**

प्रकाशक - श्री कनकसूरि प्राचीन ग्रंथमाला (श्री श्रमण सेवा रीलीजीयस ट्रस्ट)

संपादन - आ. तीर्थभद्रसूरिजी म.

- **अगडदत्त रासमाला -** भिन्न भिन्न कर्ताओं के द्वारा निर्मित ग्यारह रास व चोपाई व कथा, हस्तप्रतों पर से संशोधित करके प्रकाशित हुई ।
- **मंगलकलश रासमाला** - भिन्न भिन्न कर्ताओं के द्वारा निर्मित ग्यारह रास व चोपाई को हस्तप्रत पर से संशोधित करके प्रकाशित किया गया है ।
- **मदन-धनदेवचरित्र - मदन धनदेव रास - कर्ता - श्री पद्मविजयजी**
  मदन-धनदेवकथा - कर्ता - श्री मुनिसुन्दरसूरिजी
- **श्री नेमिनाथस्तोत्रसंग्रह - संपादन -** आ. श्री तीर्थभद्रसूरिजी म.सा.
  अब तक के अप्रकाशित पचास स्तोत्र के साथ में नेमनाथ भगवान के चउपन साथ में दुसरे परमात्मा के स्तोत्र का संग्रह एक साथ प्रकाशित हुआ है।
- **मंगलकलशचरित्रसंग्रह- संपादन -** आ. तीर्थभद्रसूरिजी म.सा.
  भिन्न-भिन्न विद्वानों के द्वारा रचित ग्यारह अप्रगट चरित्र कथाओंका संग्रह ।

१) मंगलकलशकहा श्री देवचंद्रसूरिजी
२) मंगलकलशकथानक श्री माणिक्यचंद्रसूरिजी
३) मंगलकलशकथानक श्री विनयचन्द्रसूरिजी
४) मंगलकलशकथानक श्री अजितप्रभसूरिजी
५) मंगलकलशकथानक श्री मुनिदेवसूरिजी
६) मंगलकलशकथानक श्री भानुचन्द्रसूरिजी
७) मंगलकलशकथानक श्री राजवल्लभजी उपाध्याय
८) मंगलकलशकथानक श्री भावचन्द्रसूरिजी
९) मंगलकलशकथानक श्री लक्ष्मीसूरिजी
१०) मंगलकलशकथानक अज्ञातकृत
११) मंगलकलशकथानक श्री हंसचन्द्रशिष्य

- **श्री रायपसेणियसुत्तं-**भिन्न हस्तप्रतों परसे पाठभेद के साथ में संशोधित करके प्रकाशित ।
  कर्ता - स्थविरभगवंत
  टीकाकार - आचार्य प्रवर श्री मलयगिरिसूरिजी वृत्ति
  संपादन - पू. आ. श्री मुनिचन्द्रसूरिजी
  प्रकाशक - श्री महावीर विद्यालय, मुंबई.
  प्राप्तिस्थान - आ. ॐकारसूरिजी ज्ञानमंदिर, सुभाष चौक, गोपीपुरा, सुरत.
- **श्री चंद्रप्रज्ञप्तिसुत्तम्-** भिन्न हस्तप्रतों परसे पाठभेद के साथ में संशोधित करके प्रकाशित ।
  कर्ता - पू. सुधर्मास्वामी
  टीकाकार - पू. मलयगिरिजी
  संपादन-प्राचीनश्रुतोद्धारक पू. आ. श्रीमद्विजयहेमचन्द्रसूरिजी के शिष्य रत्नबोधिविजयजी
  प्रकाशक - श्री महावीर विद्यालय, मुंबई.
  प्राप्तिस्थान - श्री जिनशासन आराधना ट्रस्ट, ६-ए, बद्रीकेश्वर सोसायटी,
  मरीन ड्राइव, ई-रोड, मुंबई.
- **आख्यानकमणिकोश भाग-१ थी ४**
  उपदेश कथाओंका यह मूल प्राकृत ग्रंथ के उपर संस्कृत वृत्ति की रचना हुई है और यह ग्रंथ पुण्यविजयजी म.सा. ने पहले संपादित किया था । अब पुरे ग्रंथ को संस्कृत छाया के साथ पुनः संपादित करके प्रकाशित किया है ।
  कर्ता - आ. नेमिचन्द्रसूरिजी
  टीकाकार - श्रीमद् आम्रदैवसूरि वृत्ति
  संपादन - श्री पार्श्वचंद्रसागरजी म.सा.
  प्रकाशक - आ. ॐकारसूरिजी ज्ञानमंदिर
  प्राप्तिस्थान - आ. ॐकारसूरिजी ज्ञानमंदिर, सुभाष चौक, गोपीपुरा, सुरत.
- **पंचाशकप्रकरण**
  अद्यावधि अप्रगट टीका को मूलग्रंथ व संस्कृत टीका के साथ प्रकाशित किया है ।
  कर्ता- आ. हरिभद्रसूरिजी म.सा.
  टीकाकार- आ. यशोभद्रसूरिजी म.सा.
  संपादन- आ. बोधिरत्नसूरिजी के शिष्य श्री धर्मरत्नविजयजी म.सा.,
  प्रकाशक- मानव कल्याण संस्थान
  प्राप्तिस्थान- विजयभाई सी. शाह- कांदीवली (वेस्ट) मुंबई. फोन-९८२१२८७०६८

- **श्री दशवैकालिक सूत्रम्**

  एक ही पुस्तक में तीन टीका एक साथ में दी हुई है ।

  कर्ता- श्रुतकेवली श्री शय्यम्भवसूरिजी

  टीकाकार- आ. तिलकाचार्यजी, आ. सुमतिसाधुसूरिजी, आ. समयसुंदरगणि

  संपादन- श्री तत्त्वप्रभविजयजी म.सा.

  प्रकाशक- श्री जिनप्रभसूरि ग्रंथमाळा

  प्राप्तिस्थान- रसिकभाई एम. शाह -८, धवलगिरि फ्लेट, खानपुर बाई सेन्टर, अमदावाद.
- **पिंडनिर्युक्ति-** अद्याविध अप्रगट श्री वीरगणि की वृत्ति की हस्तप्रत परसे संशोधित करके संस्कृत में संपादित ।

  कर्ता- श्री भद्रबाहुस्वामीजी

  टीकाकार- श्री वीरगणिकृत विवृत्ति

  संपादन- पू. आ. श्री जयसुंदरसूरिजी के शिष्य

  प्रकाशक- दिव्यदर्शन ट्रस्ट- ३९, कलिकुंड सोसायटी, धोळका, जी.-अमदावाद.
- **महावीरचरियम्-**भगवान महावीरस्वामी के २७ भवों का और अंतिम २७ वे भव की ऐतिहासिक प्रसंग, उस समयकी राजकीय, धार्मिक परिस्थिति का काव्यात्मक ढंग से रोचक वर्णन प्राकृत भाषा में संस्कृत छाया व गुजराती भाषांतर से पांच भाग में प्रकाशित

  कर्ता- श्री गुणचन्द्र गणी

  संस्कृत छायाकार- मुनि निर्मलयशविजयजी

  प्रकाशक- दिव्यदर्शन ट्रस्ट

  प्राप्तिस्थान- शिरिषभाई संघवी ७०२, राधाकृष्ण, रामचंद्र लेन, मलाड (वेस्ट), मुंबई.
- **स्तोत्रग्रंथसमुच्चय-**२० शताब्दि में पू. नेमीसूरिजी एवं विद्वान मुनिवर्यों द्वारा बनाये हुए स्तोत्रों को संकलन करके पुनः प्रकाशित किया है ।

  स्तुतिकल्पलता- प्रवर्तक श्री यशोविजयजी

  नूतनस्तोत्रसंग्रह- पं. श्री प्रतापविजयजी

  स्तोत्रभानुः- श्री विजयनन्दनसूरिजी

  स्तोत्रचिन्तामणिः- श्री विजयपद्मसूरिजी

  प्राकृतस्तोत्रप्रकाश-

  संकलन-संपादन- पू. आ. शीलचन्द्रसूरिजी के शिष्य श्री त्रैलोकमन्डनविजयजी म.सा.

  प्रकाशक- जैन ग्रन्थ प्रकाशन समिति

  प्राप्तिस्थान- नेमिसूरिजी स्वाध्याय मंदिर, १२ भगतबाग सोसायटी, पालडी, अमदावाद.

- **श्री सङ्घपट्टक**

  पूर्वकाल में जैन शासन में प्रचलित चैत्यवासी परंपरा के खंडन करके निर्ग्रंथ परंपरा को सुदृढ़ करनेवाला उत्तम ग्रंथ और उसकी बृहद्वृत्ति, लघुवृत्ति व अवचूरी संस्कृत में प्रकाशित की गई है।

  कर्ता- आ. जिनवल्लभसूरिजी

  बृहद्वृत्ति- आ. जिनपतिसूरिकृत

  अवचूरि- साधुकीर्तिगणि

  टीका- लक्ष्मीसेनरचित

  लघुवृत्ति- हर्षराज उपाध्याय

  संपादक- पं. प्रवर श्री पुण्यकीर्तिविजयजी म.सा. के शिष्य श्री संयमकीर्तिविजयजी म.सा.

  प्रकाशक- श्री सम्यग्ज्ञान प्रचारक समिति

  प्राप्तिस्थान- बीजल गांधी- ४०१, ओसन्स, नेस्ट होटल सामने, सी.जी.रोड, अमदावाद.

- **श्री चक्षुरप्राप्यकारितावाद**

  पू. उपाध्यायजी म.सा. की अलभ्य और अप्रगट हस्तप्रत परसे स्वोपज्ञ टीका को संशोधित

  कर्ता- उपा. श्री यशोविजयजी म.सा. स्वोपज्ञ टीका

  संपादक- पू. गच्छाधिपति आ. श्री पुण्यपालसूरिजी

  प्रकाशक- पार्श्व अभ्युदय प्रकाशन

  प्राप्तिस्थान- रमेशभाई एन. जैन- बी-३१-३३, घनश्याम एवन्यु, इन्कमटेक्ष, अमदावाद.

- **ललितविस्तरा भाग-१, २, ३**

  सटीक-गुजराती अनुवाद के साथ शब्दशः विवेचन

  कर्ता- सूरिपुरंदर आ. श्री हरिभद्रसूरिजी

  टीकाकार- आ. श्री मुनिचन्द्रसूरिजी विरचित पंजिका

  विवेचक- पंडितवर्य श्री प्रवीणचंद्र खीमजी मोता

  प्रकाशक- गीतार्थगंगा

  प्राप्तिस्थान- ७, जैन मर्चन्ट सोसायटी, पालडी अमदावाद.

- **श्रीचन्द्र केवली रास (सचित्र)**

  कर्ता- श्री ज्ञानविमलसूरिजी

  अनुवादक- पंडितवर्य श्री कपुरचंद रणछोडभाई वारैया

  प्रकाशक- भद्रंकर प्रकाशन

  प्राप्तिस्थान- फकीरचंद एम. शाह ४९-१, महालक्ष्मी सोसायटी, शाहीबाग, अमदावाद.

- **सिद्धांतरहस्यबिंदु-ओघनिर्युक्तिग्रन्थरहस्यप्रकरण**

  ओघनिर्युक्ति की द्रोणाचार्य वृत्ति पर संस्कृत में विवेचन।

  संपादन- मुनि श्री गुणहंसविजयजी

  प्रकाशक- कमल प्रकाशन ट्रस्ट

  प्राप्तिस्थान- ६-ए, चंदनबाला कोम्प्लेक्ष, भट्ठा, पालडी, अहमदाबाद.

- **उपदेशमाला (कर्णिकावृत्ति)**

  कर्ता- धर्मदासगणि क्षमा श्रमण

  टीकाकार- आ. उदयप्रभसूरिजी म.सा.

  संपादन- श्रीमद् विजय कीर्तियशसूरिजी म.सा.

  प्रकाशक- सन्मार्ग प्रकाशन

  प्राप्तिस्थान- जैन आराधना भवन, पाछियानी पोल, रिलीफ रोड, अमदावाद.

- **प्रतिमाशतक**

  संस्कृत मूल ग्रंथ की स्वोपज्ञ वृत्ति के साथ में गुर्जर भावानुवाद भी प्रकाशित।

  कर्ता-टीकाकार- महोपाध्याय श्रीमद् यशोविजयजी

  संपादन- आ. श्री अजितशेखरसूरिजी म.सा.

  प्रकाशक- अर्हम् आराधक ट्रस्ट, ए-५, हरिभवन, मुलुंड (वेस्ट), मुंबई

  प्राप्तिस्थान- शंखेश्वर पार्श्वनाथ तीर्थधाम, घोडबंदर रोड, थाना (वेस्ट) मुंबई.

- **उपशमनाकरण-२**

  क्षपकश्रेणी अर्थाधिकार और पश्चिम स्कंध अर्थाधिकार विस्तृत गुजराती विवेचन सहित

  कर्ता- कर्मसाहित्य निष्णात विजयप्रेमसूरीश्वरजी म.सा.

  पदार्थ संग्राहक- आ. जयघोषसूरीश्वरजी म.सा.

  विवेचनकार- आ. श्रीमद् विजय हेमचंद्रसूरिजी म.सा.

  प्रकाशक- श्री जिनशासन आराधना ट्रस्ट

  प्राप्तिस्थान- ६, बद्रीकेश्वर सोसायटी, मरीन ड्राइव ई-रोड, मुंबई.

- **सिध्धहेम शब्दानुशासनम् अज्ञात कर्तृक ढुंढीका भाग-६**

  कर्ता- कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचंद्राचार्य

  संपादन- आ. शीलचन्द्रसूरिजी के शिष्य श्री विमलकर्तिविजयजी म.सा.

  प्रकाशक- आ. हेमचंद्रसूरिजी नवम जन्मशताब्दि ट्रस्ट

- **सिध्धहेमशब्दानुशासनम् बृहन्न्यास भाग १ और २**

  कर्ता- कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचंद्राचार्य

  टीकाकार- पंडितवर्यश्री जगदीशभाई

  प्रकाशक-प्राप्तिस्थान- पं. जगदीशभाई, पोलीस चोकी के पास, गोपीपुरा, सुरत.

- **हैमसाधितधातु सार्थ अंगावली**

  उपयोगीधातु, अर्थ, अनुक्रमणिका के साथ में

  संपादिका- आ. नीतिसूरिजी समुदाय के साध्वीजी श्री अमीरत्नाश्रीजी म.सा.

  प्रकाशक- आ. विजय नीतिसूरिजी जैन तत्त्वज्ञान पाठशाला

  प्राप्तिस्थान- सागर जैन उपाश्रय के बाजु में, पाटण (उ.गु.)

- **सिद्धार्थ**

  जर्मन भाषा के विद्वान हरमनहेस के जर्मन उपन्यास का संस्कृत रुपांतरण किया है।

  कर्ता- जर्मनभाषा के विद्वान हरमनहेस

  संस्कृत कर्ता- मुनि कल्याणकीर्तिविजयजी

  प्रकाशक- श्री भद्रंकरोदय शिक्षण ट्रस्ट-गोधरा

  प्राप्तिस्थान- विजयनेमीसूरिजी स्वाध्याय मंदिर- १२, भगतबाग सो., पालडी, अमदाबाद

- **सड्ढजीयकप्पो (श्राद्धजीतकल्प)**

  प्राकृत छेद ग्रंथ के उपर संस्कृत टीका के साथ प्रकाशित हुआ है।

  कर्ता-टीकाकार- आ. श्री धर्मघोषविजयजी म.सा.

  संपादन- पं. श्री नयभद्रविजयजी म.सा.

  प्रकाशक- परमधर्म-अहमदाबाद.

  प्राप्तिस्थान- परेश जे. शाह- ए-२, घनश्याम फ्लेट, भट्ठा, पालडी, अहमदाबाद.

- **जइजीयकप्पो (यतिजितकल्प)**

  प्राकृत छेदग्रंथ संस्कृत वृत्ति के साथ प्रकाशित हुआ है।

  कर्ता- जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण म.सा.

  टीकाकार- सिद्धसेनसूरिजी-चन्द्रसूरिजी म.सा.

  संपादन- पं. श्री नयभद्रविजयजी म.सा.

  प्रकाशक- परमधर्म-अहमदाबाद.

  प्राप्तिस्थान- परेश जे. शाह- ए-२, घनश्याम फ्लेट, भट्ठा, पालडी, अहमदाबाद.

श्रुत सेवा कार्य की झलक

*** अहो ! श्रुतज्ञानम् प्राचीन श्रुत संरक्षण ***

शास्त्रसंग्रहों में सुरक्षित जैन धर्म की सभी पांडुलिपीओं को
डिजिटाइझेशन के द्वारा सुरक्षित व संशोधन के लिए
झेरोक्ष नकल उपलब्ध करवाने का कार्य
ज्ञानद्रव्य की सहाय से चालू है ।

*** अहो ! श्रुतज्ञानम् ई-लायब्रेरी ***

पूर्व में मुद्रित प्रायः अप्राप्य पुस्तकें, नूतन स्वाध्याय व अभ्यास उपयोगी
पुस्तकें, केटलॉग, मासिक पत्रिका की 13 डीवीडी स्वद्रव्य से प्रकाशन,
और ई-मेइल के द्वारा माहिती का आदान-प्रदान

*** वेबसाईट - www.ahoshrut.org ***

स्वद्रव्य से निर्मित आवश्यक पुस्तकें, जैन धर्म व तीर्थस्थानों की माहिती,
अनुष्ठान और खबरें भी ऑनलाइन उपलब्ध है ।

*** प्राचीन ग्रंथ प्रकटीकरणम् ***

प्राचीन लिपि का ज्ञान पूज्य साध्वीजी भगवंतों को दिलवाकर प्राचीन
हस्तप्रतों का लिप्यंतरण करवाकर अप्रगट प्राचीन कृति-रचना को
प्रकाशित करने का कार्य

*** अहो ! श्रुतम् स्मार्ट लर्न ***

प्रोजेक्टर के माध्यम से अहो ! श्रुतम् स्मार्टलर्न
ज्ञानवर्धक अभ्यासक्रम...
तीन महिने का कोर्स तैयार किया है
और रुचिवंत संस्थाओं को यह अभ्यासक्रम चलाने के लिए
संपर्क करने पर भेट स्वरूप दिया जाता है।

* सौजन्य *

कच्छ-वागड समुदाय के **प. पू. अध्यात्मयोगी आ. श्री कलापूर्णसूरिजी**

के शिष्य गच्छाधिपति **आ. श्री कलाप्रभसूरिजी म. सा.** के आज्ञावर्तिनी

पूज्य साध्वीजी श्री नंदाश्रीजी म. सा. की प्रेरणा से

श्री गंगाबा पौषधशाला, हीरा जैन सोसायटी,

साबरमती, अहमदाबाद के श्राविका उपाश्रय की

ज्ञानद्रव्यकी उपज।

॥ नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ॥

॥ दुनिया में ज्ञान के समान
पवित्र
ओर कुछ भी नहीं है।॥